'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में रेणु की राजनीतिक दृष्टि का तुलनात्मक–अध्ययन

एम.फिल. उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध–प्रबन्ध

डॉ. ओमप्रकाश सिंह
शोध–निर्देशक

विश्वनाथ
शोधार्थी

भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली–110067

2006–07

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
CENTRE OF INDIAN LANGUAGES
SCHOOL OF LANGUAGE, LITERATURE & CULTURE STUDIES
NEW DELHI-110 067, INDIA

Dated 05/01/2007

DECLARATION

I declare that the work done in this dissertation entitle "MAILA ANCHAL AUR PARTI PARIKATHA MEIN RENU KI RAJNEETIEK DRISTI KA TULANATMAK ADHYAYAN" by me is an original work and has not been previously submitted for any other degree in this or any other University/ Institution.

Vishwanath
VISHWANATH
(Research Scholar)

DR. OMPRAKSH SINGH
(SUPERVISOR)
CIL/SLL&CS/JNU

M. S. Husain
PROF. MOHD. SHAHID HUSAIN
(CHAIRPERSON)
CIL/SLL&CS/JNU

समर्पित :

माताजी एवं पिताजी को .....

जिनके लिए 'मेरा होना' सबसे ज्यादा जरूरी है

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

भूमिका — I - V

पहला अध्याय — 1 – 21

रेणु के कथा साहित्य में राजनीति

(I) रेणु और उनकी कथा–यात्रा

(II) रेणु की राजनीतिक समझ

(III) रेणु और राजनीति

दूसरा अध्याय — 22 – 44

'मैला आँचल' में राजनीतिक दृष्टि

(I) स्वतंत्रता पूर्व भारतीय राजनीति

(II) स्वातंत्र्योत्तर भारत में राजनीति का बदलता हुआ स्वरूप

(III) धर्म तथा राजनीति का अन्तःसंबंध

(IV) भारतीय गाँवों के सत्ता–समीकरणों में बदलाव

तीसरा अध्याय — 45 – 73

परती परिकथा में राजनीतिक दृष्टि

(I) भूमि की राजनीति

(II) दलीय राजनीति

(III) जातिवाद की राजनीति

(IV) सरकारी योजनाओं में राजनीति

चौथा अध्याय — 74 – 116

'मैला आँचल' और 'परती परिकथा की राजनीतिक दृष्टि' का तुलनात्मक अध्ययन

(I) भूमि सुधार आन्दोलन

(II) राजनीति में जातिवाद

(III) कांग्रेस के अन्तर्विरोध

(IV) कम्युनिस्ट और समाजवादी आन्दोलन में बदलाव

(V) सरकारी योजनाओं का कार्यक्रम और आमजन

उपसंहार — 117 – 120

संदर्भ–ग्रंथ–सूची — 121 – 124

भूमिका

रेणु का कथा साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। अपने समय में होनेवाले परिवर्तनों को उन्होंने बहुत यथार्थपूर्ण ढंग से अपने साहित्य में वर्णित किया है। भारत में आजादी मिलने के बाद लगभग हर दिशा में परिवर्तन आया। भारत के नवनिर्माण की बात की गई। आजादी के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में परिवर्तन की लहर नज़र आने लगी थी। गाँव में लगभग हर राजनीतिक दल का प्रवेश हो चुका था। इससे ग्रामीणों के मन में चेतना का एक नया प्रचार प्रसार शुरू हुआ।

राजनीति का मतलब देश और समाज के बारे में नीति बनाकर काम करने और विकास में व्यापक सहयोग करने से है। राजनीति का अर्थ हमेशा एक–सा नहीं रहा है बल्कि समय–समय पर बदलता रहा है। किसी समय में राजनीति एक ऐसा तत्व था, जिसके माध्यम से एक सम्यक् समाज और देश का निर्माण किया जा सकता था, लेकिन आज राजनीति मे अनेक विकृतियां आ गई हैं। प्राचीन समय से लेकर आज तक किसी न किसी रूप में राजनीति का महत्वपूर्ण स्थान बना रहा है। यह कभी भयंकर रूप धारण कर मानव के विनाश का कारण बनी, तो कभी मानव के विकास में सहायक बनी। आज विश्व जब भूमण्डलीकरण के दौर से गुजर रहा है, तो राजनीति का महत्व और भी बढ़ गया है। इस समय हर छोटी–छोटी वस्तु पर राजनीति की जा रही है। राजनीति एक प्रकार से लोगों के वर्चस्व का परिचायक है। रेणु ने अपने समय के राजनीति को बहुत अच्छी तरह से जाँचा और परखा था। वे राजनीति में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेकर उसके हर बिन्दु के यथार्थ को अनुभव किया था। उन्होंने देखा था कि राजनीति में लोग किस तरह से घटिया से घटिया कार्य करने में संकोच नहीं करते हैं।

समय और समाज के बदलाव के साथ राजनीति का प्रयोग भी परिवर्तित होता रहा है। इसका प्रयोग कभी लोग अपने हित में करते हैं, तो कभी देश के विकास और हित के लिए। यह तथ्य है कि हमेशा कुछ वर्चस्व शील लोग समाज के विकास में अवरोधक बनकर खड़े होते रहे हैं। ऐसे लोगों को अपने स्वार्थ और हित के अलावा और कुछ भी नहीं दिखाई देता है।

रेणु राजनीतिक जीवन से मोहभंग होने के कारण साहित्य लेखन में आए थे।

उन्होंने 'मैला–आँचल' और 'परती–परिकथा' दोनों उपन्यासों में आजादी के बाद होने वाले राजनीतिक परिवर्तन पर नज़र डाली है। वे अपने समय के सजग लेखक थें वे ग्रामीण जीवन के हर विन्दुओं से बहुत गहरे स्तर से जुड़े हुए थे। रेणु ने इन उपन्यासों के माध्यम से दिखाया कि आजादी के पहले जो राजनीतिक दल देश, समाज और मनुष्य के महत्व तथा विकास की बात कर रहे थे, वही आजादी के बाद किस प्रकार से अपना चारित्रिक पतन कर लेते हैं। यह पतन चाहे कांग्रेस हो, कम्युनिस्ट पार्टी हो या सोशलिस्ट पार्टी, सभी में दिखाई देता है। आजादी के दौरान कांग्रेस ने देश का नेतृत्व संभाला और उसी दल के नेतृत्व में भारत की आजादी मिली, लेकिन आजादी के बाद इस दल का ऐसा पतन हुआ कि कहा नहीं जा सकता है। इस पार्टी के कर्मठ कार्यकर्त्ताओं को या तो पार्टी के किनारे लगा दिया गया या त्यागी, बलिदानी, बावनदास जैसों की हत्या कर दी गई। इन नेताओं की जगह अब पूँजीपति, जमींदार तथा तस्कर ले रहे हैं। इतना ही नहीं बड़े नेताओं की सारी बुराई स्थानीय नेताओं में भरती जा रही है। भ्रष्टाचार हमेशा ऊपर से होता है, लेकिन इसका भयंकर परिणाम नीचे तक पहुँचता है। भ्रष्ट लोग कांग्रेस पार्टी में ऊपर से नीचे तक भर गए हैं। 'मैला–आँचल' में रेणु ने दिखाया है कि धन के बल से किस प्रकार तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद और तस्कर दुलारचन्द कापरा कांग्रेस के नेता बन गए हैं। 'परती–परिकथा' के स्थानीय कांग्रेसी नेता राजनीति के गलत प्रयोग से धन कमाना चाह रहे हैं। इस प्रकार रेणु ने दिखाया कि किस प्रकार बड़े लोग धन के प्रयोग से राजनीतिक सत्ता प्राप्त कर रहे हैं और निम्न वर्ग के हाथों में सत्ता अपने से किस प्रकार राजनीति से धन कमाना ही उनका उद्देश्य बन गया है। राजनीतिक पार्टी का नेता चाहे जिस वर्ग का हो उसके लिए पैसे का महत्व अधिक हो गया है।

यह स्थिति केवल कांग्रेस की ही नहीं लगभग हर दल की होती जा रही है। कम्युनिस्ट पार्टी जो किसानों, मजदूरों के अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ रही थी, वह भी केवल किसानों, मज़दूरों के नाम पर राजनीति कर रही है। इस पार्टी के सिद्धान्त और व्यवहार में बहुत अन्तर आ गया है। यहाँ भी अवसरवाद और जातिवाद का धीरे–धीरे बोल–बाला बढ़ता जा रहा है।

रेणु ने देखा कि सोशलिस्ट पार्टी देश के विकास में बदलाव ला सकती है। लेकिन यथार्थ रूप में रेणु को इस पार्टी से सबसे ज्यादा निराशा हुई। सोशलिस्ट पार्टी के अन्दर भी वही सारी बुराइयाँ नज़र आईं जो कांग्रेस पार्टी के अन्दर थीं। इस दल के नेता

किसानों, मज़दूरों एवं दबे कुचलों के नाम पर केवल राजनीति करते हैं। जहाँ व्यावहारिक रूप से इन वर्गों के लाभ के लिए कार्य को अंजाम देने की बात आती है, तो वे अपना पैर पीछे खींच लेते हैं। इस दल के नेता और कार्यकर्त्ता विधायक, सांसद और मंत्री बनने का स्वप्न देखने लगते हैं। इस पार्टी के अन्दर भी तमाम बुराइयाँ आ गई हैं। इस पार्टी के जो उद्देश्य थे, उसको किनारे रख दिया गया है और उनके स्थान पर व्यक्तिगत स्वार्थ ऊपर हो गए हैं। पार्टी की विचारधारा और सिद्धान्त से कोई मतलब नहीं है, उनका अपना स्वार्थ सिद्ध होना चाहिए। इससे पार्टी का स्तर चाहे कितना गिर जाये, उनसे कोई लेना देना नहीं है। पार्टी के कर्मठ कार्यकर्त्ताओं को पार्टी से बाहर कर दिया जाता है। इतना ही नहीं इस पार्टी में भी जातिवाद, क्षेत्रवाद, अवसरवाद की गन्दी राजनीति हावी हो जाती है।

आजादी के बाद 'राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ' का आगमन भारतीय ग्रामीण जीवन में होता है। इस दल में शुरू से पुरातन पंथी विचारधारा का बोल–बाला रहा है। इस दल के नेता संयोजक जी का विचार है कि राजपूतों का पुनः आर्यावर्त पर राज्य होगा। ये लोग अभी तक अपने पुराने विचारों से ऊपर नहीं उठ पाये हैं। उनको इस बात की जानकारी शायद नहीं है कि आज हम ज्ञान–विज्ञान की दुनिया में जी रहे हैं, न कि पुरातन दुनिया में। इस दल का उद्देश्य केवल जातिवाद को बढ़ावा देना और देश के विकास में सहयोग न देना है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध का शीर्षक है "'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में रेणु की राजनीतिक दृष्टि का तुलनात्मक अध्ययन"। सुविधा के लिए इसे चार अध्यायों में विभाजित किया गया है। 'प्रथम अध्याय' रेणु के कथासाहित्य में राजनीति' है। रेणु ने अपने सम्पूर्ण कथा साहित्य में राजनीति का प्रयोग किस अर्थ में किया है तथा उनका राजनीति से किस प्रकार का संबंध रहा है, इन बात की तरफ संकेत किया गया है। रेणु अपने विद्यार्थी जीवन में राजनीति को किस तरह से समझते थे और युवावस्था में उनकी क्या सोच थी, राजनीति से उनका मोह भंग किस प्रकार हुआ, इन सारे प्रश्नों पर यहाँ विचार किया गया है।

लघु शोध प्रबन्ध का दूसरा अध्याय है – "'मैला आँचल' में राजनीतिक दृष्टि"। इस अध्याय में इस बात की तरफ नज़र डाली गयी है कि आजादी के पहले राजनीतिक दलों में त्याग, बलिदान और देशप्रेम की भावना प्रबल थी, लेकिन आजादी के बाद इन दलों

में स्वार्थ, लालच और अवसरवाद का ज़हर भर गया। कांग्रेस पार्टी में किस प्रकार गाँधीवाद की हत्या कर दी जाती है। बावनदास की हत्या ही गाँधीवाद की हत्या है। यह पार्टी के पतन स्वरूप को चित्रित करता है। राजनीति ग्रामीण जीवन में किस प्रकार अपना प्रभाव डालती है। इन बातों की तरफ संकेत किया गया है।

लघु शोध प्रबन्ध का तीसरा अध्याय है – "'परती–परिकथा' में राजनीतिक दृष्टि"। 'मैला आँचल' में हमें गाँधी और गाँधीवाद का प्रभाव दिखाई देता है। भले ही यह प्रभाव निःशेष होते हुए गाँधीवाद का हो पर 'परती–परिकथा' में गाँधी और गाँधीवाद का नामोनिशान नहीं है। कांग्रेस का दलगत चरित्र भी अब वह नहीं रह गया है जो पहले था। इन सारे तथ्यों की ओर नज़र दौड़ाई गई है।

लघु शोध प्रबन्ध का चौथा अध्याय है "'मैला–आँचल' और 'परती–परिकथा' की राजनीतिक दृष्टि का तुलनात्मक अध्ययन"। प्रस्तुत अध्याय में इस तरफ संकेत किया गया है कि किस प्रकार बड़े नेताओं के अवगुण स्थानीय नेताओं तक पहुँच रहे हैं। रेणु के राजनीतिक दृष्टि को भी समझने के लिए इन दोनों उपन्यासों का अध्ययन ज़रूरी है। रेणु ने राजनीतिक दलों के बारे में जहाँ 'मैला–आंचल' में उनके चारित्रिक पतन को दिखाया है वहीं 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि राजनीतिक दलों का चारित्रिक पतन जो ऊपर से शुरू हुआ था किस प्रकार स्थानीय स्तर तक पूर्ण रूप से फैल चुका है। हर दल के नेता सिद्धान्तों और विचारधाराओं को छोड़ चुके हैं। उनके स्थान पर वे जातिवाद, अवसरवाद, भ्रष्टाचार आदि घटिया चीजों का सहारा लेकर राजनीति कर रहे हैं। अंत में निष्कर्ष के रूप में उपसंहार दिया गया है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध मैंने डॉ. ओम प्रकाश सिंह के सानिध्य में पूर्ण किया है। इस शोध प्रबन्ध के आकार लेने में उनका स्नेहिल और मनोयोग पूर्ण निर्देशन बहुत अधिक सहायक रहा है। उनके प्रति मैं हार्दिक आदर प्रस्तुत करता हूँ। इसी दौरान प्रकाश जी का साथ भी मेरे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है, मैं उनका भी हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

इस लघु शोध प्रबंध के पूर्ण होने में आदरणीय मलिक सर एवं पुस्तकालय के अन्य सभी लोगों ने स्नेहिल सहयोग दिया, जिसके अभाव में शायद यह कार्य संभव न हो पाता।

इस लघु शोध प्रबन्ध को पूरा कराने में प्रत्यक्ष रूप से सहयोग देने वाले अपने वरिष्ठ सहयोगियों का मैं सदा आभारी रहूँगा। इस लघु शोध कार्य के दौरान जोगिन्दर बाबा

एवं त्यागीजी का जो साथ रहा वह सदा स्मर्णीय रहेगा, निशान्त जी बड़े भाई के रूप में हमेशा मेरे साथ खड़े रहे। आनन्द सर एवं डॉ. बॉबी दीदी सदैव मुझे प्रोत्साहित करते रहे हैं। सुनील एवं सरोज का स्नेह भ्रातावत ही नहीं रहा अपितु वाद–विवाद एवं संवाद की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी का भी रहा है।

मेरे और सारे मित्रों का अमूल्य सहयोग हमेशा बना रहा जिनके बिना शायद यह काम अधूरा रहता – अशोक अनुराग, अरुण, आज़म भाई, अंशू, कौशल चन्द्रकान्त, जयसिंह, ज्योति, निशाजी, प्रशान्त सर, प्रवीणजी, बलविन्दर, बाबा, रामबाबू, रजनीश, रमेश सर, रीना जी, विक्रान्त सिंह, विरेन्द्र सिंह, विवेक, विनम्र, विक्रम, विभावरी, सुधा, सन्दीप सर, शिवपूजन पाठक ऊर्फ बाबा, सुनील भाई ऊर्फ हाफाजी, सरोज भाई ऊर्फ महापुरुष, सीताराम ऊर्फ ज़नाब सन्तोष सिंह, सतीश कुमार, सईद बाबू, हर्षिता और मेरे सारे मित्र।

मैं अपने परिवार के सदस्यों की अनुकम्पा एवं प्रेम की अनुभूति को भी महसूस कर रहा हूँ जिसके बिना जीवन ही निरर्थक सा है। मेरे परमपूज्य आदरणीय पिताजी एवं माताजी का आशीर्वाद हमेशा मेरे साथ रहा है, और आगे भी रहे, जो मेरे लिए दुनिया का सबसे बड़ा वरदान है।

चाचा एवं चाची जी का जो पितृवत् एवं मातृवत स्नेह मुझे मिला है, वह भी अवर्णनीय है। भईया एवं भाभी हमेशा मुझे एक अच्छे मित्र की तरह मार्गदर्शन देते रहे हैं।

छोटे भाईयों एवं बहनों का स्नेह भी मुझे सदैव ऊर्जा प्रदान करता रहा है।

इस लघु शोध कार्य को कागज पर टंकित करने में शिवप्रताप जी की अहम भूमिका है, उन्होंने पूरे मनोयोग से यह कार्य शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण कर मुझे पुत्रवत् स्नेह एवं सहयोग दिया है जिसे धन्यवाद कहकर नहीं चुकाया जा सकता है, अतः मैं उनके प्रति दिल से कृतज्ञ हूँ।

– विश्वनाथ

पहला अध्याय

रेणु के कथा साहित्य में राजनीति

रेणु अपने युग और समाज से इस प्रकार जुड़े हुए थे कि उससे अलग होकर उनके साहित्य पर विचार नहीं किया जा सकता है। रेणु का समय जनआन्दोलन, संघर्ष तथा विद्रोह का काल था। उन्होंने साहित्य के माध्यम से समाज को एक नई दृष्टि दी। यह दृष्टि उन्होंने जीवन संघर्ष के माध्यम से प्राप्त की थी। साहित्यिक क्षेत्र में आने से पूर्व और उसके पश्चात् भी रेणु ने साहित्य और जीवन दोनों ही क्षेत्रों में अपनी राजनीतिक दृष्टि का सक्रिय परिचय दिया था।

रेणु के उपन्यासों में आजादी प्राप्ति के पहले और बाद के राजनीतिक परिवेश की सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है। रेणु ने अपने समय के अनेक मतवादों एवं घटनाओं का साहित्यिक निरूपण ही नहीं, अपितु समाज में व्याप्त राजनीति की सारी हल–चलों का भी वर्णन किया है। उनकी रचनाओं में पाखण्डी राजनेताओं की पोल पट्टी खोली गई है। यद्यपि रेणु का लेखनकाल सन् 1954 के आस–पास शुरू होता है, लेकिन उन्होंने अपने साहित्य में सन् 1924 से सन् 1977 तक के भारत की राजनीतिक झाँकी प्रस्तुत की है।

रेणु ने अपने समय को अच्छी तरह से जांचा परखा था। वे राजनीति के अच्छे बुरे दोनों रूपों से परिचित थे तथा उसके प्रभाव को भी अच्छी तरह से जानते थे। रेणु इस बात को अच्छी तरह से जानते थे कि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में राजनीति सबसे अधिक शक्तिशाली तत्व है। उन्हें इस बात का भी ज्ञान था कि राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए तमाम अवैध तरीकों का इस्तेमाल किया जाने लगा है।

रेणु की राजनीतिक दृष्टि का निर्माण जीवन के अनुभवों से हुआ था और वे इसी को महत्त्व देते थे। इसी कारण उनका विश्वास राजनीतिक पार्टियों की रूढ़ विचारधाराओं से हटता चला गया। मधुकर सिंह को दिए गए एक साक्षात्कार में रेणु ने अपनी विचारधारा के तत्वों को स्पष्ट करते हुए कहा है, "राजनीति हमारे लिए दाल–भात की तरह है। अगर आपका मतलब 'राजनीतिक पाटी' से है तो यह सही है कि अब मैं किसी पार्टी का सदस्य नहीं रहा। कारण ? ...क्या बताएं आपको ? समझिए कि मिसफिट होने के कारण ही ऐसा हुआ होगा ... देखिए, चरखा को मैंने केवल यह नहीं समझा कि यह गाँधी जी का है, वरन् यह समझा कि घर के कुदाल, खुर्पी, हंसिया, हल वगैरह की तरह चरखा भी हमारे जीने का सामान है। परिवार में राजनीतिक चेतना पहले से थीं पिताजी कांग्रेस के मेम्बर थे और

पढ़ने के लिए बहुत तरह की पत्रिकाएं मंगाते थे ... मेरा तब एक संस्कार बना। अब भी किसान मजदूरों की मानसिकता से जुड़ा हूँ – मैं उनके हर आन्दोलन और एक्शन में अपने को इनवॉल्वड पाता हूँ।"[1] रेणु राजनीति को समाज के लिए अनिवार्य पोषण तत्त्व मानते थे। उनके लिए गाँधी का दिया गया चरखा केवल चरखे का ही प्रतीक नहीं है, बल्कि साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष का ठोस हथियार है। रेणु के राजनीतिक विचार – किसान एवं मजदूरों के लिए केवल सहानुभूति के स्तर पर उभर कर नहीं आए हैं, बल्कि उनके लिए संघर्ष के लिए आए हैं।

रेणु हमेशा समाज की विकृतियों से लड़ते रहे। उन्होंने मानवीय संवेदना को राजनीति का मुख्य आधार माना एवं उसके प्रति प्रतिबद्ध रहे। अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने अपनी राजनीतिक विचारधारा निर्मित किया। इस विचारधारा में जाति, धर्म, प्रान्त, हिंसा, भ्रष्टाचार, धन का प्रभुत्व जैसी संकीर्णताओं का विरोध एवं समानता, न्याय, विकास जैसी विस्तृत उद्देश्यों वाली राजनीति के प्रति पक्षधरता थी।

---

1. रेणु – रेणु रचनावली, भाग–4, पृ. 418–19.

I. रेणु और उनकी कथा–यात्रा

रेणु के सक्रिय राजनीतिक जीवन का आरम्भ सन् 1939 ई. के लगभग बनारस से हुआ। रेणु बनारस में ही आचार्य नरेन्द्रदेव और जयप्रकाशनारायण के सम्पर्क में आए और समाजवादी विचारधारा से प्रभावित हुए। पटना से निकलने वाले पत्र 'जनता' (समाजवादी दल का पत्र) द्वारा रेणु ने अपनी लेखनी के माध्यम से समाजवादी विचारधारा का प्रचार किया। रेणु ने अपने गुरू सतीनाथ भादुड़ी को कांग्रेस से इस्तीफा दिलाकर सोशलिस्ट पार्टी की सदस्यता दिलाई। रेणु गाँव–गाँव में घूमकर सभाएँ आयोजित करते, पार्टी की सदस्य संख्या के विस्तार का प्रयास करते और क्षेत्रीय भूमि संबंधी झगड़ों के निपटारे के लिए प्रान्तीय नेताओं से सम्पर्क करते थे।

1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में 2 वर्ष 6 माह के जेल प्रवास से बाहर आकर रेणु ने श्री जयप्रकाशनारायण और रामवृक्ष बेनीपुरी से मुलाकात की। श्री जयप्रकाशनारायण की प्रेरणा से रेणु ने सोशलिस्ट पार्टी का क्षेत्रीय कार्य प्रारम्भ किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत में 1952 में प्रथम आम चुनाव सम्पन्न हुआ। इसमें समाजवादी दल ने बड़ी संख्या में अपने उम्मीदवार खड़े किए, लेकिन चुनाव में सफलता नहीं मिली। इसके कारण रेणु को गहरा आघात लगा और वे राजनीति से अलग हो गए। राजनीति के प्रति रेणु का दृष्टिकोण इस प्रकार स्पष्ट है "राजनीति ने मुझे बहुत दिया। गाँव–गाँव में भटकाया और अपने लोगों को पहचानने का अवसर दिया। लेकिन मुझे यह अनुभव हुआ कि सत्ता की होड़ में हमारी पार्टी 'बी' टीम है। अपनी पार्टी में भी हमने वही तौर–तरीके देखे, जो कांग्रेस पार्टी में थे। खास करके बुद्धिजीवियों के साथ जो सुलूक हो रहा था उसमें तो यही बात दिखाई दी।"[1]

रेणु ने यह अनुभव किया कि अपना सब कुछ न्योछावर करने के बाद उन्हें केवल उपेक्षा और तिरस्कार मिला। रेणु ने पार्टी के अन्दर जो दुख झेले थे, उसे उन्होंने बखूबी अपनी कहानी 'आत्मसाक्षी' में गनपत के माध्यम से चित्रित किया है। "परिवार, जाति, धर्म, समाज, सरकार और हर अन्याय, अत्याचार से हमेशा लड़ने वाला लड़ाकू गनपत आज अखाड़े में हारे हुए पहलवान की तरह पड़ा हुआ है। सभी उसकी पीठ पर एक लात लगाकर गाली देकर चले जाते हैं। ... उसने पठिलउ का काम किया। किसी का एक तिनका न चुराया न पार्टी का एक पैसा गोल–माल किया। माँ–बाप, भाई–बहन, गाँव समाज और

---

1. साप्ताहिक रविवार – 28 अगस्त से 3 सितम्बर, 1977 (रेणु का हिन्दुस्तान), पृ. 8.

परबतिया से भी बढ़कर पार्टी और पार्टी के झण्डे को प्यार किया। सब बेकार।"[1] दुनिया के दुहरे रूप को देखकर रेणु का मन ग्लानि, घृणा और क्रोध से भर जाता है, उनकी आस्थाएँ हिलने लगती हैं। "गनपत को लगता है कि सूरज में भी दरार पड़ गयी हैं दुनिया की हर चीज़ आज दो भागों में बँटी हुई सी लगती है। हर आदमी के दो टुकड़े, दो मुखड़े और दरका हुआ दिल।"[2] रेणु का मस्तिष्क इस पीड़ा को सहन नहीं कर पाता। उनके हृदय में कम्पन्न और सिहरन पैदा होने लगती है। वे लिखते हैं "मैं जब पार्टी में था और राजयक्ष्मा के मृत्यु सुख दौर से गुजर रहा था – एक दिन चन्द क्षणों का मेहमान समझकर पार्टी कामरेड इसी अस्पताल में फेंक गए।"[3] पार्टी कामरेड रेणु को अस्पताल में अकेले छोड़कर चले जाते हैं, उनके हृदय में रेणु के प्रति किसी भी प्रकार की इंसानियत नहीं थी। "सात दिन में गाँव का बच्चा–बच्चा आकर देख गया। कुशल पूछ गया। मगर कोई साथी कामरेड झाँकी मारकर देखने के लिए भी नहीं आया।"[4]

यहीं पर रेणु की भेंट लतिका से होती है और उनके जीवन में एक नया मोड़ आता है। इस तरह हम देखते हैं कि पार्टी के साथियों का व्यवहार रेणु के हृदय पर गहरा आघात करता है। रेणु का विश्वास पार्टियों से उठ गया। यह प्रभाव उनके अन्दर विद्रोह को जन्म देता है, जिसकी अभिव्यक्ति 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में सभी पार्टियों की बखिया उधेड़ते हुए होती है। रेणु राजनीति छोड़कर साहित्य जगत में प्रवेश करने का संकल्प कर लेते हैं। "इधर देखने में ऐसा लगता था कि मैंने सक्रिय राजनीति से संन्यास ले लिया है, सक्रिय राजनीति से अलग हो गया हूँ, मगर बात ऐसी नहीं थी। किसी राजनीतिक पार्टी का सदस्य न होकर भी आदमी राजनीति कर सकता है। मेरी रचनाएँ खासकर 'मैला आँचल', 'परती–परिकथा', 'दीर्घतपा', 'जुलूस', 'कितने चौराहे' सभी राजनीतिक समस्याओं, विचारों के ही प्रतिफलन हैं।"[5] रेणु ने वैसे राजनीति से संन्यास नहीं लिया, लेकिन 1952 से 1972 तक राजनीति में प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं लिया। 1952 से 1972 तक

---

1. आत्मसाक्षी – रेणु, पृ. 112.
2. वही, पृ. 112
3. रेणु संस्मरण और श्रद्धांजलि, सं. डॉ0 रामबचन राय, कौन भुलाएगा इसे, भूपेन्द्र अबोध, पृ. 133
4. आत्मसाक्षी – रेणु, पृ. 112
5. रेणु – संस्मरण और श्रद्धांजलि, कौन भुलाएगा इसे, श्री भूपेन्द अबोध, पृ. 133–134

राजनीति से यह पृथक्त्व रेणु के लिए वरदान साबित हुआ। यह काल उनके जीवन का युगान्तकारी अध्याय था।

रेणु की पहली कहानी 'बटबाबा' 1946 ई. में प्रकाशित हुई थी। पार्टी से अलग होने तथा बीमारी के बाद रेणु ने लेखन कार्य पर अधिक बल दिया। इस कार्य में पत्नी लतिका सहयोग एवं प्रेरणा प्रदान करती रहीं। लतिका से उनका परिचय बीमारी के दौरान अस्पताल मे हुआ, जहाँ वे नर्स थीं। सन् 1954 ई. में 'मैला आँचल' के प्रकाशन के समय रेणु को काफी समस्याओं का सामना करना पड़ा। 'मैला आँचल' पहले समता प्रकाशन पटना–4 से प्रकाशित हुआ था। लेकिन बाद में इसका प्रकाशन राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ। इस उपन्यास से रेणु की अभूतपूर्व ख्याति हुई। इस सन्दर्भ में उन्होंने लिखा है – "मैला आँचल' मेरा पहला उपन्यास हुआ। साहित्यिकों ने मुझे पीढ़ी–पानी ही नहीं दिया – यानी पंगत में नहीं बिठाया बल्कि अगली पंगत में बिठाया और बहुत धूम–धाम से बिठाया। मेरा हौसला बढ़ा, आलोचनाएं छपने लगी, प्रशस्तियां हुईं, फिर प्रत्यालोचना। किसी भी लेखक के लिए पागल हो जाने वाली स्थिति होती है, अगर उसकी पहली ही चीज़ इस तरह हाथों–हाथ ले ली जाए। मगर मैं पागल नहीं हुआ। उसका कारण यह था कि उन प्रशस्तियों और प्रत्यालोचनाओं के बीच कुछ बातें अन्दर ही अन्दर पक रही थीं। मैं राजनीति से आया था, मैंने देखा कि साहित्य के अन्दर भी एक राजनीतिक अन्तर्धारा है। सवाल था चीज अच्छी है या बुरी।"[1] 'मैला आँचल' रेणु के ज्ञानात्मक संवेदन का कम तथा संवेदनात्मक ज्ञान तथा अनुभव का अधिक प्रतिफलन है। उन्होंने अपने विस्तृत अनुभव क्षेत्र का अवगाहन करते हुए 'मैला आँचल' को सृजित किया था। रेणु ने इस बात पर हमेशा ध्यान दिया कि साहित्य की अन्तर्धारा में राजनीति न आए तथा यथार्थवादी दृष्टि से उसका मूल्यांकन करे। 'मैला आँचल' यथार्थवादी रचना है पर उसमें जीवन को केवल एक आयामी रूप से प्रस्तुत नहीं किया गया है, बल्कि बहुआयामी रूप में प्रस्तुत किया गया है।

'मैला आँचल' के बाद रेणु का दूसरा उपन्यास 'परती–परिकथा' सन् 1957 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में परानपुर गाँव की परती की कथा है, जिसमें अनेक उपकथाएँ, चक्राकार ढंग से आती हैं एवं एक ही अनुभूति धारा का निर्माण करती हैं। परती ऊसर के टूटने की समूचे उपन्यास की फलक पर छा जाती है। स्वातंत्र्योत्तर भारत की भूमि

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 244

समस्या को इस उपन्यास में उभारा गया है। भूमि के लिए किस प्रकार की राजनीति की जा रही है, रेणु ने इस उपन्यास में बड़े यथार्थ ढंग से चित्रित किया है। 'परती–परिकथा' अपने ही युग की कथा है, रेणु कहते हैं "जैसे कि महाभारत की कथा में से एक कथा निकाल लेने को परिकथा कहते हैं, मैंने भी अपने युग की परिकथा शुरू की।"[1]

दो बड़े उपन्यासों के बाद रेणु का पहला कहानी संग्रह 'ठुमरी' सन् 1959 में प्रकाशित हुआ। रसप्रिया, पंचलेट, ठेस, तीसरी कसम उर्फ मारे गए गुलफाम, लाल पान की बेगम और बिदिया जैसी कहानियों वाले इस प्रथम कहानी संग्रह ठुमरी को ठुमरी धर्मा मानते हुए डॉ. नामवर सिंह कहते हैं – "क्योंकि सभी कथाओं का 'अन्तर्मार्ग' एक ही है। 'गीत के 'अन्तर्भाग' में बीच–बीच में विभिन्न स्वरों के प्रयोग से जो वैचित्र्य और कारू–कार्य सम्पादित होता है उसका अन्तर्मार्ग कहते हैं।"[2] समाज में निम्न स्तर के लोगों के लिए जीवन, कला एवं संवेदना को इन कहानियों में उभारा गया है। ठुमरी कहानी–संग्रह ने नई कहानी आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

ठुमरी के प्रकाशन के बाद 'एक आदिम रात्रि की महक' (1967 ई) अग्निखोर (1973) तथा 'एक श्रावणी दोपहरी की धूप' का संग्रह (1989), रेणु की मृत्यु के बाद प्रकाशित हुआ। रेणु ने इन कहानी संग्रहों में यथार्थ के ढांचे का अतिक्रमण करते हुए कथा की नवीन आविष्कृति का प्रयास करते हैं। डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव ने लिखा है "रेणु ने इतिहास और समय के आघात का अनुभव करने वाले मनुष्य को विशेष आँचल के बीच उद्घाटित करना चाहा है।"[3]

'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में वर्णित गाँवों की महागाथा से कुछ अलग हटकर रेणु का तीसरा उपन्यास 'दीर्घतपा' में शहरों में नारी जीवन के यथार्थ का वर्णन मिलता है। सन् 1963 ई. में प्रकाशित इस उपन्यास में स्वतंत्रता संग्राम की उथल–पुथल पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव, भोगवादी प्रवृत्तियों का प्रसार एवं सामान्य सामाजिक नैतिक एवं चारित्रिक पतन जैसे मुद्दों को शामिल किया गया है। अपने पूर्ववर्ती उपन्यासों की जमीन को तोड़ते हुए रेणु ने शहरी कलुष एवं उनके बीच नारी के संघर्ष को 'दीर्घतपा' के माध्यम से उजागर किया है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 246.
2. कहानी : नयी कहानी – नामवर सिंह, पृ. 44.
3. हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया – डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव, पृ. 277

सन् 1965 में 'जुलूस' उपन्यास का प्रकाशन हुआ, जिसमें भारत विभाजन के बाद शरणार्थी समस्या को उठाया गया है। 'जुलूस' की भूमिका में रेणु ने स्वीकार किया है "पिछले कुछ वर्षों से मैं एक अद्‌भुत भ्रम में पड़ा हुआ हूँ। दिन–रात सोते बैठते खाते–पीते मुझे लगता है कि एक विशाल जुलूस के साथ चल रहा हूँ, अविराम।"[1] रेणु अपने को इससे अलग नहीं रख पाते हैं – "इस जुलूस में चलने वाले नर–नारियों से अपने आस–पास के लोगों से मेरा परिचय नहीं लेकिन उनकी माया–ममता में छिटक कर अलग नहीं हो सकता।"[2] इस उपन्यास में रेणु ने शरणार्थी समस्या के राजनीतिक पक्ष के साथ ही साथ सांस्कृतिक पक्ष पर जोर दिया है। शरणार्थियों के सामने जो समस्याएँ आ रही हैं उसको रेणु ने बड़े सजीव रूप से चित्रित किया है। इसके प्रकाशन के एक वर्ष बाद सन् 1966 ई. में रेणु ने स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ी अपने बचपन की स्मृतियों को ध्यान में रखकर 'कितने चौराहे' उपन्यास की रचना की। इस उपन्यास में किशोर मन पर स्वतंत्रता संग्राम में घटित होने वाली घटनाओं का प्रभावशाली ढंग से वर्णन मिलता है। रेणु की मृत्यु के पश्चात् सन् 1979 ई. में 'पलटूबाबूरोड' का प्रकाशन हुआ। इस उपन्यास में सामाजिक और आर्थिक शोषण के मूल को उद्‌घाटित किया गया है। रेणु ने अपने इस उपन्यास में राजनेताओं, भद्रजनों तथा समाज के ठेकेदारों के वास्तविक चरित्र एवं नंगेपन को उजागर किया है।

रेणु को रिपोर्ताज लेखक के रूप में भी पर्याप्त ख्याति मिली है। अपने रिपोर्ताजों के माध्यम से वे समाज को सच्चाई का मार्ग दिखाते हैं। सन् 1945 ई. में साप्ताहिक 'विश्वामित्र' के अगस्त अंक में उनका 'विदापतनाच' नामक रिपोर्ताज प्रकाशित हुआ था। उसके बाद से जीवन भर रेणु ने रिपोर्ताज लेखन किया। सुरेन्द्र चौधरी ने रिपोर्ताज का महत्व बताते हुए लिखा है "जियो वोगजा ने रिपोर्ताज को एक सिस्मोग्राफ कहा है, जो सुदूर और भीतरी कम्पन्न की गतिविधियों को सूचित करता है। धरती और धरती पुत्रों की रिपोर्टिंग से साहित्यिक लेखन प्रारम्भ करने वाले रेणु में आश्चर्यजनक संवेदनशीलता है। यह साहित्यिक रिपोर्टिंग मात्र सूचना नहीं देती वह मानवीय स्तर पर कम्पन्न उथल–पुथल और आन्तरिक जीवनलय के समस्त उतार चढ़ाव को भी गहराई से उजागर करती है।"[3] ऋण जल धनजल' की भूमिका में रघुवीर सहाय ने लिखा है "रेणु का देखना एक ही साथ

---

1. रेणु रचनावली, भाग–3, जुलूस की भूमिका, पृ. 110
2. वही.
3. रेणु – सुरेन्द्र चौधरी, पृ.18

बाहर और भीतर दोनों ओर होता है।"[1] रेणु का एक दूसरा रिपोर्ताज संग्रह है 'नेपाली क्रान्ति कथा'। इन संग्रहों में रेणु ने राजनीतिक घटनाओं का वर्णन किया है। रेणु ने अज्ञेय के साथ मिलकर सूखा–प्रभावित क्षेत्रों की रपटें 'दिनमान' में 'भूमिदर्शन की भूमिका के शीर्षक से प्रकाशित कराई थी। इन रिपोर्टिंगों में अकाल एवं उसकी वास्तविकताओं को उजागर किया गया था। अज्ञेय ने इसके बारे में लिखा है, "सूखा प्रदेश की वह यात्रा सूखे के हृदय–द्रावक दृश्यों और अनुभवों के कारण अविस्मरणीय ही है, रेणु का साथ स्वयं एक मार्मिक स्मृति है। सर्जक कलाकार स्थितियों का सामना कैसे करता है, कैसे प्रतिकृत होता है, यह शायद दूसरे ही कलाकार के लिए बड़ा आकर्षक अनुभव होता है, इसलिए रेणु को प्रफॉर्म करते हुए देखना मेरे लिए एक मूल्यवान और स्मरणीय अनुभव था।"[2] रेणु की रपटों में गरीब भूखे नंगे युद्धरत भारत की जिजीविषा का दर्शन होता है, जो तमाम यातनाएँ सहकर भी जीवन के रंग को बचाए हुए है।

---

1. ऋणजल धनजल की भूमिका – रघुवीर सहाय, पृ.
2. अज्ञेय स्मृति लेखा, पृ 105.

II. रेणु की राजनीतिक समझ

भारत में राजनीतिक जागृति प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857 के साथ हुई। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ राजनीतिक चेतना का विकास एवं विस्तार हुआ। सन् 1920 के आस–पास गाँधी जी ने कांग्रेस का नेतृत्व संभाला तथा 1930 ई. का वर्ष भारतीय राजनीतिक चेतना के इतिहास में पूर्ण स्वराज्य प्राप्ति के कांग्रेसी राजनीतिक आन्दोलन का मुख्य ध्येय हो गया। इसी का परिणाम 1942 ई. का 'भारत छोड़ो आन्दोलन' हुआ।

सन् 1947 में भारत को आजादी प्राप्ति हुई तथा इसके साथ ही साथ देश का विभाजन हुआ। आजादी के बाद राजनीति में महान परिवर्तन हुआ। आजादी के पहले राजनीतिज्ञों में जो राजनीतिक त्याग, देशसेवा और समाजसेवा का भाव था वह क्षीण होने लगा तथा उसके स्थान पर स्वार्थ, व्यक्तिगत हित और भ्रष्टाचार का बोल–बाला हो गया। स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद ही अर्जित मूल्यों का सर्वनाश शुरू हो गया जिसके मूल में व्यक्तिगत स्वार्थों की राजनीति थी। उस समय राजनीति इतनी हावी हो गयी थी कि समाज स्थिर नहीं हो पा रहा था। "स्वतंत्रता के बाद कुछ तो बाह्य प्रभावों से, कुछ हमारे अपने राष्ट्रीय जीवन की आन्तरिक विसंगतियों के परिणामस्वरूप हमारे यहाँ की हर पीढ़ी के लोगों के चिंतन और भाव में एक जबर्दस्त परिवर्तन आया है, जिसका व्यक्त और अव्यक्त प्रभाव साहित्य के विकास पर भी पड़ा।"[1]

रेणु के कथा साहित्य में राजनीतिक पार्टियों के पाखण्डवाद, स्वार्थवाद एवं तज्जनित सामाजिक अशान्ति की विस्तृत चर्चा मिलती है। रेणु ने तो स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया था, तथा राष्ट्रवादी विचारधारा में आकण्ठ डूबे रहे और नेपाल की सशस्त्र क्रान्ति में सैनिक की भूमिका का निर्वाह किया। चुनाव में भाग लेकर राजनैतिक दाँव–पेच को उन्होंने अच्छी तरह से देखा था। रेणु के मन में राजनीति के विषय में बहुत स्पष्ट धारणाएं बन चुकी थीं।

आजादी के बाद भारत में फैलने वाले राजनैतिक भ्रष्टाचार और स्वार्थ पर प्रहार करते हुए रेणु ने लिखा है "यही है तुम्हारी आजादी, यही है तुम्हारे समाजवादी समाज की रूपरेखा ? ... सच्चाई नामक गुण मनुष्य के हृदय से धीरे–धीरे लोप हो रहा है। ... स्वार्थ

---

1. आलोचना, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य विशेषांक, भाग–4, अप्रैल 1963, पृ. 3

सिद्धि के लिए आदमी किसी भी शर्त पर अपनी आत्मा को बेच सकता है। ... जहाँ जीवन में कोई अवलम्ब नहीं, आधार नहीं, विश्वास नहीं चारों ओर व्यर्थता का राज ... ?"[1] शासन करने वाले शासक स्वार्थपूर्ण कार्यों में लिप्त हो चुके हैं तथा हर वस्तु का मूल्य लग चुका है। इस पर रेणु ने प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखा है "सत्य की विजय नहीं होती है, कभी, इसलिए 'सत्यमेव जयते' लिखकर टाँगने वाला वाक्य हो गया है। इस वाक्य का प्रथम अक्षर 'लुप्त' है इसी छेद से निकलकर हम और तुम भगवान के पास ... !"[2] आज देश में जो पार्टियाँ हैं उनका लक्ष्य भी स्वार्थ साधन रह गया है, उनसे गरीब जनता का कोई लाभ नहीं – "कांग्रेस और सुशलिंग अपने में लड़ रहा है। दोनों अपना–अपना मेम्बर बनाना चाहता है। चक्की के पाट में गरीब लोग ही पीसे जाएंगे।"[3] राजनीतिक पार्टियों में ईमानदार और अच्छे कार्यकर्त्ताओं की उपेक्षा हो रही है। निष्ठापूर्वक पार्टी की सेवा करने के बाद जब पार्टी के कामरेड रस चूस लेते हैं और छिलके सा व्यवहार करते हैं तो निष्ठापूर्वक कार्य करने वाले पार्टी कार्यकर्त्ता का हृदय चीत्कार उठता है – "परिवार, जाति, धर्म, समाज, सरकार और हर अन्याय, अत्याचार से हमेशा लड़ने वाला लड़ाकू, गनपत आज अखाड़े में हारे हुए पहलवान की तरह पड़ा हुआ है। सभी उसकी पीठ पर लात लगाकर, गाली देकर चले जाते हैं। पैंतीस साल तक साधु संन्यासियों की तरह लंगोट बंद रहकर, जीभ–मुँह और मन में लगाम लगाकर, उसने पब्लिक का काम किया। किसी का एक तिनका न चुराया, न पार्टी का एक पैसा गोलमाल किया। माँ–बाप, गाँव–समाज और परबतिया से भी बढ़कर पार्टी और पार्टी के झण्डे को प्यार किया। सब बेकार ...।"[4] अन्त में गनपत पार्टी छोड़ने के लिए बाध्य हो जाता है। पार्टी से अलग हो जाने पर उसे बहुत सुख प्राप्त होता है तथा उसे लगता है कि सिर्फ सात दिन की बीमारी नहीं, पैंतीस साल से हुई बीमारी आज ठीक हो गई। इतने दिनों के बाद उसका मनोरथ पूरा हो गया।

गनपत की तरह ही 'फातिमा' की गति भी वही होती है। वह भी स्वार्थी एवं भ्रष्टाचार और संकीर्णताओं के कारण राजनीति से दूर हो जाती है। उससे पूछा जाता है कि तुम राजनीति से दूर क्यों हो गई तो वह कहती है कि – "यह मुझसे क्यों पूछते हो ?

---

1. दीर्घतपा – रेणु, पृ. 125
2. वही, पृ. 125
3. मैला आँचल – रेणु, पृ. 128–129.
4. मेरी प्रिय कहानियाँ – 'आत्मसाक्षी', रेणु, पृ. 112.

अपने उन नवाबज़ादों से कभी क्यों नहीं पूछा, जो रातोंरात 'देशभगत' बनकर कांग्रेस के खेमे में दाखिल हो गए बगल में छुरी दबाकर ! अपने नेताओं से क्यों नहीं जवाब तलब करते ? कल तक गाँधी, जवाहर, पटेल को सरेआम गालियाँ देने वाले, कौमी झण्डे को जलाने वाले फिरका–परस्त लोगियों की इज्जत अफजाई की गई और मुल्क के लिए मरने मिटने वालों को दूध की मक्खियों की तरह निकाल फेंका।"[1] इतना ही नहीं लाखों कुबार्नियाँ देने के बाद भारत को आजादी मिली, लेकिन आज स्वार्थी अवसरवादी लोगों के हाथ में राजनीति खेल रही है – "कटहा के दुलारचन्द कापरा, वही जुआ कम्पनी वाला, जिसकी जुए की दुकान पर नेबीलाल, भोलाबाबू और बावन ने फारविसगंज मेला में पिकेटिंग किया था। जुआ भी नहीं एकदम पाकिट–काट खेला करता था और मोरंगिया लड़कियों मोरगिया दारू–गांजा का कारोबार करता था। ... आज कटहा थाना कांग्रेस का सिकरेटरी है।"[2] आज के समय के हर व्यक्ति के व्यक्तित्व में दोगलापन आ गया है तथा लोगों के चेहरे दोहरे हो गए हैं – "गनपत को लगता है कि सूरज में भी दरार पड़ गई है। दुनिया की हर चीज़ आज दो भागों में बंटी हुई सी लगती है। हर आदमी के दो टुकड़े, दो मुखड़े और दरका हुआ दिल।"[3] ऐसे मुखौटेवारी देश प्रेमी देश को तबाह करके छोड़ेंगे। दुलारचन्द कापरा जैसे लोग ही अब कांग्रेस में स्थान पर रहे हैं। गाँधीवादी मूल्यों का मजाक उड़ाना आम बात हो गई है तथा खादीधारी कांग्रेस के सभापति बन गए हैं। बावनदास जैसे देशभक्त तथा गाँधीवादी मूल्यों को जिंदा रखने वालों को गाड़ियों के पहिए के नीचे कुचलकर मार डाला जाता है, क्योंकि उसने अन्याय एवं अत्याचार के खिलाफ आवाज उठायी। दुलारचन्द कापरा जैसे दोमुँहे व्यक्ति देश और राष्ट्र के लिए बहुत खतरनाक हैं। लेखक कहता है "मुझे खतरा है दोनों देशों के ऐसे 'क्रिमनल' से जिनके मुखौटे में कभी भी उलटकर उन्हें बेनकाब कर दे सकता हूँ। उनकी राष्ट्रीयता, देश प्रेम और मानवता की बड़ी–बड़ी बातों की सारी कलई में एक लमहे मे खोल दे सकता हूँ।"[4] परन्तु हम देखते हैं कि ऐसे लोग ही आगे बढ़ रहे हैं तथा उनके काले कारनामों की पोल पट्टी भी नहीं खुलती है। क्योंकि पोलपट्टी खोलने वाले 'बावनदास' जैसे लोगों की हत्या कर दी जाती है। देश पतन की ओर अग्रसर हो रहा है। भाई–भतीजावाद तथा परिवारवाद की राजनीति

---

1. मेरी प्रिय कहानियाँ – 'जलवा', रेणु, पृ. 99.
2. मैला आँचल – रेणु, पृ. 315.
3. मेरी प्रिय कहानियाँ – 'आत्मसाक्षी', रेणु, पृ. 112.
4. अग्निखोर – दस गज्जा के इस पार और उस पार, रेणु, पृ. 97.

में बोल बाला बढ़ता जा रहा है तथा मानवतावाद समाप्त हो रहा है, अपराध बढ़ रहे हैं, परन्तु किसी को कोई फिक्र नहीं है। लोग बधिर होकर देखरहे हैं तथा स्वार्थी लोगों का स्वार्थ दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। "अब भी लोगों को होश नहीं हुआ है। इन्हें सिर्फ अपनी गद्दी की फ्रिक है। देश जहन्नुम में जाए। इन्हें क्या ?" फातिमादि की बोली में गहरी पीड़ा आई थी ... अवाम की कसमें खाने वाले टुकुर–टुकुर देखते रहे और फिरका परस्त अजहदों ने पूरी कौम को लील लिया।"[1] फातिमा के इस कथन में रेणु के हृदय की गहन व्यथा का बोध ा होता है।

रेणु ने देखा कि आज देश सेवा के नाम पर किस तरह राजनीतिज्ञों की कचहरी लगती है, क्या कांग्रेस, क्या समाजवादी, क्या कम्युनिस्ट सभी पार्टी के लोग अपनी–अपनी रोटी सेकते हैं। तभी तो इरावती का मन संशयी हो जाता है और "दस महीने में ही वह तीन राजनीतिक पार्टियों से अपना रिश्ता जोड़ती–तोड़ती है।"[2] सामाजिक सत्य का हवाला देते हुए 'दीर्घतपा' की बेला गुप्त के साथ उसके पार्टी के साथी शारीरिक भूख मिटाते हैं और इरावती को भैयाजी रात्रि के ट्रेन सफर में डिब्बे के एकांत में तन की निकटता से संशय दूर करते हैं। जहाँ एक ओर देश सेवा के नाम पर किए जाने वाले ढोंग और बेईमानी का पर्दाफाश किया गया है वहीं दूसरी ओर सच्चे सेवकों की उपेक्षा पर भी विचार किया है। बाढ़–भूकम्प आदि दैवी विपत्तियों के समय भी देश सेवा के नाम पर छल करने वाले लोग बाज नहीं आते – "इन दैवी प्रकोपों में और भी एक वर्ग के लोग फायदे में रहते हैं – पब्लिक वर्कर' अर्थात् 'देश सेवा' करने वाले। ऐसी विपत्तियों के समय सरकारी रिलीफ और सार्वजनिक चन्दे के रुपए, कपड़े, अनाज, तेल–दवा इत्यादि बांटने का मौका मिलता है उन्हें। बाँट–बंटवारा में नगद लाभ होता ही है, इसके अलावा वोट माँगने के समय उनको तथा उनके प्रचारकों को बोलने में बल मिलता है। ... इसलिए ऐसी विपत्तियों की खबर सुनकर वे प्रसन्न हो जाते हैं। ... भगवान का वरदान।"[3] इसके ठीक विपरीत वे लोग हैं जो प्राणपण से देश सेवा की भावना से कार्य करते हैं लेकिन उनके नाम का उल्लेख भी नहीं किया जाता है। "अपने प्राणों की आहुतियाँ डालकर जिन योद्धाओं ने इसे सफल और सम्पन्न किया – उनके नाम इतिहास के पृष्ठों पर कभी नहीं लिखे जाएंगे। वे सदा अनाम

---

1. मेरी प्रिय कहानियाँ – जलवा, रेणु, पृ. 100.
2. परती–परिकथा – रेणु, पृ. 225.
3. जुलूस – रेणु, पृ. 179.

रह जाएंगे।"[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि रेणु अपनी कृतियों में राजनीति के क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार और नैतिक अधपतन का चित्रण करते हैं। इस सब वर्णन को पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि रेणु ने राजनीति के कुत्सित स्वरूप पर विचार किया है। परन्तु रेणु का विचार एकांगी नहीं है। उनके मन में आशा की किरणें फिर भी विद्यमान हैं।

रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि किस प्रकार इरावती जितेन्द्र को समझाते हुए कहती है – "घृणा से मुंह विकृत मत करो जितेन्द्र। राजनीति ने हमें बहुत कुछ दिया भी है। ... फिर भी तुम विस्थापित नहीं। गाँव के लोग तुमको न पहचाने। गाँव की मिट्टी अपनी जन्मभूमि का पानी तो तुमको प्राप्त है।"[2] यहाँ इरावती के रूप में मानो रेणु का विश्वास बोल रहा है, उनके हृदय से प्रकाश की रेखाएँ निकल रही हैं। राजनीति से समाज कल्याण के लिए सांस्कृतिक अनुष्ठान की आयोजना पर बल देते हुए वे कहते हैं – "यहाँ के सांस्कृतिक जीवन में डुबकी लगाए बिना प्रीति के छिन्न–भिन्न सूत्र को पकड़ना असम्भव है।"[3] यह स्पष्ट हो जाता है कि अन्तिम दिनों में तो राजनीति के तथाकथित बड़े–बड़े वादे उनके सामने बेनकाब हो जाते हैं। वह समाजवाद और मानवीय संवेदना को उभारने का प्रयास करते हैं। सच यह है कि सभी राजनीतिक पार्टियाँ आज के समय में मानवीय संवेदना को पूर्ण रूप से त्याग चुकी हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रेणु की राजनीतिक चेतना में किसी प्रकार मतवाद या आग्रह नहीं है। उन्होंने सही ढंग तथा स्वस्थ्य मानसिकता से राजनैतिक विसंगतियों का दिग्दर्शन कराया है। रेणु के यहां कांग्रेसी, जनसंघी, समाजवादी, मार्क्सवादी आदि अनेक विचारधाराएँ हैं, इन विचारधाराओं का पालन करने वाले चरित्र भी हैं परन्तु रेणु किसी भी चरित्र के साथ पक्षपात पूर्ण रवैया नहीं अपनाते बल्कि स्वतः चीजें उभरकर सामने आती हैं और रेणु उसी का चित्रण करते हैं। रेणु ने समस्त राजनैतिक दलों और विचारधारा के लोगों को सन्देश देते हुए कहा है – "राजनीतिक पार्टी के कार्यकर्ताओं से मैं कहूँगा जनता की सरलता का दुरुपयोग अपने स्वार्थ के लिए न करें। ... क्षतिपूर्ति पुनर्वास तथा ज़मीन वितरण आदि मसले ऐसे हैं जिससे सरकारी लालफीताशाही और घूसखोरी से आप ही बचा सकते हैं, जनता को।"[1]

---

1. नेपाली क्रान्ति कथा – रेणु, पृ. 85.
2. परती–परिकथा, रेणु, पृ. 350.
3. वही, पृ. 350
1. परती–परिकथा, रेणु, पृ. 369.

III. रेणु और राजनीति

अपना परिचय देते हुए रेणु ने लिखा है – "भारतवर्ष के मानचित्र में – बिहार प्रान्त के पूर्णिया जिले के एक उजाड़ झाड़ झंखाड़ और जंगली इलाके की भूमि पर उंगली डालकर बोले यहाँ इस गाँव में एक ऐसे जीव को भेजा जा रहा है जो एक ही साथ सुर और असुर, सुंदर और असुंदर, पायी और विवेकी, दुरात्मा और सन्त आदमी और साँप जड़ और चेतन सब कुछ होगा। धरती की मांग पर इसे विशेष रूप से भेजा जा रहा है।"[1] रेणु के पिता श्री शीलानाथ मण्डल एक किसान थे। उन्होंने शिक्षा और बाहरी दुनिया पर भी अपनी नज़र रखी तथा उससे जुड़े रहे। रेणु ने लिखा है – "यह घटना सन् 1931–32 की है। मेरी उम्र जब दस वर्ष के लगभग रही होगी और मैं फारबिसगंज हाईस्कूल का विद्यार्थी था, वही हॉस्टल में रहता और सप्ताह में छुट्टी के दिन गाँव आ जाता। फारबिस गंज से एक स्टेशन सिमराहा। वहाँ गाड़ी से उतर कर पाँव पैदल औराही हिंगना, पानी अपने गाँव पहुँचा। पिताजी किसान थे और इलाके के स्वराज आन्दोलन के प्रमुख कार्यकर्त्ता खादी पहनते थे, घर में चर्खा चलता था, तिलक स्वराज फंड वसूलते थे और दुनिया भर की पत्र–पत्रिकाएं मंगाया करते थे। ... मैंने जबसे होश संभाला अपने को पत्र पत्रिकाओं से घिरा पाया, बम्बई का वेंकटेश्वर समाचार, कानपुर का 'प्रताप' सैनिक, कर्मवीर, चाँद, हिन्दू, पंच आदि प्रमुख पत्र पत्रिकाएं नियमित आतीं और गाँव इलाके के लोग उनका नियमित अध्ययन करते थे।"[2] रेणु ने अपने स्कूल शिक्षा के समय से ही भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेना शुरू कर दिया था। उन्होंने न केवल स्वतंत्रता आन्दोलन के कार्य में अपने को लगाया बल्कि समय–समय पर जनता के बीच जाकर उनको जागृत किया। वे लिखते हैं – "सन् 1930–31 की बात है, मैं उन दिनों अररिया हाई स्कूल में चौथे दर्जे में पढ़ता था। महात्मा गाँधी की गिरफ्तारी की खबर मिलते ही सारा बाजार बन्द हो गया और स्कूल के सभी छात्र बाहर निकल आए। दूसरे दिन भी हम हड़ताल पर रहे। चूंकि मैं खद्दरधारी था, इसलिए हड़ताल के अलावा पिकेटिंग कर रहा था। अतिरिक्त उत्साह में मैंने स्कूल के असिस्टेंट हेडमास्टर साहब को भी रोका। दूसरे दिन हम स्कूल पहुँचे तो मालूम हुआ कि हर हड़ताली विद्यार्थी को आठ आने पैसे जुर्माने की सजा होगी। ... नोटिस के अन्त में विशेष रूप से मेरा

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 166
2. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 226.

नाम और वर्ग लिखकर कहा गया था कि असिस्टेंट हेडमास्टर साहब के साथ अशोभनीय व्यवहार (इम्पर्टिनेट विहेवियर) के लिए सारे स्कूल के छात्रों के सामने पांचवीं घंटी के बाद इस लड़के को दस बेंत लगाए जाएंगे। ... नोटिस निकलने के बाद ही मैं अचानक 'हीरो' हो गया। ऊँचे दर्जे के विद्यार्थी मुझे ढाढस बंधाते शाबासी देते और कोई–कोई तरस खाकर कहते – माफी मांग लो। ... लेकिन मैंने जलियाँ बाग काण्ड, मदन गोपाल की कहानी पढ़ी थी। मेरे सिर पर मदनगोपाल की आत्मा आकर सवार हो गई मानो। कई अध्यापकों ने भी आकर समझाया डराया धमकाया। लेकिन मैं माफी मांगने को तैयार नहीं हुआ।"[1] इससे स्पष्ट होता है कि रेणु के अन्दर बचपन से देशभक्ति का जोश था। रेणु ने अपनी शिक्षा की परवाह किए बिना भी इस कार्य में अग्रसर रहे। उन्होंने कभी इस बात की चिन्ता नहीं की कि उनका स्वयं का क्या होगा, वे हमेशा देशभक्ति एवं समाज सेवा की भावना से कार्य करते रहे। रेणु ने कोईराला परिवार को याद करते हुए लिखा है, "श्री कृष्ण प्रसाद कोईराला सारे विराट नगर के ... सारे मोरंग जिले के ... समस्त नेपाल के पिता थे।

पिता जी, कोइराला निवास, आदर्श विद्यालय।

गोशाले से भी बदतर एक घास–फूस के घर में आदर्श विद्यालय के क्लास लगते थे। एक बार क्लास में बैठने के बाद मैंने निश्चय कर लिया यहीं पढूँगा।"[2] एक अज्ञात कुलशील बालक को कोइराला परिवार ने जिस आत्मीयता से अपनाया एवं अनुशासन सहभागिता आदि के संस्कार दिए, उसे रेणु हृदय से याद करते हुए लिखते हैं – "1935 से 1942 तक पिताजी के स्नेह का अधिकांश मुझे मिलता रहा। आश्रमतुल्य कोइराला निवास में मेरी सारी महत्वाकांक्षाओं को सहारा मिला। साहित्य, राजनीति और कला की त्रिवेणी कोइरालां निवार। जहाँ भी रहा – मन विराट नगर टंगा रहा।"[3]

रेणु ने 1939 ई. में बनारस के काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश लियां कोइराला परिवार से उनके अन्य संगी भी आकर बनारस में रहने लगे। रेणु के वास्तविक जीवन की शुरुआत बनारस से ही होती है। बनारस में ही रेणु ने वास्तविक रूप से समाजवादी सिद्धान्तों को समझा। उन दिनों बनारस में ही आचार्य नरेन्द्रदेव जैसे समाजवादी

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 223.
2. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 216
3. वही, पृ. 217.

नेता रहते थे। रेणु आचार्य नरेन्द्रदेव के नज़दीक आए और वहीं से उनकी राजनीतिक सक्रियता बढ़ने लगी। वहाँ से 1942 में गाँव लौटने के तुरन्त बाद ही 'भारत छोड़े आन्दोलन' के उफान में रेणु अपने को नहीं रोक सके और उसमें बढ़ चढ़कर भाग लिया और जेल की सज़ा भी मिली। रेणु ने लिखा है कि "भावुकतावश कहिए या दिल की सच्चाई कहिए कि पढ़ाई–लिखाई के साथ देश प्रेम ही नहीं, समाजवाद की बात भी करता रहा। बाद में 1942 का दौर आया। पढ़ाई–लिखाई खत्म करके हम आन्दोलन में लगे और 1942 के आन्दोलन का पूरा कार्यक्रम देनेवाला जेल के सीखचों में बन्द था – नजरबन्द 1942 में बंबई से आई आवाज इंकलाब – जिन्दाबाद' हमारे गाँव तक पहुँची थी, लेकिन बंबई से सिर्फ इतनी ही आवाज गई थी कि महात्मा गाँधी जी पकड़ लिए गए हैं। इसके बाद क्या करना है, यह समाजवादियों को मालूम था और मालूम था देश के युवकों को।"[1] रेणु ने जयप्रकाश की अपील को सहृदय अपनाया और 1942 के संघर्ष की आग में कूद गए। रेणु लिखते हैं "हम उसी प्रोग्राम को लेकर आगे बढ़े। वे लोग, जिन्हें याद होगा वह जमाना, उन्हें यह जरूर मालूम होगा कि बिहार में हमने आजाद दस्ता कायम किया था। इसी बीच जयप्रकाश जी जेल की दीवार लांघकर हमारे बीच आए थे। क्रान्ति की बुझती हुई मशाल को उन्होंने आगे बढ़कर संभाला था और क्रान्ति जारी की थी। हम जेल गए।"[2]

रेणु अपने जेल से लिखे संस्मरणों में कम्युनिस्ट नेता नक्षत्र मालाकार, गाँधीवादी सतीनाथ भादुड़ी, तारिणी मंडल आदि को याद करते हुए उनके विचारों और प्रभावों की चर्चा की है। सन् 1945 में रेणु जेल से रिहा हो गए और राजनीति के क्षेत्र में पुनः कूद गए।

रेणु का रुझान अब धीरे–धीरे साहित्य की ओर भी होने लगा। कलकत्ता से प्रकाशित साप्ताहिक 'विश्वामित्र' में उनकी शुरुआती कहानियाँ प्रकाशित हुई जिनमें 'बटबाबा', 'पार्टी का भूत', 'पहलवान की ढोलक' आदि के नाम उल्लेखनीय है। रेणु जेल से छूटने के बाद समाजवादी विचारधारा से अधिक जुड़े। उसी समय डॉ. राममनोहर लोहिया अपने पक्ष को सबल बनाने के लिए कार्यक्रम तैयार कर रहे थे – "पक्ष के मंच से अपने विचारों को सम्यक् और प्रकट तौर पर प्रतिपादित करने का पहला प्रयास आपने (लोहिया) पार्टी के पटना अधिवेशन (1949 ई.) में किया था। कार्यक्रम का 'आगे बढ़ो'

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 243
2. वही, पृ. 243

प्रस्ताव प्रस्तुत करने समय लोहिया ने जनतंत्रात्मक समाजवाद, पूँजीवाद कम्युनिज्म खेती औद्योगीकरण विश्व रचना जैसे कई विषयों को लेकर समाजवाद के विशिष्ट स्वरूप को स्पष्ट करने वाले कई मौलिक विचारों और उपायों को भी प्रतिपादित किया।"[1] लेकिन पार्टी की संरचना एवं कार्य प्रणाली से रेणु सन्तुष्ट नहीं थे। वे लिखते हैं कि "राजनीति ने मुझे बहुत दिया। गाँव–गाँव में भटकाया और अपने लोगों को पहचानने का अवसर दिया। लेकिन मुझे यह अनुभव हुआ कि सत्ता की होड़ में हमारी पार्टी बी टीम है। अपनी पार्टी में भी हमने वही तौर तरीके देखे जो कांग्रेस पार्टी में थे। खास करके बुद्धिजीवियों के साथ जो सलूक हो रहा था उसमें तो यही बात दिखाई दी। लेफ्ट राइट, किसी भी पार्टी में बुद्धिजीवियों को राजनीतिकों के मुकाबले दूसरे दर्जे का नागरिक समझा जाता है।"[2] रेणु मानववादी दृष्टि से देखते थे, इसलिए किसी भी प्रकार से किसी भी स्थिति में दबना या घुटना नहीं चाहते थे।

रेणु राजनीति और साहित्य के बीच अन्तर्द्वन्द्व में फंसे थे और इससे बाहर निकलने की पूरी कोशिश कर रहे थे। रेणु इस चुनाव में ठीक से समझ नहीं पा रहे थे कि किस प्रकार की रणनीति अपनाए। रेणु ने इस संबंध में लिखा है कि – "मैं भी एक बार पार्टी दफ्तर में एक ठोंगे में कुछ भजिया–वाजिया खा रहा था। थैला बहुत अच्छे कागज का था, अच्छी छपाई थी। लगा कि विदेशी कागज का टुकड़ा है। उसमें दो लाइने छपी थीं – लगा जब कोई आदमी राजनीति और साहित्य दोनों क्षेत्रों में समान रूप से काम कर सकता हो और अचानक उसे फैसला करना पड़ जाए कि दोनों में से वह किसे चुने तो साहित्य को चुनने वाला व्यक्ति बुद्धिमान होता है। मैंने कहा बुद्धिमान ही होना चाहिए और मैंने राजनीति को तिलांजलि दे दी। राजनीति को तिलांजलि दी माने उन पार्टियों को तिलांजलि दी, लेकिन जिन मूल्यों के लिए मैं पार्टी में आया था, वे मूल्य मेरे साथ रहे।"[3]

1952 से 1972 तक समय रेणु के जीवन में राजनैतिक जीवन का विराम या ठहराव का समय मान सकते हैं। क्योंकि इस काल के दौरान भी रेणु राजनीति मे रुचि रखते थे। राजनीति के प्रति उनके मन में लगाव था। वे भारत में एक स्वस्थ वातावरण तैयार

---

1. राममनोहर लोहिया – इन्दुमति केलकर, पृ. 71
2. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 243.
3. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 224.

करना चाहते थे। सन् 1967 में डॉ. राममनोहर लोहिया के प्रयास से आठ राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारें बनी तो रेणु इसे स्वतंत्र भारत में राजनीतिक स्थिति का महत्वपूर्ण उपलब्धि मानते थे। रेणु द्वारा लिखित उनके एक पत्र से इस बात की पुष्टि होती है – "अपने यहाँ साझे की गैर कांग्रेसी सरकार बनी है। संयोपा + कम्युनिस्ट + जनसंघ + जनक्रान्ति (राजा रायगढ़ की पार्टी) ने मिलकर सरकार बनायी है। ऐसा लगता है कि राष्ट्रपति शासन को टालकर कुछ दिनों के लिए शासन में रहकर बड़ी–बड़ी घोषणाएं करने के बाद यह सरकार यह कहकर गद्दी छोड़ देगी कि केन्द्र की कांग्रेसी सरकार हमारी घोषणाओं को पूरा नहीं करने देती। अतः मध्यवधि चुनाव में कांग्रेसी न्यूनतम संख्या में जीत सकेंगे। मेरे ख्याल में यह अच्छी राजनैतिक चाल है।"[1] इस तरह देखे तो रेणु ने इस दौरान प्रत्यक्ष रूप से राजनीति में भाग नहीं लिया, लेकिन साहित्य लेखन माध्यम से राजनीति में अपनी भागीदारी हमेशा बनाए रखी थी। रेणु हमेशा यह एहसास करते थे कि वह एक विशाल जुलूस के साथ चले जा रहे हैं – "मुझे लगता है कि मैं एक विशाल जुलूस के साथ चल रहा हूँ। अविराम।"[2] और यह जुलूस रेणु से नेतृत्व की मांग कर रहा था। रेणु की आशाओं के अनुरूप संविद सरकार भी कार्य नहीं कर सकी। "कांग्रेसी सरकार ने यदि बुद्धि का अकाल पैदा किया था, तो संयुक्त सरकार ने मति भ्रम पैदा किया।"[3]

रेणु को इससे गहरी पीड़ा हुई और वे पुनः राजनीति के क्षेत्र में कूदने के लिए बाध्य हो गए। रेणु ने स्वयं स्वीकार किया कि "इस भीड़ से अलग होने की सामर्थ्य मुझमें नहीं।"[4]

तत्कालीन परिस्थितियों ने और मुसहरी से भेजे गए जयप्रकाश नारायण के पत्र ने एक बार पुनः रेणु को राजनीति के क्षेत्र में उतार दिया। रेणु ने 1972 के विधान सभा क्षेत्र का चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। इस विषय पर रेणु ने कहा था कि "मैं चुनाव लड़ रहा हूँ – अपने क्षेत्र के साधारण जन के सुख–दुख में सक्रिय रूप से हाथ बंटाने के लिए। अपने लोगों की समस्याओं को मुक्त कण्ठ से प्रस्तुत करने के लिए। सिर्फ वकालत करने के लिए नहीं अपने क्षेत्र के विषाक्त किए गए सामाजिक सांस्कृतिक जीवन को फिर से निरामय

---

1. 20.04.1967, को नरेन्द्र के नाम पटना से लिखित पत्र, सुनाम कुमार, पृ. 113.
2. जुलूस की भूमिका
3. रेणु संस्मरण और श्रद्धांजलि रेणु और उनका परिदृश्य
4. जूलूस की भूमिका

विशुद्ध करने के लिए और अपने क्षेत्र की नई पीढ़ी को फिर से निरामय विशुद्ध करने के लिए और अपने क्षेत्र को नई पीढ़ी नई पौध, नई फसल की निगरानी करने के लिए।"[1]

रेणु अनेक दलों के आमंत्रण अनुरोध को खारिज करते हुए निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में चुनाव लड़े। 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' आदि उपन्यासों के जीते–जागते पात्र के माध्यम से रेणु चुनाव प्रचार में लग गए। लेकिन रेणु को कुत्सित राजनीति में महारत न होने के कारण चुनाव में पराजित होना पड़ा लेकिन अन्दर से वे कभी हार नहीं माने – "फिर भी तुम विस्थापित नहीं गाँव के लोग तुमको न पहचानें। गाँव की मिट्टी, अपनी जन्मभूमि का पानी तो तुमको प्राप्त है। जहाँ तुम खेले–कूदे–बढ़े।"[2] रेणु अपने मन में इस बात को ध्यान में रखे थे कि जहाँ के लोगों ने उन्हें इतना कुछ दिया क्या उन्हें एक वोट नहीं देंगे, लेकिन इसके विपरीत बात निकली। रेणु जो अपने ही अंचल में पराजित हुए। चुनाव परिणाम ने रेणु की आकांक्षाओ और आशाओं पर पानी फेर दिया। कर्ज भी उनके ऊपर लद गया और उनके मन पर आघात भी लगा। रेणु से जब सवाल किया गया कि अब आप क्या करेंगे तो रेणु ने जवाब दिया था कि चुनाव में हारने वाला व्यक्ति अपनी बीबी तक की निगाह में गिर जाता है। रेणु ने चुनाव के संस्मरण लिखने की कोशिश की, लेकिन लिखने में सफल नहीं हो पाए "अगर कुछ थामना है, तो दो ही चीजें थाम सकते हैं – या तो बन्दूक या कलेजा।"[3] रेणु बन्दूक तो नहीं थाम पाए हाँ कलेजा अवश्य थामकर बैठ गए, उस दिन के इन्तजार में जब जनता के मन में चेतना आयेगी।

लोकनायक जयप्रकाश ने जब सम्पूर्ण क्रान्ति का आह्वान किया तो रेणु ने बढ़ चढ़कर भाग लिया। रेणु का उस समय स्वास्थ्य ठीक नहीं था फिर भी वे जनता के लिए जेल जाने से नहीं हिचके। रेणु को पूर्णिया के जेल में बन्दी बनाया गया। पूर्णिया का यह वही जेल था जहाँ रेणु को 1942 आन्दोलन के समय बन्दी बनाया गया था। किन्तु स्वतंत्र भारत की इस जेल के परिवर्तित वर्तमान स्वरूप को देखकर रेणु हतप्रभ हो गए। लोकनायक जयप्रकाश के नाम पूर्णिया जेल से 12.8.74 को लिखे गए पत्र में रेणु ने जेल को मौजूदा भारत का असली चित्र कहा, "गुलाम भारत के जेल और स्वतंत्र भारत की जेल में काफी

---

1. चुनाव के समय पत्रकार श्री जुगनू शारदेप को दिया गया साक्षात्कार, दिनमान, 27 फरवरी 1972, पृ. 26.
2. परती–परिकथा, रेणु, पृ. 350.
3. रेणु का हिन्दुस्तान, साप्ताहिक रविवार, 28 अगस्त से 3 सितम्बर, 1977, पृ. 12.

अंतर है। सचमुच पूर्णिया जेल मौजूदा भारत का असली नमूना है, जिसमें आदमी भी जानवर बन जाए एक हजार एक सो बारह कैदियों में शायद एक भी व्यक्ति स्वस्थ नहीं है। शायद नर्क ऐसा ही होगा – 1942 और 1974 में इतना अन्तर।"[1] रेणु की बीमारी धीरे–धीरे और बढ़ने लगी जिससे उनका स्वास्थ्य और गिर गया। जयप्रकाश ने रेणु को जमानत पर रिहा होने का अनुरोध किया लेकिन वे ऐसा नहीं किए। "उनके स्वास्थ्य को सामने रखकर मैंने उनसे अनुरोध किया था कि वे जमानत पर रिहा हो जाएँ। लेकिन वे जमानत पर रिहा नहीं हुए।"[2] रेणु जेल से रिहा होने के बाद भी जयप्रकाश द्वारा चलाए जा रहे सम्पूर्ण क्रान्ति में बराबर हिस्सा लेते रहें जयप्रकाश नारायण द्वारा निकाले गए मौन जुलूस में मुँह पर केसरिया पट्टी बांधकर बीमारी की अवस्था में रेणु दोपहर में मीलों पैदल चला करते थे। रेणु ने जगह–जगह पर साहित्यिक गोष्ठियां एवं नुक्कड़ सभाएँ भी की। रेणु इस आन्दोलन के बारे में कहते हैं कि "यह आन्दोलन नहीं है, यह क्रान्ति नहीं है, यह उससे ज्यादा बड़ी चीज है।"[3]

सम्पूर्णक्रान्ति के दौरान ही आपातकाल की घोषणा की गई। जयप्रकाश के समर्थकों को पकड़कर जेल में डाल दिया गया। कुछ लोगों ने जयप्रकाश का साथ छोड़ दिया लेकिन रेणु अन्त तक इनके साथ थे। रेणु के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता थी कि वह किसी भी कार्य को महज किसी की प्रेरणा अनुकरण या प्रोत्साहन से नहीं करते थे, अन्तर्मन की आवाज़ से करते थे, "मैंने आजादी की लड़ाई आज के भारत के लिए नहीं लड़ी थी। अन्याय और भ्रष्टाचार अब तक मेरे लेखन का विषय रहा है और मैं सपने में देखता रहा हूँ कि यह कब खत्म हो। अपने सपनों को साकार करने के लिए जनसंघर्ष में सक्रिय हो गया हूँ।"[4] रेणु किसी भी कार्य को बड़ी ईमानदारी और निष्ठा से करते थे। रेणु किसी भी कार्य की शुरुआत करके बीच में नहीं छोड़ते थे बल्कि उसका अन्त करके छोड़ते थे। रेणु ने आपात काल के दौरान अपनी 'पद्मश्री' और बिहार सरकार द्वारा देय 300 रु. की मासिक सहयोग राशि को राष्ट्रपति एवं राज्यपाल को पृथक–पृथक पत्र प्रेषित कर आन्दोलन की भेंट चढ़ा दिए। "मुझे लगता है कि पद्मश्री का सम्मान अब मेरे लिए पापश्री बन गया है। साभार यह सम्मान वापिस करता हूँ।"[5]

---

1. रेणु स्मृति अंक, सारिका, 1 से 15 अप्रैल 1979, पृ. 12.
2. रेणु सांस्कृतिक क्रान्ति के अग्रदूत, माधुरी, 6 से 19 मई, 1977, पृ. 5
3. रेणु संस्मरण और श्रद्धांजलि, रेणु और बिहार आन्दोलन, डॉ. शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पृ. 97.
4. दिनमान, 28 अप्रैल, 1974, पृ. 21.
5. भारतीय राष्ट्रपति के नाम लिखित रेणु के पत्र का अंश, वार्ता, 9 दिसंबर, 1974, पृ. 18.

इसी प्रकार रेणु ने राज्यपाल महोदय को पत्र लिखकर इस बात को कहा "उस सरकार से जिसने जनता का विश्वास खो दिया है, जो जन आकांक्षा को राज्य की हिंसा के बल पर दबाने का प्रयास कर रही है, उससे किसी प्रकार की वृत्ति लेना मैं अपना अपमान समझता हूँ।"[1]

रेणु को जब आपातकाल के दौरान बन्दी बनाया गया तो कुछ समय के बाद उन्हें जमानत पर छोड़ दिया जायेगा ऐसा सरकार ने घोषणा की लेकिन रेणु ने इसे नामंजूर कर दिया। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि "मेरी गिरफ्तारी गलत ढंग से हुई है, सरकार को चाहिए कि वह अपनी गलती के लिए मुझसे क्षमा मांगे और बाइज्जत रिहा करे।"[2]

चुनाव की घोषणा और आपातकाल में छूट दिए जाने के समय तक रेणु की बीमारी काफी बढ़ चुकी थी। अपने स्वास्थ्य की चिन्ता न करते हुए जनता पार्टी का चुनाव प्रचार किया। पार्टी चुनाव तक रेणु अपने ऑपरेशन को टालते रहे। चुनाव परिणाम की घोषणा के साथ जिस दिन केन्द्र में नई सरकार के गठन की तैयारी हो रही थी उसी दिन रेणु के ऑपरेशन की तैयारी हो रही थी। रेणु का कार्य पूर्ण हो चुका था, उसका फल भोगने के लिए स्वयं कभी आस न की। रेणु अब तक काफी थक चुके थे उन्हें चिर विश्राम की आवश्यकता थीं 11 अप्रैल 1977 को बहुमुख प्रतिभा के धनी और आँचलिक कथा के जनक फणीश्वरनाथ रेणु इस दुनिया से विदा हो गए।

TH-1587

रेणु राजनीति में यथार्थ और आदर्श की समन्वित दृष्टि को ही सही मानते थे। रेणु की राजनीतिक विचारधारा में धर्म और जाति के संकीर्ण आग्रहों का कोई स्थान नहीं था। पार्टियों की राजनीति से उनके दुराव का एक कारण यह भी था कि वे धर्म और जाति के खानों में बंटी हुई राजनीति को स्वीकार नहीं कर पाते थे। रेणु हमेशा विकृतियों से लड़ते रहे। रेणु ने मानवीय संवेदना को राजनीति का मुख्य आधार माना एवं उसके प्रति प्रतिबद्ध रहे। अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने अपनी राजनीतिक चेतना को निर्मित किया जिसमें जाति, धर्म, प्रान्त, हिंसा, भ्रष्टाचार, धन का प्रभुत्व जैसी संकीर्णताओं का विरोध किया तथा समानता, न्याय और विकास जैसी विस्तृत उद्देश्यों वाली राजनीति के पक्षधर थे।

---

4. बिहार के राज्यपाल के नाम लिखित रेणु के पत्र का अंश, वार्ता, 9 दिसंबर, 1974, पृ. 18.
5. रेणु स्मृति अंक, सारिका, 1 से 15 अप्रैल, 1979, पृ. 24

दूसरा अध्याय
'मैला आँचल' में राजनीतिक दृष्टि

रेणु प्रतिभासम्पन्न लेखक थे। उन्होंने राजनीति को बहुत बारीकी से परखा था। साहित्य क्षेत्र में आने से पूर्व वे एक अनुभव सम्पन्न राजनीतिज्ञ थे। रेणु ने कभी भी राजनीति से विरोध नहीं किया। वे अगर प्रत्यक्ष रूप से राजनीति में भाग नहीं लेते तो लेखन के माध्यम से उससे जुड़े रहे। रेणु ने राजनीतिक विचारधारा के लिए कभी कोई अलग से पुस्तक नहीं लिखी, लेकिन उनकी रचनाओं में राजनीति का दर्शन किसी न किसी रूप में आ ही जाता है।

रेणु ने 'मैला आँचल' में अँचल के सभी सुख दुख, दुःख–दर्द को दिखाया। इसमें भारतीय राजनीति के पक्ष को भी प्रदर्शित किया गया था। 'मैला आँचल' पर विचार करते हुए आलोचक नेमिचन्द्र जैन ने राजनीतिक विचारधारा और साहित्य के संबंधों पर विचार किया है। नेमिचन्द्र जैन आधुनिक समय में राजनीति और उनके विश्वासों, आन्दोलनों की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हैं। राजनीतिक विचारधारा जीवन का अनिवार्य अंग है, सम्पूर्ण जीवन नहीं। जीवन सत्य राजनीतिक विश्वासों से आगे माना जाता है और उससे वृहत्तर होता है। नेमिचन्द्र जैन ने 'मैला आँचल' की समीक्षा इस कसौटी पर करते हुए लिखा है कि "राजनीतिक विचारधाराओं के प्रभाव में लिखे गए हिन्दी के उपन्यासों में प्रायः जीवन की विविधता और व्यापक संवेदनशीलता के स्थान पर केवल बौद्धिक शब्दजाल को प्रश्रय मिलता रहा है। इसमें बहुरूपी बल्कि परस्पर विरोधी जीवन्त तत्वों से निर्मित सक्रिय इन्सानों के स्थान पर विकलांग और कठपुतलियों जैसे – चरित्रों की भरमार रही है। 'मैला आँचल' में उस परिस्थिति को काट कर सजीव इन्सानों की सृष्टि का शुभ और बहुत कुछ सफल प्रयत्न है। मैला आँचल में राजनीति जीवन की पृष्ठभूमि के रूप में ही है जो पात्रों के व्यक्तित्व को और भी उभारती है, चारों ओर से घेरकर उनका गला नहीं घोंटती।"[1]

रेणु के यहाँ राजनीति व्यक्ति और समाज के अधिकारों की स्थापना और उसकी अन्तर्निहित संभावनाओं की तलाश का माध्यम है। इसी उद्देश्य से 'मैला आँचल' में राजनीतिक दलों के भ्रष्टाचार मूल्यहीनता एवं दिशाहीनता को दिखाते हुए, आम जनता जिनमें मेरीगंज के संथाल भी शामिल हैं, रेणु ने इस बात को इस उपन्यास में दिखाया है कि वर्चस्ववादी लोग किस प्रकार राजनीति का गलत रूप से प्रयोग करते हैं।

---

1. विवेक के रंग – सं. देवीशंकर अवस्थी में संकलित, हिन्दी उपन्यास की एक नई दिशा, नेमिचन्द जैन, पृ. 163

I. स्वतंत्रता पूर्व भारतीय राजनीति

रेणु ने स्वाधीनता आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया था। स्वाधीनता आन्दोलन के समय राजनीति का बहुत व्यापक रूप से प्रयोग होता था। स्वाधीनता की चेतना से लगाव के कारण रेणु के साहित्य में स्वाधीनता आन्दोलन की स्मृतियाँ, आदर्श एवं मूल्यों की छाया देखी जा सकती है। रेणु ने स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान घटित घटनाओं का सजीव चित्रण किया है।

रेणु 'मैला आँचल' के शुरुआत में ही सुराजी बालदेव का वर्णन करते हैं, जो 'खद्दड़' पहनता है तथा 'जै हिन्न' बोलता है। बालदेव ने दो साल की जेल की सजा पायी थी। बालदेव कांग्रेसी कार्यकर्त्ता है। वह गाँव का सीधा–सादा पार्टी का कार्यकर्त्ता है, जिसमें स्वाधीनता की चेतना मौजूद है, लेकिन वह सिद्धान्तों को सही रूप से नहीं समझ पाता है। बालदेव गाँधीवादी मूल्यों का सही प्रयोग नहीं जानता है और थोड़ी–थोड़ी बातों पर अनशन करने की बात करता है। उसमें चालाकियों का अभाव है, कई बार बेवकूफी भरे काम भी करता है। बाद में बालदेव के अन्दर कुछ दुर्गुण भी आ गया था, लेकिन आजादी की लड़ाई में निष्ठावान सैनिक की भाँति वह पिकेटिंग करता है। बालदेव उपन्यास के महत्वपूर्ण पात्रों में है, क्योंकि इसके माध्यम से तत्कालीन समाज पर स्वाधीनता आन्दोलन के प्रभाव की जानकारी मिलती है। बालदेव गाँव में गाँधीजी के रास्ते की बात करता है और 'हिंसावाद' का विरोध करता है।

वह आंदोलन और अनशन जैसे राजनीतिक ध्वनि वाले शब्द को पूर्णिया जैसे सुदूर गाँव में पहुँचाता है। बालदेव के साथ ही साथ दो और व्यक्ति कांग्रेस में शामिल होते हैं, एक का नाम बावनदास है तथा दूसरे का चुन्नी गुसाई। ये लोग भी स्वाधीनता आन्दोलन से प्रभावित होकर कांग्रेस में शामिल हुए थें चुन्नी गुसाई के बारे में वर्णन करते हुए रेणु ने लिखा है कि "चंदन पट्टी में सभा देखने गया। तेवारी जी ने भाखन दिया और तनुकलाल ने गीत गाया। सभी रोने लगे। चुन्नीदास के मन का मैल भी आंसुओं की धारा में बह गया। उसी दिन सुराजी में नाम लिखा लिया। चर्खा–कर्घा झण्डा तिरंगा और खद्दर को छोड़कर सभी चीजें मिथ्या हैं। सुदेशी बनना। देशी बैकाठ –

अरे देसवा के सब धन विदेसवा में जाए रहे।
मंहगी पड़त हर साल कृसक अकुलाए रहे।

दुहाई गाधी बाबा। ... गाँधीबाबा अकेले क्या करें। देश के हर आदमी का कर्त्तव्य है।"[1] उस सभा में बावनदास भी उपस्थित था। बावनदास ने भी अपना नाम सुराजी में लिखता है। रेणु जी के लेखन की सबसे बड़ी विशेषता है कि अनेक पात्र सामान्य जन के बीच से आते हैं। रेणु इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि स्वाधीनता का प्रश्न तर्क से अधिक भावनाओं से जुड़ा है। तर्क पर चलने वाले नेतृत्व की वास्तविक शक्ति भावना से परिचालित जनता में ही निहित होती है। स्वाधीनता आन्दोलन के भावनात्मक प्रभावों को बावनदास एवं चुन्नी गुसाई के माध्यम से समझा जा सकता है। धन का दोहन अंग्रेजों द्वारा होता था, इस बात को दादाभाई नौरोजी ने बड़े वैज्ञानिक ढंग से उजागर किया था।

रेणु ने 'मैला आँचल' में राष्ट्रीय आन्दोलन की घटित घटनाओं का वर्णन किया है। वे राष्ट्रीय आन्दोलन की घटनाएं तथा उनसे संबंधित प्रमुख राजनीतिज्ञों का वर्णन बार–बार करते हैं। महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, राजेन्द्रप्रसाद, जयप्रकाश नारायण तथा मजहरुल हक जैसे राष्ट्रीय नेताओं की प्रेरणा तथा प्रभाव को कथानक में स्पष्ट रूप से दखा जा सकता है। बावनदास गाँधीवादी विचारधारा से बहुत प्रभावित होता है। रेणु बावनदास के बारे में लिखते हैं कि "क्या होगा यह सरीर रखकर ! चढ़ा दो गाँधीबाबा के चरण में भारथमाता की खातिर।

अरे देसवा के खातिर मजहरुलहक भइले फकीरवा से दी
भइले राजेंदर प्रसाद देसवासियों।"[2]

बावनदास को सभी प्रमुख राजनेता जानते हैं। बावनदास का गाँधीजी के साथ पत्र व्यवहार होता है। गाँधीजी उसे अनेक स्थानीय समस्याओं पर भी पत्र द्वारा राय प्रदान करते हैं। बावनदास अपने छोटे कद के बावजूद बड़े आदर्शों के साथ जीता है। 1942 ई. के भारत छोड़ो आन्दोलन के ग्रामीण अंचलों में प्रभाव को रेखांकित करते हुए रेणु ने लिखा है कि – "अगस्त 1942 । कचहरी पर चढ़ाई। धाय–धाय। पुलिस हवाई फायर करती है लोग भाग रहे हैं। बावनदास ललकारता है, जनता उलटकर देखती है। डेढ़ हाथ का इंसान सीना ताने खड़ा है। ... बवंई से आई आवाज। ... जनता लौटती है। बावनदास पुलिस वालों

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 137.
2. वही, पृ. 138

के पावों के बीच से घेरे के उस पार चला जाता है और विजयी तिरंगा शान से लहरा उठता है। महात्मा गाँधी की जय।"[1] भारतीय जनता की आँखों में गुलामी की जंजीर तोड़ने के सपने झलक रहे थे, लेकिन वह सही वक्त के इंतजार में थी। भारतीय जनता की इस आकांक्षा को रेणु ने बड़ी सजीवता के साथ वर्णन किया है। भारतीय जनता अंग्रेजों के विरुद्ध पूर्ण रूप से संगठित हो गई थी।

भारतीयों में अपनी आजादी की इच्छा दिनोंदिन बढ़ती गई। भारत की अधिकांश जनता गाँव में रहती है। गाँव के लोगों का जो आन्दोलन था उसकी गूंज गाँव की मिट्टी तक के महक में दिखाई पड़ती है। भारत के ग्रामीण तथा पिछड़े अंचलों में भी स्वाधीनता की आकांक्षा भर रही थी, इसे रेणु ने प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। स्वाधीनता आन्दोलन की चेतना सामान्य ग्रामीण जीवन संस्कृति के साथ घुल–मिल गई थी। यही कारण है कि होली के गीतों तक में सुराजी रंग मिल गया था –

"आई ने होरिया आई फिर से
आई रे
गावत गाँधी राममनोहर
चरखा चलावत बाबू राजेन्दर
गूजल भारत अमराई रे। होरिया आई फिर से।
वीर जमाहिर शान हमारो
वल्लभ है अभियान हमारो
जयप्रकाश जैसो भाई रे। होरिया आई फिर से।"[2]

इन लोकगीतों में भारतीय जनता की मुक्ति की आकांक्षा दिखाई देती है। स्वाधीनता आन्दोलन के समय अनेक मुद्दे उठाए गए थे, जिनमें विदेशी शासन की समाप्ति, जमींदारी प्रथा का अन्त किसानों को जमीन का मालिकाना हक, प्रतिनिधि चुनने का अधिकार आदि अनके विषयों से जनता जुड़ती है तथा उसके मन में भविष्य के लिए आशाएं जगती हैं।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 139.
2. वही, पृ. 134.

भारत की राजनीतिक जिन्दगी में कांग्रेस का ही चरित्र उज्ज्वल नहीं है बल्कि अन्य दलों का भी चरित्र उज्ज्वल है। लेकिन आजादी के बाद इनके चरित्र में बदलाव आता है। स्वतंत्रता के पूर्व भारतीय जनता में परतंत्रता का विरोध, पूँजीवाद व सामन्तवाद की निन्दा, साम्प्रदायिक मनोवृत्ति के प्रति कटाक्ष तथा स्वतंत्रता की छटपटाहट व्याप्त थी। राष्ट्र की स्वतंत्रता के इस संघर्ष काल में व्यक्ति व समाज में त्याग तप, सेवा, सत्य व अहिंसा आदि का महत्व था, और सत्याग्रह विदेशी वायकाट, शराबबन्दी तथा स्वदेश व स्वराज्य के प्रति श्रद्धा थी। चारित्रिक मूल्यों की कद्र थी। देश की राजनीति के प्रति आदर था, नेतृत्व के प्रति निष्ठा थी। जनता के मन में देशभक्ति का गौरव व स्वाभिमान था। स्वातंत्र्योत्तर भारत की जनता में विभाजन की विभीषिका, बापू की हत्या, आदि से एक भिन्न स्थिति पैदा हुई। राजनीतिक सिद्धान्तों और नीतियों का बोलबाला अब क्रमशः कम होने लगा। पदलोलुपता पनपने लगी। मूलगत निष्ठा नष्ट हुई। आदर्श, सच्चाई, इमानदारी एवं नैतिकता आदि का क्रमशः लोप हुआ। 'अहं' व स्वार्थ उभरने लगे। नेताशाही छत्र और चंवर को प्राप्त करके पूँजी को पूजने लगे। अवसरवादिता सिर चढ़कर बोलने लगी।

रेणु ने मैला आँचल के माध्यम से दिखाया है कि आजादी के बाद के व्यक्ति मूल्य पार्टी के मूल्य से बंधे थे। उनमें देशभक्ति की भावना, सदाचारिता की भावना एवं मानवतावादी भावना का सम्मिश्रण था लेकिन आजादी मिलने के तुरन्त बाद बावनदास जैसे गाँधीवादी विचारधारा के समर्थकों की हत्या करा दी जाती है। यह भारत के लिए दुर्भाग्य की बात थी जिसे रेणु ने बड़ी गहराई से समझा और अपने उपन्यास में चित्रित किया है, जो रेणु की राजनैतिक दृष्टि एवं समझ का परिचय देता है।

II. स्वतंत्र्योत्तर भारत में राजनीति का बदलता हुआ स्वरूप

रेणु ने 'मैला आँचल' में भारत की स्वाधीनता के पहले और बाद में होने वाले परिवर्तनों पर प्रकाश डाला है। रेणु ने इस बात को बहुत अच्छी तरह से देखा था कि राजनीतिक पार्टियों ने जिन मूल्यों के प्रति आजादी से पूर्व पूर्ण निष्ठा प्रकट की थी, वह आजादी के बाद कायम नहीं रह पाई। रेणु साहित्य के क्षेत्र में आने के पहले सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्त्ता थे इसलिए राजनीति के बारे में उन्हें बहुत बारीकी से पता था। रेणु ने अध्ययन छोड़कर राजनीति में प्रवेश किया था, ताकि ईमानदार प्रतिबद्ध और नैतिक राजनीति के द्वारा उद्देश्य प्राप्ति के लिए संघर्ष किया जा सके।

रेणु का उद्देश्य था कि समाज और उसमे शासन करने वाले लोगों की दृष्टि आम लोगों के हित मे हों अपने उद्देश्यों के प्रति 'मैला आँचल' के कालीचरण की भांति आस्थावान रहने के बावजूद रेणु राजनीति में बहुत दूर तक नहीं चल सके, "जब कोई आदमी राजनीति और साहित्य दोनों क्षेत्रों में समान रूप से काम कर सकता हो और अचानक उसे फैसला करना पड़ जाए कि दोनों में से किसे चुने तो साहित्य को चुनने वाला व्यक्ति बुद्धिमान होता है।"[1] इस बात के साथ ही रेणु ने राजनीति से निकल कर साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश किया। रेणु का यह निर्णय वास्तव में एक उचित निर्णय था। ऐसी बात नहीं है कि रेणु साहित्य की दुनिया में आ जाने के बाद राजनीति से एकदम विरक्ति ले लिए हों। रेणु ने साहित्यिक लेखन के माध्यम से राजनीति के बनते–बिगड़ते स्वरूप को भी बड़े सजीव ढंग से चित्रित किया है। रेणु ने इस बात को बड़े यथार्थ ढंग से देखा था कि जो लोग आजादी के पहले पार्टी विचारधारा से बंधे थे उन्हीं लोगों को बाद में पार्टी के हाशिए पर रख दिया जाता है। पार्टी में ऐसे लोगों का वर्चस्व हो गया, जिनका समाज और देश से कुछ लेना देना नहीं, सिवाय अपने स्वार्थ के अलावा।

रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि स्वाधीनता आन्दोलन के समय राष्ट्रीय राजनीति में हो रही हलचलें महात्मा गाँधी का आम जनता पर प्रभाव तथा जनता की उनके नेतृत्व में आस्था, कांग्रेस तथा अन्य राष्ट्रीय दलों द्वारा स्वाधीनता प्राप्ति के लिए किए जाने वाले प्रयास आन्दोलन में आम जनता की भागीदारी, सामाजिक–सांस्कृतिक मुद्दों को राजनीति के समक्ष लाने के प्रयास और सिद्धान्त तथा मूल्यों की राजनीति आदि का रेणु ने

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 244.

समावेश किया। स्वाधीनता के बाद किस प्रकार अवसरवादी सत्ता की राजनीति, जातिवाद, सम्प्रदायवाद का उदय, प्रान्तीयता की भावना एवं स्वार्थ की राजनीति हावी होने लगी है।

रेणु ने 'मैला आँचल' में ग्रामीण राजनीति तथा उसपर प्रभाव डालने वाली राष्ट्रीय राजनीति में हो रहे बदलाव का अध्ययन किया है। कांग्रेस, सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट तथा संघ की राजनीतिक गतिविधियों तथा विचार एवं व्यवहार के संबंधों को उन्होंने वर्णित एवं विश्लेषित किया है। कांग्रेस का काम करने वाले पार्टी कार्यकर्त्ताओं की जहाँ स्वतंत्रता के पूर्व इज्जत थी, लेकिन आजादी के बाद कांग्रेस पार्टी में तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद, दुलारचन्द कापरा जैसे दलालों का बोल–बाला हो गया। रेणु ने लिखा है कि "कटहा के दुलारचन्द कापरा, वही जुआ कंपनी वाला, जिसकी जुए की दुकान पर नेवीलाल, भोलाबाबू और बावन के फारविसगंज मेला में पिकेटिंग किया था। जुआ भी नहीं एकदम पॉकिट काट खेला करता था और मोरंगिया लड़कियों मोरंकिया दारू गांजा का कारबार करता था। ... आज कटहा थाना कांग्रेस का सिकरेटरी है।"[1] अब कांग्रेस पार्टी में इसी तरह के लोग स्थान पा रहे तथा सत्य और देशभक्ति के मार्ग पर चलने वाले लोगों को पार्टी के हाशिए पर कर दिया जा रहा है। रेणु ने इस बात को बड़े सजीव रूप से वर्णित किया है कि गाँव में बालदेव ने कांग्रेस पार्टी को खड़ा किया, लेकिन जिला कमेटी के सदस्य बने तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद। इतना ही नहीं उन्हें कपड़ा बाँटने का कार्य मिला क्योंकि 'चार सौ टकिया' मेम्बर बने, चवन्निया मेम्बर नहीं। इस प्रकार रेणु देखते हैं कि पार्टी के अन्दर धन का बोलबाला किस तरह बढ़ता जाता है विचारधारा का धीरे–धीरे अन्त होता जा रहा है। रेणु लिखते हैं "जिला कांग्रेस ऑफिस में जुलुम हो रहा है। जिला कांग्रेस के सभापति का चुनाव होने वाला है। चार उम्मीदवार हैं, दो असल और दो कम असल। राजपूत और भूमिहार में मुकाबिला है। जिले भर के सेठों और जमींदारों की लारियां दौड़ रही हैं। एक–दूसरे के गड़े–मुर्दे उखाड़े जा रहे हैं। ... पैसे का तमाशा कोई यहां आकर देखें।"

रेणु ने बड़े तटस्थ ढंग से राजनीतिक पार्टियों के नैतिक और सैद्धांतिक खोखलेपन का चित्रण किया है। रेणु कांग्रेसी नेताओं को ही नहीं, सोशलिस्ट नेताओं को भी लक्ष्यच्युत, दिशाहीन नैतिक मूल्यों से शून्य पात्रों के रूप में प्रस्तुत करते हैं। सोशलिस्ट पार्टी में पहले जयप्रकाश नारायण, राममनोहर लोहिया, आचार्य नरेन्द्रदेव, अच्युतपटवर्धन, यूसुफ मेहरअली जैसे नेता थे पर जिला स्तर पर ऐसे नेताओं का अभाव था। 'मैला आँचल'

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 291.

में सोशलिस्ट नेता के रूप में कृष्णकान्त मिश्र, गंगाप्रसाद यादव 'सैनिक जी' चिनगारी जी, धरमपुरी जी, राजबली जी आदि के चरित्र सामने आते हैं। कृष्णकान्त मिश्र जी सोशलिस्ट पार्टी के जिला सेक्रेटरी हैं जो मूल्यहीन राजनीति करते हैं। सोशलिस्ट पार्टी जातिवाद को आधार बनाते हैं। वे कामरेड गंगाप्रसाद सिंह यादव को मेरीगंज इस कारण भेजा जाता है क्योंकि वहाँ यादवों की संख्या अधिक है। सोशलिस्ट पार्टी, अपराध, धन और हथियार संग्रह के अवैध तरीकों का इस्तेमाल करने में पीछे नहीं है। लेकिन जब ऐसे ही सदस्यों के कारण कालीचरण जैसा ईमानदार कार्यकर्त्ता ऐसे संकटों में फँस गया तो ऐसे पार्टी वालों ने आश्रय नहीं दिया और उसे पार्टी से भी निकाल दिया।

मेरीगंज में सोशलिस्ट पार्टी की शाखा खुल जाती है। कालीचरन जैसे उत्साही लोग पार्टी में शामिल होते हैं। मेरीगंज में किसान सभा होती है, जिसमें विशेषकर गाँव के निचले स्तर के लोग शामिल होते हैं सभा का प्रमुख नारा है – जमीन जोतने वालों की। सोशलिस्ट नेता – साथी गंगाप्रसाद सिंह यादव सैनिक जी जोशीला भाषण देते हैं – "यह जो लाल झण्डा है – आपका झंडा है, अवाम का झंडा है, इनकलाब का झंडा है, इसकी लाली उगते हुए आफ़ताब की लाली है, यह खुद आफ़ताब है। इसकी लाली, इसका लाल रंग क्या है ? रंग नहीं, यह गरीबों, महरूम, मजलूमों, मजबूरों, मजदूरों के खून में रंगा हुआ झंडा है।"[1] इस भाषण में तथ्य सत्य कम लफ्फाजी अधिक है। ऐसा भाषण देकर निचली जाति के लोगों को पार्टी में शामिल करने की एक चाल है। जनता ऐसे नेताओं के शब्दजाल में फंस जाती है। आज भी सभी राजनीतिक दलों की इसी तरह की लफ्फाजी वाला भाषण होता है। केवल लोग अपने स्वार्थों के लिए आम जनता का प्रयोग करते हैं। इस भाषण में 'सैनिकजी' समाजवादी सिद्धान्तों की दुहाई देते हैं पर उनके घर में ठीक वही सामन्ती वातावरण है, जो किसी बुर्जुआ कांग्रेसी नेता के घर में होता है। चिनगारी जी सोशलिस्ट पाटी के मुखपत्र 'लालपताका' के संपादक हैं, लेकिन उनका चरित्र किसी गम्भीर सम्पादक के लायक नहीं है। राजबल्लीजी के व्यक्तित्व का हल्कापन उनकी समाजवादी पिष्टोक्तियों या ठप्पों से भरे कथनों से प्रकट होता है। इस प्रकार स्थानीय स्तर पर कोई ऐसा नेता नहीं है जो पार्टी की विचारधारा के अनुसार कार्य करे। सोशलिस्ट पार्टी के बारे में बावनदास क्या कहता है, "सोसलिस ? सोसलिस ? क्या कहेगा हमको ? ... सब पार्टी समान। उस पार्टी में भी जितने बड़े लोग हैं, मंतरी बनने के लिए मार कर रहे हैं। सब मेरे

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 109.

मंतरी होना चाहते हैं बालदेव ! देस का काम, गरीबों का काम, चाह मजूरो का काम, जो भी करते हैं, एक ही लोभ से। ... उस पार्टी में से एक जैपरगास बाबू हैं।"[1]

सोशलिस्ट पार्टी आजादी के बाद गाँवों में किस प्रकार प्रवेश करती है, रेणु ने इसका यथातथ्य वर्णन किया है। वे दिखाते हैं कि किस प्रकार सोशलिस्ट पार्टी के जिला कमेटी के मेम्बर गाँव के लोगों को अपनी पार्टी की ओर आकर्षित करते हैं। कालीचरण उन्हीं आकर्षित लोगों का ही भाग है। वह मेरीगंज में सोशलिस्ट पार्टी की एक सभा का आयोजन करता है, जिसमें जिला स्तर के एक बड़े नेता का भाषण होता है। सभा स्थल पर ही सोशलिस्ट पार्टी के तीन सौ सदस्य बन जाते हैं। संथाल टोला का हर आदमी पार्टी का सदस्य बन जाता है। राजपूत टोली का एक भी आदमी इस सभा में नहीं आता है। इस सभा से कालीचरण की स्थिति काफी मजबूत हो जाती है, जिससे यादव टोला के मुखिया खेलावनसिंह यादव को चिंता होती है, "कालीचरण यादव कुल कलंक है। बूढ़ा कुकरू बुढ़ापे तक खेलावन का बैल चराता था और उसका बेटा लीडर हो गया। सुशिलेश लीडर। इसको काबू में रखने का कोई हथियार भी नहीं।"[2]

मेरीगंज में धीरे–धीरे सोशलिस्ट पार्टी की स्थिति ठीक होती जा रही है। कालीचरण बड़ी मेहनत से पार्टी के कार्यों में लगा रहता है। वह अपनी पार्टी को सच्ची लगन से प्यार करता है। महंत रामदास के शब्दों 'लाल झंडा और सुशलिस्ट पार्टी को वह औरत की तरह प्यार करता है।' कालीचरण और उसके साथ लोगों ने कांग्रेस की बुराईयों को उजागर करने में लगे हैं – "कांग्रेस तो खिचड़ी पार्टी है। इसमें जमींदार हैं, सेठ लोग हैं और पासंग मारने के लिए थोड़ा किसान मजदूरों को भी मेंबर बना लिया जाता है। गरीबों को एक ही रंग के झंडेवाली पार्टी में रहना चाहिए।"[3]

भूमि स्वामित्व के प्रश्न पर सोशलिस्ट पार्टी और कांग्रेस पार्टी के विचार अलग–अलग हैं। कांग्रेस पार्टी में आजादी के बाद बहुत सारे जमींदार, पूंजीपति और उद्योगपति शामिल हो गए। ये लोग कभी भी नहीं चाहते थे कि भूमि का अधिकार किसानों को मिले। अगर किसानों को भूमि का अधिकार मिल जाएगा तो इनकी वर्चस्ववादी सत्ता का

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ.
2. वही, पृ. 110
3. वही, पृ. 127.

पतन हो जाएगा। अतः ये लोग यथास्थिति को बनाए रखना चाहते हैं। रेणु ने इस बात को 'मैला आँचल' में तहसीलदार विश्वनाथ के रूप में दिखाया है। जमींदार इत्यादि लोग दफा–42 की आड़ में भूमि संघर्ष से बचने की कोशिश करते हैं, और किसानों को झांसे में लेने में सफल हो जाते हैं, लेकिन कालीचरण सच्चाई को सही रूप से जानता है।

किसानों की दफा–40 की अर्जियाँ नामंजूर हो जाने पर नए तहसीलदार के मैनेजर के निर्देश पर किसानों की जमीन बंदोबस्ती का ऐलान कर देता है। कालीचरण इसके खिलाफ संघर्ष शुरू कर देता है। ज़मींदारी बन्दोबस्त के कारण राजनीतिक पार्टियों के जो स्वार्थ उभर कर सामने आते हैं उसे रेणु ने बखूबी चित्रित किया है।

कालीचरण को सोशलिस्टपार्टी के जिला मेम्बर इस बात का सुझाव देते हैं कि वह सोमाजाट और चलित्तर कर्मकार जैसे अपराध में लिप्त लोगों से हथियार और धन के लिए सम्पर्क करे। कालीचरण के माध्यम से सोशलिस्ट पार्टी को नेता अपराध कर्म में लिप्त होने के लिए बाध्य कराते हैं। इन नेताओं का उद्देश्य है जमींदारों से सशस्त्र संघर्ष के लिए पार्टी को मजबूत बनाना, लेकिन होता है इसके ठीक विपरीत। कालीचरन के साथी वासुदेव, सुंदर, जगदेवा, सोनमा इत्यादि सोमाजाट के सम्पर्क में आकर डकैत बन जाते हैं। इतना ही नहीं इन लोगों को पुलिस द्वारा गिरफ्तार भी कर लिया जाता है। कालीचरण को भी वासुदेव के बयान के कारण पुलिस गिरफ्तार कर लेती है, लेकिन वह वहाँ से फरार हो जाता है। यहीं पर कालीचरण से कुछ गलती हो जाती है, इस पर टिप्पणी करते हुए गोपालराय ने ठीक ही लिखा है कि "यहीं पर कालीचरण से गलती हो जाती है। यह निर्णय की भूल या 'हमर्शिया' है जो प्रत्येक ट्रैजेडी के मूल में होती है।"[1] कालीचरण हमेशा इस बात को ध्यान में रखता है कि उसके कारण पार्टी की बदनामी न हो इसलिए जेल से भागने के बाद जेल की बदनामी से कम और पार्टी की बदनामी से अधिक डरता है। इतना ही नहीं कालीचरण ने जिस पार्टी के लिए इतना कुछ किया, उसी पार्टी के जिला पार्टी मेम्बर ने सहायता करने को कौन कहे, पहचानने से भी इंकार कर दिया। इस पर टिप्पणी करते हुए गोपाल राय ने लिखा है – "यदि कालीचरन सोश्यालिस्ट पार्टी के नेताओं पर विश्वास न करके पहले ही दिन पुलिस के सामने हाजिर हो जाता तो संभवतः उसकी निर्दोषता प्रमाणित हो जाती। पर अपने नेताओं की नीयत हौर चरित्र पर उसका अखण्ड विश्वास है।"[1]

---

1. उपन्यासकार रेणु और मैला आँचल – गोपालराय, पृ. 99.

वह समझता था कि उसकी बात सुनकर पार्टी नेता विश्वास करके उसकी सहायता करेंगे, लेकिन वास्तव में ऐसा कुछ नहीं हुआ।

कांग्रेस पार्टी की तरह सोशलिस्ट पार्टी का पतन आजादी के बाद शुरू हो गया। जहाँ कांग्रेस में पूँजीपति और जमींदार घुसते जा रहे थे। वहीं पर सोशलिस्ट पार्टी में डकैतों एवं हत्यारों को प्रश्रय मिलने लगा था। सोशलिस्ट पार्टी के नेताओं को विश्वास था कि वे अपराधियों के सहयोग से जमींदारों से मुकाबला कर सकते हैं। इतना ही नहीं सोशलिस्ट पार्टी के नेताओं की पहचान अब उनके विचारधारा से नहीं, बल्कि उनकी वेशभूषा से होने लगी। यहाँ विचारधारा हाशिए पर पहुँच गयी और व्यक्तिगत स्वार्थ केन्द्र में आ गया। सोशलिस्ट पार्टी के नेताओं के ऊपर व्यंग्य करते हुए रेणु ने लिखा है कि जगदेव पासमान, दुलारे और सुंदर सोशलिस्ट पार्टी के मेम्बर हैं और 'तड़बन्ना' में राजनीति की व्याख्या करते हैं और सुंदर पार्टी का पुराना मेम्बर है वह खद्दर का पंजाबी कुर्ता पहनता है। "रेणु ने सोशलिस्ट पार्टी के वेशभूषा पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं कि "पंजाबी के गले में दो इंच की ऊँची पट्टी लगी हुई है। इसको 'सोशलिस्ट काट' कुर्ता कहते हैं, सोशलिस्ट को छोड़कर और कोई नहीं पहन सकता। गाँव के मेंबरों में सिर्फ तीन ही मेंबर ऐसा कुर्ता पहनते हैं – काली, वासुदेव और सुंदर। बाकी मेंबरों ने जीवन में कभी गंजी भी नहीं पहनी है। लेकिन बिना सोशलिस्ट काट कुर्ता पहने कोई कैसे जानेगा कि सोशलिस्ट है, किरांती है। एक कुर्ते में सात रूपए खर्च होते हैं वासुदेव आजकल बीड़ी नहीं पीता, मोटरकार सिकरेट पीता है। सिक्रेटरी साहब सैनिक जी, चिनगारी जी, मास्टर साहब सभी बड़े–बड़े लीडर सिकरेट पीते हैं। सोशलिस्ट पार्टी के मेंबर को बीड़ी नहीं सिकरेट पीना चाहिए।"[2] कहने का मतलब है कि जिस सोशलिस्ट पार्टी का गठन किसानों एवं मजदूरों को अधिकार दिलाने के लिए हुआ था अब वह व्यक्तिगत हित एवं कामरेड कहलाने में खुश थी। ऐसे लोगों को पार्टी की विचारधारा और मूल्य से कोई लेना देना नहीं था।

कम्युनिस्ट पार्टी की 'मैला आँचल' में चर्चा बहुत कम होती है। एक जगह पर इस पार्टी द्वारा चलित्तर कर्मकार के बचाव में पर्चे बाँटते हुए चर्चा मिलती है। उस पर्चे में चलित्तर कर्मकार को मजदूरों एवं किसानों का 'प्यारा नेता' कहा गया है तथा उस पर से

---

1. उपन्यासकार रेणु और मैला आँचल – गोपालराय, पृ. 99.
2. मैला आँचल – रेणु, पृ. 170.

मुकद्दमा हटाने की मांग की गई है। चलित्तर कर्मकार की कहानी घर–घर में व्याप्त है। बच्चे जब रात में रोते हैं तो माताएं उसका नाम लेकर डराती हैं। सेठ साहूकार उसके नाम के आतंक से काँपते हैं। चलित्तर कर्मकार को आम जनता 'क्रांतिकारी' समझती है क्योंकि उसने सन् 1942 के आंदोलन में भाग लेने वाले के खिलाफ गवाही देने वाले सरकारी गवाहों को मार डाला था। वह गरीबों एवं मजदूरों को नहीं सताता है। केवल कम्युनिस्ट के नाम पर डॉ. प्रशान्त को गिरफ्तार कर लिया जाता है।

आजादी के बाद स्वयं सेवक संघ का प्रवेश गाँवों में किस प्रकार होता है, इसे रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है। हरगौरी मेरीगंज में इसकी एक शाखा खोलने के लिए 'संयोजक जी' को आमंत्रित करता है। राजपूत टोली के सभी लोगों को वह इसका सदस्य बनता है। इस पार्टी का मूल लक्ष्य है कि आर्यावर्त के कोने–कोने में हिन्दू राज की पताका फहरायी जाएगी। संयोजक राजपूत जाति के हैं। अतः वे हिन्दू समाज की बात करने के बावजूद जातिगत आधार पर मूर्खतापूर्ण टिप्पणी करते हैं "जिस तरह यह तहसीलदारी कायस्थों के हाथ से राजपूतों के हाथ में आई है, उसी तरह आर्यावर्त के कोने–कोने में राजकाज का भार हिन्दुओं के हाथ में आएगा। और उस दिन आर्यावर्त के कोने कोने में हिन्दू राज की पताका लहराएगी।"[1] संयोजक जी को जमीनी सिद्धान्तों को पता नहीं है। मेरीगंज में जमींदारी तो कायस्थों के हाथ में थी न कि किसी मुस्लिम के पास तो किस प्रकार हिन्दू राज्य स्थापित करेंगे क्या राजपूतों को जमींदारी मिल जाने से आर्यावर्त में हिन्दू राज्य स्थापित हो जाएगा। रेणु यह दिखाते हैं कि राजनीति महत्वाकांक्षा होने के बावजूद इस दल में राजनीतिक चेतना और समझ का अभाव है। एक जड़ मान्यता के कारण कोई भी पार्टी राजनीतिक जमीन नहीं बना सकती है।

आजादी के बाद राजनीतिक मूल्यों में जो गिरावट आयी है रेणु ने उसका बखूबी वर्णन किया है। राजनीतिक दलों तथा नेतृत्व की मूल्यहीनता एवं अवसरवादी मूल्यों को उन्होंने उजागर किया है। सभी दलों के प्रति वे अपना विरोध दर्ज करा चुके हैं रेणु ने दूरदर्शी दृष्टि से यह जान लिया था कि आने वाले समय में राजनीतिक दलों के मूल्यों में ह्रास के कारण राजनीति में विकृतियाँ निश्चित रूप से आ जाएंगी, इसलिए रेणु ने मानवीय मूल्यों का ह्रास करने वाली राजनीति का विरोध किया है।

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ.

III. धर्म और राजनीति का अन्तःसंबंध

प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल के शुरुआती दौर तक धर्म का सामाजिक मूल्यों के निर्धारण में महत्वपूर्ण स्थान रहा। लेकिन आधुनिक काल में धर्म का उतना महत्व नहीं रह गया है। समाज के लिए जो काम पहले धर्म करता था वह अब राजनीति करने लग गई। अविकसित समाज में धर्म के नाम पर पाखण्ड, आडम्बर, अंधविश्वास और व्यभिचार का प्रचार और प्रसार बहुत पुरानी परम्परा है। धर्म, चाहे वह किसी भी जाति और देश का हो, मूलतः मानवीयता के उदात्त आदर्शों का प्रवक्ता होता है, लेकिन जब धर्म कुछ निठल्ले, स्वार्थी और हीन प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों द्वारा एक धन्धे के रूप में अपना लिया गया है, तब उसकी उदात्त भावना का तिरोहण हो जाता है और उसकी आड़ में अनेक विसंगतियाँ पैदा होने लगती हैं। रेणु ने 'मैला आँचल' में महन्तों, सन्तों और ज्योतिषियों के चरित्र उद्‌घाटन द्वारा धर्म के इसी गर्हित स्वरूप का परिचय देना चाहा है। महंत सेवा दास, रामदास, लरसिंहा दास, बढ़े ज्योतिष, नागा बाबा – ये सभी चरित्र धार्मिक पाखण्ड के नमूने हैं।

मेरीगंज गाँव में धार्मिक पाखण्ड का केन्द्र मठ है। मठ से ही तमाम तरह की सामाजिक विसंगतियों का संचालन होता है। मठ में किस तरह की बुराईयाँ व्याप्त होती हैं, रेणु ने इसका बहुत यथार्थ ढंग से चित्रण किया है। मठ एक प्रकार से पाखण्ड का अखाड़ा बन गया है। छोटी–छोटी चीजों के लिए तरह–तरह की तिकड़मबाजी की जा रही है। मठ का महन्त सेवादास लक्ष्मीदासिन पर अधिकार किए हुए है, जो पहले वसुमतिया के महन्त ने लक्ष्मी पर अधिकार जमाने के लिए मुकदमेबाजी की थी। इस मुकदमेंबाजी में सेवादास विजयी हुआ। इतना ही नहीं मठ के आचार्य जी से गाँव में पंचायत होती थी। मठ के मामले में या अन्य उससे संबंधित मामले में जनता उसके आदेश को शिरोधार्य कर लेती थी। लेकिन गाँवों में राजनीति के आगमन से लोगों के मन में अपने अधिकार को लेकर एक प्रकार की चेतना आयी। राज़नीतिक दल के कार्यकर्ताओं ने अब धार्मिक कार्यों में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया। जबकि राजनीति आने के पहले धर्म के ठेकेदारों का ही बोल–बाला था।

मठ में महंती हथियाने की साजिश में किस प्रकार से राजनीतिक लोग शामिल होते हैं, इसका रेणु ने बहुत ही तन्मयता के साथ वर्णन किया है। धर्म के नाम पर हो रहा शोषण और भ्रष्टाचार किस प्रकार समाज को ग्रसति कर रहा है अगर उससे छुटकारा नहीं

लिया गया तो आने वाले समाज का स्वरूप बहुत ही बर्बर होगा। कुछ लोग केवल धर्म के नाम पर गंदी राजनीति करते हैं। उनका मानना है कि धर्म की बातों की अगर अवहेलना होगी तो समाज का स्वरूप बिगड़ जाएगा। लेकिन वे यह नहीं जानते कि पाखण्ड अगर बढ़ेगा तो क्या समाज स्थिर रह पाएगा।

रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि धार्मिक मामले में कांग्रेसी तथा सोशलिस्ट नेताओं की क्या स्थिति होती है। मेरीगंज गाँव के मठ में महंती को लेकर महन्तों में विवाद है। बालदेव उस गाँव के कांग्रेसी नेता हैं जो गाँधीवादी मूल्यों पर चलने की कोशिश करते हैं। जब रामदास की महंती के अधिकार पर विवाद हो जाता है तो बालदेव बिना असलियत के जाने 'हिंसावाद' कह कर उसका विरोध करते हैं। इतना ही नहीं जब कालीचरण ने नागा साधु को मारकर भगा दिया तो बालदेव को यह घोर अन्याय दिखाई पड़ता है। बालदेव दो दिन के अनशन की घोषणा करता है। इस हिंसावाद के विरोध के कारण वह मठ में आना–जाना बन्द कर देता है।

कालीचरण सोशलिस्ट पार्टी का कार्यकर्ता है। वह बहुत न्यायप्रिय है और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाता है। इसे हम मेरीगंज मठ में नए महंत को गद्दी देने के प्रसंग में देख सकते हैं। जब लरसिंघदास एक नागा लंपट साधु तिकड़म की सहायता से रामदास से महंती छीनकर खुद महंत बनना चाहता है, तो कालीचरण इसका विरोध करता है, इतना ही नहीं जब 'दलील' पर गाँव के पंचों के हस्ताक्षर का समय आता है, तो कालीचरण उस पर अपना विरोध जताता है और नागा साधु को मार कर भगा देता है। इस घटना से धार्मिक पंच के नेता स्तब्ध रह जाते हैं और सोशलिस्ट कार्यकर्त्ता कालीचरण की धाक जम जाती है। रेणु ने इसका वर्णन करते हुए लिखा है कि "पंचों को लगवा मार गया है। साधुओं की हालत खराब है। पंचों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ रही हैं। और सबों के बीच, कालीचरण हाथ में दलील लेकर सिकन्नर शाह बादशाह की तरह खड़ा है। पलक मारते ही क्या से क्या हो गया। ... जैसे रामलीला का धनुस जग हो गया।"[1] इससे स्पष्ट होता है कि पंचों के निगाह में कालीचरण की छवि तो ठीक नहीं बनी, लेकिन आमजन के बीच उसकी अच्छी स्थिति बन जाती है, कालीचरण के अन्दर जो प्रगतिशील विचार आए, वह रेणु की विचारधारा का द्योतक है।

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 110

मेरीगंज के मठ के लोगों की क्या दृष्टि थी, राजनीति के प्रति। महंत सेवादास की गाँधीजी के प्रति सद्भावना थी। दासिन लक्ष्मी गाँव की सोशलिस्ट पार्टी और कांग्रेस पार्टी दोनों की सहायता करती है। लेकिन जब वह बालदेव के सम्पर्क में आती है तो गाँधीवादी मूल्यों पर विशेष रूप से आकृष्ट होती है। लक्ष्मी एक जगह पर बालदेव को किंकर्तव्यविमूढ़ देखकर सलाह देती है कि "महतमा जी के पंथ को मत छोड़िए बालदेव जी महतमा जी अवतारी पुरुष हैं। आजकल उदास क्यों रहते हैं ? महतमा जी पर भरोसा रखिए। जिस नैन से महतमा जी का दरसन किया है उसमें पाप को मत पैसने दीजिए जिस कान से महतमा जी के उपदेश का सरबन किया है, उसमें माया की मीठी बोली को मत जाने दीजिए। महतमा जी सतगुरु के भगत हैं।"[1] इस पर बालदेव को ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे कि भारत माता के रूप में लक्ष्मी बोल रही है, "भारतमाता रो नहीं रही हैं, अब पंथ बता रही है। उचित पंथ पर अनुचित करम करने वालों को चेता रही हैं।"[2]

गाँधीजी से प्रभावित होकर लक्ष्मी अब खादी कपड़े पहनने लगी और नियमित रूप से चर्खा कातने लगी। वह महात्मागाँधी की निष्ठावान समर्थक बन गयी। उसके गाँधीवादी होने का प्रमाण उस प्रसंग में है, जब बालदेव बावनदास की गाँधीजी की चिट्ठियों को जलाना चाहता है तो लक्ष्मी जलाने से मना करती है और बालदेव को फटकार लगाती है। इस प्रकार लक्ष्मीदासिन जो कबीर मठ की एक दासिन थी वह राजनीतिक रूप में किस प्रकार आती है यह रेणु ने बड़े सजीव ढंग से चित्रित किया।

'मेरीगंज' गाँव में जोतखी नामक एक पात्र है जो धार्मिक अन्ध विश्वासों में फंसा हुआ है। वह राजनीति और आधुनिकता आदि का विरोध करता है। इतना ही नहीं जोतखी धार्मिक विश्वासों एवं अन्धविश्वासों के कारण अपने को बहुत बड़ा गुणी समझता है। जोतखी स्वाधीनता आन्दोलन का भी विरोधी है और आजादी के लिए लड़ने वालों का मजाक उड़ाता है। जोतखी का मानना है, "इनकलाब जिंदाबाद का अर्थ है कि हम जिंदाबाद हैं।"[3] जोतखी स्वाधीनता के खिलाफ लोगों को भड़काता है, ऐसा करने में उसको किसी प्रकार का व्यक्तिगत फायदा नहीं मिलने जा रहा, लेकिन वह केवल अज्ञानता के कारण करता है।

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 220
2. वही, पृ. 221
3. वही, पृ. 40

जोतखी झूठी कहानियाँ गढ़कर स्वाधीनता आन्दोलन के खिलाफ प्रचार करता है कि "अंग्रेज बहादुर से यही दुग्गी–तिग्गी लोग पार पायेंगे। बड़ा–बड़ा घोड़ा बहा जाये तो नरघोड़ी पूछे कितना पानी। अंग्रेज बहादुर ने अभी फिर ढील दे दिया। बस उछल–कूद कर रहे हैं। इस बार बिगड़ेगा तो खोपसहित कबूतराय।"[1]

खलासी जोतखी की तरह स्वाधीनता आन्दोलन का विरोधी है। वह भी जादू–टोना टोटका जैसे धार्मिक अन्धविश्वासों को मानने वाला है। गाँव की दृष्टि में वह "खलासी जी बहुत गुनी आदमी है। पक्का ओझा है। चक्कर पूजते हैं। भूत–प्रेत को पेड़ में काटी ठोंककर बस में करते हैं। बांझ निपुत्तर को तुकताक (टोटका) कर देते हैं।"[2] वह भी राजनीति को बुरा समझता है। इतना ही नहीं सन् 42 के स्वाधीनता आंदोलन में उसकी रिपोर्ट पर बैगनबाड़ी के जमींदार के लड़के को रेल लाइन उखाड़ने और बगावत करने के अपराध में फांसी की सजा हो गयी थी।

इस प्रकार उपन्यासकार ने दिखाया है कि किस प्रकार जोतखी खलासी इत्यादि के कारण राजनीतिक चेतना लोगों तक पहुँचने में बाधक होती है। ऐसे लोग केवल सड़ी गली धार्मिक मान्यताओं को बरकरार रखना चाहते हैं। अगर राजनीति का प्रवेश आजादी के बाद गाँवों में नहीं पहुँचा होता तो समाज धार्मिक स्वरूप में ही जकड़ा रहता और समाज का सम्यक् विकास नहीं हो पाता जो होना चाहिए।

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 40
2. वही, पृ. 61

IV. भारतीय गाँवों में सत्ता समीकरणों का बदलाव

भारतीय समाज में बदलाव आजादी के बाद बहुत तेजी से होता है। आजादी के पहले लोगों को अपने अधिकारों का ज्ञान नहीं था। वे बंधी–बंधाई पुरानी परम्पराओं के अनुसार ही कार्य करते थे। जब भारत को आजादी मिली तो लोगों के अन्दर चेतना का विकास हुआ। स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान सामाजिक सुधार का आन्दोलन भी चलता रहा। "भारतीय समाज में सांस्कृतिकरण की प्रक्रिया तो सैकड़ों सालों से चल रही है, इसमें नीची जाति अपने से ऊँची और शक्तिशाली जाति के नियमों एवं प्रथाओं का अनुसरण करती है।"[1] लेकिन आजादी के बाद सामाजिक व्यवस्था में बदलाव शुरू हो गया। अपनी सामाजिक एवं राजनीतिक अवस्था को उन्नत बनाने तथा सत्ता में हिस्सेदारी के लिए मध्यवर्ती जातियाँ खुलकर सामने आने लगीं। निम्नजातियों ने सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक रूप से सम्पन्न पहले से जमी उच्च जातियों को चुनौतियाँ देना शुरू कर दिया। ये जातियाँ अपने अधिकारों के लिए एक लम्बी प्रक्रिया से समाज को चुनौती देकर प्राप्त करने की कोशिश की। रेणु ने अपने साहित्य में इसी आरंभिक दौर का वर्णन किया है।

रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि आजादी के बाद गाँवों के राजनीतिकरण के पीछे कौन से तत्व काम कर रहे थे। मेरीगंज में चार जातियों का बोल–बाला है, कायस्थ, ब्राह्मण, राजपूत और यादव। संथाल समुदाय के लोगों को बाहरी आदमी माना जाता है।

रेणु ने दिखाया है कि किस प्रकार से यादव अपनी स्थिति मजबूत करके राजनीतिक सत्ता पर अपना स्थान बनाते हैं। यादव जाति का मुखिया रामखेलावन यादव है, वह मेरीगंज का तीसरे नम्बर का भू–स्वामी है, उसके पास डेढ़ सौ बीघे ज़मीन है। रामखेलावन की दस वर्ष पहले बहुत अच्छी स्थिति नहीं थी। वह दूसरों की भैंस चराता था लेकिन आर्थिक तरक्की के कारण वह पूरे यादव जाति का मुखिया बन गया है। रेणु लिखते हैं, "यादवों का दल नया है। इनके मुखिया खेलावन यादव को दस बरस पहले तक लोगों ने भैंस चराते देखा है ... बड़ा बेटा सकलदीप अररिया बैरगादी में नाना के घर रहकर हाईस्कूल में पढ़ता है। खेलावन सिंह यादव को लोग नया मातबर कहते हैं। लेकिन यादव क्षत्रिय टोली को अब गुअर टोली कहने की हिम्मत कोई नहीं करता। यादव टोली में बारहो

---

1. आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन – एम.एन. श्रीनिवास, पृ. 21

मास शाम को अखाड़ा जमता है।"[1] अब पुरानी सड़ी–गली सामाजिक परम्पराएँ टूट रही हैं और ग्रामीण संरचना में बदलाव आ रहा है। नए–नए दल उभर रहे हैं तथा ग्रामीण संरचना में अपना वर्चस्व कायम कर रहे हैं। कायस्थों, राजपूतों और ब्राह्मणों को न चाहते हुए भी यादवों के वर्चस्व को स्वीकार करना पड़ रहा है। बालदेव भी यादव जाति का कांग्रेसी नेता है। यादव जाति के लोग बालदेव के इस राजनीतिक पहचान से अपनी जाति का सामाजिक सम्मान समझते हैं। यादवों को इस बात का गर्व है कि उन्हीं लोगों के बीच के आदमी को राजनीतिक क्रिया–कलापों में भाग लेने के करण शहर के बड़े नेता भी जानते हैं। लेकिन यादव के इस तरह के राजनीतिक तरक्की से राजपूत को अच्छा नहीं लगा। इसलिए हरगौरी सिंह बालदेव का अपमान करता है। वह सोचता है कि नीची जाति के लोग नेतागिरी कर ही नहीं सकते। हरगौरी सिंह द्वारा बालदेव का अपमान करने से यादव टोली वालों ने कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त की, "गुहर टेाली का बूढ़ा रौंदी आया है। ... गुअर टोली में बूढ़े बच्चे खौल रहे हैं कि हरगौरी ने बालदेव को जूते से मारा है। कुकरू का बेटा कलचरना काली किरिया खाया है – हरगौरी का खून पीएगा ... बालदेव को हीं सेना खुशी से जयकार कर उठी।"[2] इस प्रकार यादव अपनी संख्या शक्ति के बल पर अपनी जाति के सम्मान के लिए आगे बढ़कर आते हैं। निम्न जातियों के अन्दर उत्थान की भावना जगने से वह आगे की तरफ बढ़ कर सत्ता में अपनी भागीदारिता बनाना चाहते हैं, इसलिए कालीचरण जैसे युवा नेता सोशलिस्ट पार्टी में शामिल होकर अपनी स्थिति मजबूत करने की कोशिश करते हैं।

चेतना की भावना केवल यादवों में ही नहीं आती है, बल्कि अन्य निम्नजातियों में भी आती है। ब्राह्मण सहदेव मिसिर को तांत्रिमा टोली के लोगों ने बाँध लिया तथा उनकी बेइज्जती कर दी। पहले के समाज में इस प्रकार की धारणा थी कि उच्च वर्ग के लोगों ने अपने से निम्नवर्ग के लोगों का शोषण करने में किसी प्रकार से संकोच नहीं करते थे, जैसा वे चाहते थे उसी प्रकार से कार्य करते थे। तांत्रिमा टोली की फुलिया के घर में सहदेव मिसिर सामाजिक व्यवस्था का उल्लंघन करते हुए घुस गया था, इसलिए तांत्रिमा टोली के लोगों में अपने खिलाफ इस बात को लेकर चेतना आई और सहदेव को पकड़ लिया। रेणु लिखते हैं, "तंत्रिमा टेाली में जब से खलासी का आना–जाना शुरू हुआ है, तभी से नई–नई

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 29
2. वही, पृ. 34

बातें सुनने को मिल रही हैं, देखा–देखी दूसरे टोले में भी नियम कानून पंचायत और बंदिश हो गई है।"[1] अब तक जो लोग छोटी जातियों के स्त्रियों से सम्बन्ध बनाते रहे थे उनके लिए वह स्थिति नहीं रही बल्कि ये जातियाँ अपने स्वाभिमान के लिए उठ खड़ी होने लगी हैं।

तहसीलदार हरगौरी का नाई, धोबी और मोची बहिष्कार कर देते हैं एवं समूचे राजपूत टोले का भी। बन्दोबस्ती के समय अपनी जमीन छिन जाने के प्रति पहली बार ऐसा होता है कि तहसीलदार को झुकना पड़ता है।

रेणु मेरीगंज गाँव का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि "मेरीगंज एक बड़ा गाँव है, बारहो बरन के लोग रहते हैं। गाँव के पूरब एक धारा है, जिसे कमला नदी कहते हैं। बरसात में कमला भर जाती है, बाकी मौसम में बड़े–बड़े गड्ढ़ों में पानी जमा रहता है – मछलियों और कमल के फूलों से भरे हुए गड्ढ़े। पौष पूर्णिमा के दिन इन्हीं गड्ढ़ों में कोसी स्नान के लिए सुबह से शाम तक भीड़ लगी रहती है। ... राजपूतों और कायस्थों में पुश्तैनी मनमुटाव और झगड़े होते आए हैं। ब्राह्मणों की संख्या कम है, इसलिए वे हमेशा तीसरी शक्ति का कर्त्तव्य पूरा करते रहे हैं। अभी कुछ दिनों से यादवों के दल ने भी जोर पकड़ा है। नजेऊ लेने के बाद भी राजपूतों ने यदुवंशी क्षत्रिय को मान्यता नहीं दी। ... अब गाँव में तीन प्रमुख दल हैं – कायस्थ, राजपूत और यादव। ब्राह्मण लोग अभी भी तृतीय शक्ति हैं। गाँव के अन्य जाति के लोग भी सुविधानुसार इन्हीं तीनों दलों में बंटे हुए हैं।"[2] वर्चस्वशील जातियाँ हमेशा अपना वर्चस्व बनाए रखना चाहती हैं, लेकिन आजादी की चेतना आने से लोगों में सामाजिक चेतना का विकास होने से बदलाव आता है।

रेणु ने इस बात को दिखाया कि किस प्रकार आर्थिक बदलाव से भी ग्रामीण सत्ता में बदलाव आता है। आजादी के पहले गावों की कुछ खास अच्छी स्थिति नहीं थी, लेकिन आजादी के बाद गाँवों की स्थिति में भी बदलाव आया। आर्थिक स्थिति के बदलाव से मनुष्य की सारी स्थितियों का बदलाव होता है। रेणु मेरीगंज की आर्थिक स्थिति का चित्रण करते हुए लिखते हैं कि "खम्हार ! साल भर की कमाई का लेखा–जोखा तो खम्हार में ही होता है। दो महीने की कटनी, एक महीना मड़नी, फिर साल भर की खटनी। दवनी–मड़नी करके

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 118
2. वही, पृ. 9

जमा कदो, साल भर के खाये हुए कर्ज का हिसाब करके चुकाओ। बाकी यदि रह जाये तो फिर सादा कागज पर अंगूठे की टीप लगाओ। सफाई करनी है तो बैल गाय मरना रखो या हलवाहा–चरवाहा दो। फिर कर्ज खाओ। खम्हार का चक्र चलता रहता है। खम्हार में बैलों के झुंड से दवनी–मड़नी होती है। बैलों के मुंह में जाली का 'जाब' लगा दिया जाता है। गरीब और बेजमीन लोगों की हालत भी खम्हार के बैलों जैसी है। ... मुँह में जाली का 'जाब'।"[1]

रेणु ने अपने ईद–गिर्द की वस्तुओं को खुली आँखों से देखा था। रेणु गाँव के यथार्थ को बखूबी से देखा था। वे इस बात को अच्छी तरह से जानते थे कि आज के समय में राजनीति को अच्छे और बुरे सभी लोग शक्ति के रूप में अपनाना चाह रहे हैं क्योंकि बिना राजनीति के आज के समय में किसी प्रकार से व्यक्ति सत्ता स्थापित नहीं हो सकती है।

बिहार में सन् 1934 ई. से प्रारम्भ किसान आन्दोलन के दबाव में कांग्रेसी नेतृत्व ने जमींदारी उन्मूलन तथा बटाइदारी पर खेती करने वालो को उनका हक दिलाने का वायदा किया था। मगर जब कांग्रेस सत्ता में आयी तो ऐसा नहीं कर पायी क्योंकि अब कांग्रेस के अन्दर बड़े–बड़े जमींदार कांग्रेस पार्टी के नेता बन गए हैं। किसानों के दबाव के कारण कांग्रेस के नेताओं को पुराने 40 बी.टी. एक्ट को नया कानून कहकर जनता को धोखा दिया गया। रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि कांग्रेस पार्टी ने यह नोटिस निकाली की दफा 40 का कानून पास हो गया और बटाईदार किसान आवेदन करके जमीन प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन जमींदारों से किसान जमीन किस प्रकार प्राप्त कर सकेंगे। इस पर किसी प्रकार से विचार नहीं किया गया।

जमीन सर्वेक्षण पर किस प्रकार से गाँवों में वर्चस्वशील राजनीति और कूटनीति करते हैं रेणु ने इस पर बहुत यथार्थ रूप से दृष्टि डाली है। तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद तिकड़मों से अपनी जमीन बचा लेता है, क्योंकि जमींदारी प्रथा को भीतरी समर्थन देकर राजनीतिक सत्ता ने अपने अमानवीय स्वरूप का परिचय दिया। जमींदारों ने अपनी जमीनें गरीब किसानों से ताकत के बल पर छीन ली थी जिससे लाखों बटाईदार जमीन से बेदखल

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 79

हो गए। कानून से बचने के लिए जमीनों को खुदकाश्त घोषित कर जमींदारों ने किसानों की रोजी–रोटी छीन ली। इस अमानवीय कृत्य में राजनीतिक सत्ता की सीधी भागीदारी थी तथा समर्थन भी था।

कालीचरण के नेतृत्व में मेरीगंज के गरीब किसानों में चेतना आती है। यादव टोली के नवयुवक अब राजपूतों के सामने नहीं दबते हैं तथा आमने–सामने पड़ने पर प्रणाम भी नहीं करते हैं। इतना ही नहीं कभी राजपूतों को लाठी और भाला भी दिखाते हैं। राजपूत टोली के नवयुवक धीरे–धीरे अब यादवों के दल से मेल मिलाप करना शुरू कर देते हैं। अखाड़ों में यादवो के साथ मिलकर कुश्ती भी लड़ते हैं। रोज रात को कीर्तन मण्डली में भी जाते हैं। कालीचरन किसानों और मजदूरो के हृदय में चेतना का संचार करता है। वह कहता है कि "अब वह जमाना नहीं है, गाँधी जी का जमाना है, नया तहसीलदार हुआ है तो क्या ? हमारा क्या बिगाड़ होगा ? ... न जगह, न जमीन, इस गाँव में नहीं उस गाँव में रहे बराबर है।"[1] कालीचरण की बात सुनकर दलित मजदूर एवं किसानों के मन मं चेतना का संचार होता है। क्योंकि ये सभी अतीत काल से पीड़ित एवं दमित थे, इसलिए इनके मन में भी चेतना का संचार होने लगा। कालीचरन कहता है, "मैं आप लोगों के दिल में आग लगाना चाहता हूँ, सोये हुए को जगाना चाहता हूँ। सोशलिस्ट पार्टी आपकी पार्टी है, गरीबों की पार्टी है। सोशलिस्ट पार्टी चाहती है कि आप अपने हकों को पहचानें। आप भी आदमी हैं, आपको आदमी का सभी हक मिलना चाहिए।"[2]

कालीचरन के नेतृत्व में मेरीगंज के लोगों की आँखें खुल गयीं और उनमें संघर्ष की चेतना पैदा हो गई। कालीचरण जाति–पाँति का विरोध करता है और गरीबों को एक जुट होने के लिए कहता है। वह चमारों के साथ बैठकर खाना खाता है और जाति–संघर्ष को वर्ग संघर्ष में परिवर्तित करने का प्रयास करता है। उसका मानना है कि गाँव में सिर्फ दो जातियाँ हैं, अमीर और गरीब। कालीचरण अपने भाषण में कहता है कि, "ये पूँजीपति और जमींदार खटमलों और मच्छरों की तरह सोसख हैं। खटमल। इसलिए बहुत से मारवाड़ियों के नाम के साथ 'मल' लगा हुआ है और जमींदारों के बच्चे मिस्टर कहलाते हैं। मिस्टर ... मच्छर।"[3]

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 157–58
2. वही, पृ. 158
3. वही, पृ. 187

जमींदारी प्रथा उन्मूलन में यह कानून पास होता है कि जमीन जोतने वालों की होगी। इस पर संथालों ने जमीन पर कब्जा शुरू कर दिया क्योंकि तहसीलदार ने उनकी जमीनों को हथिया रखा था। इस पर वह गाँव वालों को इकट्ठा करके संथालों के विरुद्ध कर देता है। रेणु ने दिखाया है कि कायस्थ जाति के विश्वनाथ प्रसाद आज सारे गाँव के लोगों को अपने तिकड़मी दिमाग से अपने पक्ष में कर लिया। तहसीलदार बहुत ही चालाक किस्म का व्यक्ति है वह – सारे गाँव के लोगों की पंचायत बुलाता है। वह हवा के रूख के अनुसार कार्य करता है। बालदेव, कालीचरन, जीवेसर मोची, डोमन प्यारेलाल को अपने साथ और उच्च जाति के पंचों के साथ पंच बनाकर बैठता है। इससे यह सिद्ध करना चाहता है कि जरूरत पड़ने पर वह गधे को भी मामा कह सकता है। विश्वनाथ गाँव के सत्ता समीकरण में हमेशा अपना वर्चस्व बनाए रखना चाहता है। और पिछड़ी जाति के लोगों को खुश करके संथालों के विरुद्ध कर देता है।

किसान आंदोलन के नेता कालीचरनण, वासुदेव इत्यादि तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद के समर्थक बन गए हैं। संथालों का नेता चुनका मांझी डॉ. प्रशान्त से सलाह लेता है। डॉ. प्रशान्त कहता है कि, "तुम लोग ही जमीन के असल मालिक हो। कानून है, जिसने तीन साल तक जमीन को जोता बोया है, जमीन उसी की होगी।"[1] लेकिन इस बात की शायद डॉ. प्रशान्त को जानकारी नहीं है कि पैसे के दम पर किस प्रकार से कानून के अन्दर नुक्स निकाला जा सकता है। अन्त में संथालों और गाँव वालों के बीच संघर्ष होता है जिसमें संथाल मारे जाते हैं और संथालिनों पर सामूहिक बलात्कार किया जाता है। संथालों के घर और उनके झोपड़ियो में आग लगा दी जाती है। पुलिस के सामने बालदेव एवं कालीचरण संथालों के विरुद्ध गवाही देते हैं जिससे उन्हें सज़ा मिलती है। इस प्रकार उभरते हुए वर्ग–संघर्ष को तिकड़मबाजी से दबा दिया जाता है।

डॉ. प्रशान्त विश्वनाथ की तिकड़मबाजी की राजनीति को समझता है इसलिए वह कालीचरण से कहता है कि, "मत समझना कि संथालों की ज़मीन छुड़ाकर ही जमींदार संतोष कर लेगा। अब गाँव के किसारों की बारी आएगी। और तुमको तथा बालदेव जी को उन्होंने अपना पहला हथियार बनाकर इस्तेमाल किया है।"[2] संथालों को पराजित करने के

---

1. मैला आँचल – रेणु, पृ. 261
2. वही, पृ. 225

बाद तहसीलदार किसानों को उनकी ज़मीन से बेदखल करके उन्हें भूमिहीन कर देता है। खेलावन यादव को अब पुनः भैंस चराने का काम करना पड़ता है।

अन्त में कह सकते हैं कि राजनीतिक चेतना के जातीय आयाम ने ग्रामीण जीवन में व्याप्त सामाजिक सम्बन्धों को बहुत गहराई से प्रभावित किया है। ग्रामीण जीवन में राजनीति प्रवेश करने से लोगों के अधिकारों के प्रति चेतना पैदा करती है। सदियों से दबे–कुचले लोगों में नया उत्साह जगता है। इस उत्साह से गाँव की समस्याओं तथा उसके समाधान के लिए ग्रामीण जन की भागीदारी भी बढ़ती है। लेकिन रेणु ने इस जनसंघर्ष को आगे न बढ़ाकर स्थगित कर दिया, जो रेणु की दृष्टि का कमजोर पक्ष है।

रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि किस प्रकार राजनीति में निष्ठावान, कर्मठ लोगों को पार्टी से निष्कासित कर दिया जाता है और पूँजीपति, भ्रष्ट तथा अवसरवादी लोगों को महत्त्व दिया जाता है। हर राजनीतिक पार्टी के अन्दर स्वार्थ और अवसरवाद की राजनीति हावी है और उनकी विचारधारा और सिद्धान्त धीरे–धीरे खत्म हो रहे हैं। राजनीति गाँव में प्रवेश करने के साथ स्थानीय स्तर पर अपने विकृत स्वरूप का प्रचार प्रसार शुरू कर देती हैं। इन सारी बातों से रेणु 'मैला आँचल' में टकराये हैं और उन्होंने पाठकों को इन समस्त प्रश्नों पर विचार करने के लिए बाध्य किया है, जो रेणु की सजग राजनैतिक चेतना एवं सामाजिक जागरुकता का परिचायक है।

तीसरा अध्याय
'परती–परिकथा' में राजनीतिक दृष्टि

'परती–परिकथा' सन् 1957 में प्रकाशित हुआ। 'परती–परिकथा' में राजनीति सक्रियता तथा मानवीय सम्बद्धता के रूप में आती है। इस उपन्यास में भारत के प्रथम दो आम चुनावों के बीच का समय लिया गया है। कोसी के आस–पास की पड़ी हुई हजारों बीघा परती जमीन में हजारों वर्षों बाद नई–नई परियोजनाओं के कारण किस तरह नया जीवन आता है, इसका विशद् वर्णन रेणु ने इस उपन्यास में किया है। कोसी नदी के किनारे पड़ने वाली जमीन, नदी के मार्ग बदल लेने से परती हो गई है। परती जमीन का उपजाऊपन खत्म हो जाता है, जिससे लोगों को अच्छी खासी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। यहाँ के लोगों की मान्यता है कि जब किसी प्रकार का विधान बदलने का प्रयत्न किया जाता है तो सारे गाँव पर, समाज पर नए सिरे से विपत्ति टूट पड़ती है।

परानपुर ऐसा गाँव है, जहाँ के लोग अन्धविश्वासों में जीवन व्यतीत करते हैं। इसी बीच भारत को आजादी मिलती है। कांग्रेस पार्टी की सरकार बनती है और नई–नई घाटी परियोजनाएँ तैयार की जाती हैं। इन योजनाओं के कारण तरह–तरह के नए–नए यन्त्रों और नए विचारों की पहुँच गाँवों–देहातों तक में होती है। इसके साथ ही साथ कांग्रेसी सरकार भूमि सम्बन्धी कानून में सुधार करने की कोशिश भी शुरू कर देती है। सरकार कार्यक्रम लागू करती है। परानपुर गाँव के निवासी अपने–अपने भूमि सम्बन्धी कागज की तैयारी में लगे हैं। जमीन संबंधी अपने अधिकार के लिए लोग तमाम तरह के नैतिक–अनैतिक कार्य करने के लिए बाध्य हैं।

15 अगस्त सन् 1947 को देश आजाद हुआ। आजादी के साथ ही साथ देश विभाजन हुआ। उसके बाद से देश की राजनीति में परिवर्तन दिखाई देता है। आजादी के पूर्व राजनीतिज्ञों में जो राजनीतिक त्याग, आत्मसंयम और आजीवन देश सेवा एवं संघर्ष की भावना थी, आजादी के बाद वह अचानक लुप्त हो जाती है। उसके स्थान पर स्वार्थ भ्रष्टाचार मुखौटों और संकेतों की राजनीति होने लगी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अर्जित मानवीय मूल्यों का सर्वनाश शुरू हो गया, जिसके मूल में अब व्यक्तिगत स्वार्थों की राजनीति शुरू हो गयी। आज स्थिति यह है कि राजनीति के प्रदूषण में समाज का आधार ही स्थिर नहीं हो पा रहा है।

रेणु ने 'परती–परिकथा' में जमीन, भूमिहीनों तथा खेतिहर मजदूरों की समस्या पर प्रकाश डाला है। जमीन को लेकर किस तरह से परानपुर में राजनीति की जा रही है, इसका रेणु ने विस्तार से वर्णन किया है। परानपुर गाँव में जमीन पैमाइश के समय राजनीतिक दलों की स्थिति का भी रेणु ने यथार्थ रूप से चित्रण किया है।

आजाद भारत में यह सपना देखा गया था कि हर व्यक्ति को खेती के लिए जमीन और रहने के लिए मकान मिलेगा, जमींदारी प्रथा खत्म होगी। क्या वास्तव में ऐसा कांग्रेसी सरकार कर पायी ? किन कारणों से ये कार्य पूर्ण नहीं हो पाए, इन सबका रेणु ने बड़े यथार्थ ढंग से वर्णन किया है। कांग्रेसी सरकार ने नवनिर्माण की बात की थी, क्या उसका समुचित रूप से उपयोग कर पायीं क्या सरकारी योजनाओं के बारे में सरकार की ओर से किसी प्रकार की सूचना जनता को दी गई । क्या इससे जनता के मन में जागृति की चेतना आएगी और वह सरकार से प्रश्न करेगी। इससे नौकरशाहों की लालफीताशाहों एवं लीडरों की लीडरी और राजनीतिक पार्टियों की स्वार्थ भरी राजनीति नहीं हो पाएगी। इन सारे प्रश्नों से रेणु 'परती–परिकथा' में टकराते हैं।

I. भूमि की राजनीति

भारत में स्वतन्त्रता के बाद सरकार द्वारा इस बात की घोषणा की गई थी कि जमींदारी प्रथा का उन्मूलन किया जाएगा, लेकिन वास्तविकता यह थी कि जमींदारी उन्मूलन कागजी तौर पर हुआ, जनता को प्रत्यक्ष लाभ कुछ भी नहीं मिला। समस्या ज्यों की त्यों बनी रही। जिन लोगों की सरकार में पकड़ थी वे लोग झूठे गवाह खड़े करके अपनी जमीनें बचा लिए। जिनकी पहुँच सरकार तक नहीं थी, वे लोग कुछ नहीं कर पाए। इस प्रकार कहने के लिए जमींदारी प्रथा तो समाप्त हो गई लेकिन सच्चाई यह है कि अभी भी दस पन्द्रह हजार बीघे के जमीन के मालिक घूम रहे हैं। "जिले के जमींदारों और राजाओं की जमींदारियों का विनाश अवश्य हुआ, किन्तु हिन्दुस्तान के सबसे बड़े किसान यहीं पूर्णिया जिले में निवास करते हैं। गुरुवंशी बाबू जमींदार नहीं किसान हैं। दस हजार बीघे जमीन है, दो–दो हवाई जहाज हैं। ... पर सच्ची बात है कि वे जमींदार नहीं हैं। किसान सभा की सदस्यता से किस आधार पर वंचित करेंगे उन्हें ? यहाँ पाँच सौ बीघेवाले किसान तृतीय श्रेणी के किसान समझे जाते हैं और हर गाँव पर इन्हीं किसानों का राज है। भूमिहीनों की विशाल जमात ! जगती हुई चेतना ! ... जमींदारी–उन्मूलन के बाद भी हर साल फसल काटने के समय एक डेढ़ सो लड़ाई दंगे और चालीस–पचास कत्ल होते रहे तो फिर से जमीन बन्दोबस्ती की व्यवस्था की गयी। ... सारे जिले में गत तीन वर्षों से विशाल आँधी चल रही है।"[1] स्पष्ट है कि जब जमीन का बंटवारा उचित ढंग से नहीं होगा तो समस्या निश्चित रूप से बनी रहेगी। छोटी–छोटी बातों को लेकर आपस में वैमनस्य का माहौल बना रहेगा। कहीं कम कहीं अधिक जमीन के चक्कर में लोग गलत तरीकों का सहारा भी लेते रहेंगे।

जमींदारी उन्मूलन में राजनीतिक दलों की क्या भूमिका होती है, रेणु ने 'परती–परिकथा' में बड़े यथार्थ ढंग से चित्रित किया है। भारत में आजादी के बाद राजनीतिक प्रवृत्तियों के समाहार का सही प्रयोग रेणु ने 'परती–परिकथा' में किया है। जमींदारी प्रथा उन्मूलन की आँधी में किस तरह लोग अपने स्वार्थों के चक्कर में पड़कर अपनी इंसानियत तक को बेचने से नहीं चूक रहे हैं तथा स्वार्थ छल, कपट और भ्रष्टाचार का सहारा लेकर अपने काम निकलवाने की कोशिश कर रहे हैं।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 326

'परती–परिकथा' के पहले भाग में जमींदारी प्रथा के उन्मूलन तथा भूमि–पुनर्विभाजन का वर्णन मिलता है तथा इसके दूसरे भाग में मूल कथा से हटकर कोसी प्रोजेक्ट और गुलाब की खेती में आकर कथानक रह जाता है। रेणु ने 'परानपुर' का परिचय देते हुए लिखा है, "परानपुर की प्रतिष्ठा सारे जिले में है। सबसे उन्नत गाँव समझा जाता है। इस इलाके में सबसे उन्नति गाँव है। किन्तु जिस तरह बाँस बढ़ते–बढ़ते झुक जाता है, उसी तरह यह गाँव भी झुका है। ... अब इस सब डिवीजन भर के लोग यहाँ के दस वर्ष के लड़के से भी बात करते समय पॉकेट एक बार टटोल कर देख लेते हैं। फारबिसगंज बाजार की किसी एक दकान पर चले जाएं, ज्यों ही हुआ कि परानपुर का ग्राहक आया है, दुकानदार अपनी बिखरी चीजें समेटने लगता है ... हाकिम हुक्काम भी यहाँ के लोगों से बात करते समय इस बात का ख्याल रखते हैं कि सिर्फ एक गाँव में एक ही वर्ष के अन्दर सरकार के तीन–तीन विभागों के अधिकारियों की आँखों में धूल झोंकी गयी। ... ट्रेनों के चेकर भी जानते हैं, परानपुर के लोग टिकट लेकर गाड़ी में नहीं चलते। चार्ज करने वाले चेकर को रोड़े और पत्थरों से भाड़ा चुकाते हैं ये।"[1] इस तरह देखते हैं कि गाँव के बारे में अन्य लोगों की सोच ठीक नहीं है। पूरा का पूरा गाँव पिछड़े हुए गाँव का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार के गाँव में रहने वालों की सोच क्या हो सकती है ? इस बात पर विचार किया जाना चाहिए।

परानपुर गाँव के परती के समान परानपुर गाँव के लोगों का दिमाग भी परती हो गया है। परानपुर के लोग बहुत ही जाहिल हैं। इन लोगों को जिन वस्तुओं का ज्ञान नहीं है उनके बारे में भी अच्छी खासी बहस करते हैं, बिना किसी तर्क के। इन लोगों का मानना है कि जो ये जानते हैं वही सही, बाकी सब कुछ गलत है। इसके पीछे इनका दोष कम है, सरकार का दोष अधिक है। सरकार जनता के बीच कभी भी इस बात का प्रचार–प्रसार नहीं करवाती कि व्यक्ति के क्या अधिकार तथा क्या कर्त्तव्य हैं ? रेणु ने सरकारी तन्त्र पर गहरा प्रहार 'परती–परिकथा' में किया है। जनता के बीच चेतना का प्रसार प्रचार करने में असफल सरकार को सोचना चाहिए कि जब तक देश का एक–एक व्यक्ति जागरुक नहीं होगा तब तक देश का विकास नहीं होगा। ग्रामीणों में जागरुकता के अभाव में सरकारी तन्त्र दोषी है। इस प्रसंग में डॉ. चन्द्रभानु सोनवणे ने लिखा है "उचित लोक–प्रबोध के अभाव के कारण पूर्णिया जिले की परती को सृजन और सफल बनाने वाली कोसी योजना का विरोध करने

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 322

के लिए अनेक गाँवों के लोग परानपुर में एकत्र हो जाते हैं। सरकार के पुराने ढंग के कल पुर्जे इस विरोध के जिम्मेदार हैं। वे जानबूझकर जनता को अन्धकार में रखना चाहते हैं, क्योंकि जनता की जागरुक दिलचस्पी से उन्हें खतरा महसूस होता है। विकास के कामों में जनता का लगाव होते ही नौकरशाही के कलपुर्जे की मनमानी कैसे चल सकेगी।"[1] स्पष्ट है कि अगर जनता को सरकारी प्रोग्रामों के बारे में ठीक से जानकारी नहीं होगी तो वह उचित ढंग से कार्यों का निर्वहन नहीं कर सकती है। कोई भी व्यक्ति अपने अनुसार सरकारी कार्यों के प्रति अपने ढंग से उनका दुरुपयोग कर सकता है। जैसे जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के बारे में जनता को ठीक से जमींदारी प्रथा उन्मूलन कार्यक्रम के बारे में जानकारी न होने के कारण काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यही कारण है कि चालाक लोग अपने तिकड़मी दिमाग के कारण जमीन पर अपना कब्जा बनाए रखते हैं या नया कब्जा कर लेते हैं।

रेणु ने 'परती परिकथा' में दिखाया है कि जमींदारी प्रथा उन्मूलन के समय किस प्रकार से जमीन के प्रश्न पर राजनीति की जाती है तथा अनेक प्रकार से आम लोगों को परेशान किया जाता है। जमींदारी प्रथा उन्मूलन के प्रश्न पर राजनीतिक दल किस प्रकार घटिया राजनीति करते हैं रेणु ने इसका बहुत यथार्थ वर्णन किया है। "कांग्रेसी, समाजवादी, कम्युनिस्ट सभी पार्टी वालों ने अपने बाहरी वर्कर मँगाए हैं। गाँव के वर्करों की बात उनके अपने ही परिवार के अन्य सदस्य नहीं मानते। बहुत से वर्करों का ट्रायल हुआ है, होने वाला है। सेवकों की सेवाओं की परख हो रही है। सभी पार्टी के कार्यकर्त्ता सतर्क हैं सचेष्ट हैं, बटाईदारी करनेवालों के नाम पर्चा दिलवाने का व्यापार बड़ा टेढ़ा है।"[2]

कांग्रेस पार्टी देश की सरकार चलाने वाली पार्टी थी, लेकिन अब उस पार्टी की विचारधारा में परिवर्तन आ गया है। वह अब मानवीय मूल्यों को छोड़कर व्यक्तिगत हित एवं स्वार्थी लोगों के हाथों की कठपुतली बनकर रह गयी है। कांग्रेस के स्थानीय कार्यकर्त्ता ही कांग्रेस में इसलिए शामिल हो रहे हैं कि उनके व्यक्तिगत स्वार्थ की सिद्धि होगी। 'परती परिकथा' में कांग्रेसी कार्यकर्त्ता लुत्तो कांग्रेस में इसलिए ही शामिल हुआ है कि उसका महत्व गाँव में बढ़े, क्योंकि वह शासक पार्टी का कार्यकर्त्ता है उसका किसी प्रकार का काम

---

1. कथाकार फणीश्वरनाथ रेणु, डॉ. चन्द्रभानु सोनवणे, पृ. 62
2. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 328

रुकने वाला नहीं है। जमींदारी प्रथा उन्मूलन में कांग्रेस पार्टी का चरित्र क्या था ? इस पर रेणु ने लिखा है "... लुत्तो की बात निराली है ! शासक पार्टी का कार्यकर्त्ता है – थाना कमिटी के सभापति के प्रियजनों में से एक। ... थाना कमिटी के सभापति ज़ी जाहिल हैं। उनका विश्वास है कि पढ़े–लिखे लोग कंाम कम, बात ज्यादा करते हैं। इसलिए थानेभर की ग्राम कमिटियाँ एक से एक जाहिलों के जिम्मे लगायी गयी हैं। फिर, लुत्तो ने अपने एक–एक लीडर को खुश किया। वर्कर के ही बल पर लीडर, लीडर के बल पर मिनिस्टर ! ... बड़े लोगों की सेवा कभी निष्फल नहीं जाती। ... सर्वे के समय लुत्तो की कीमत और बढ़ गयी है। सभी धीरे–धीरे जान गए हैं, सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट पार्टीवाले जिनकी मदद करेंगे, उन्हें जमीन हर्गिज नहीं मिल सकती, ब्रह्म–विष्णु–महेश उठकर आयें तब भी नहीं। ... इसमें बहुत बड़ा रहस्य है, जिसे सिर्फ लुत्तो ही जानता है।"[1]

भूमि सर्वे के समय लोगों को तमाम तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। लोगों को गलत कामों में फंसाकर जमीन सर्वे के अधिकारी परेशान करते हैं। "सर्वे सेटलमेंट के हाकिम साहब परीशान हैं। परानपुर इस्टेट की कोई भी जमा ऐसी नहीं जो बेदाग हो। सभी जमा को लेकर एकाधिक खूनी मुकदमें हुए हैं; आदमी मरे हैं, मारे गए हैं। ... ऐसे मामलों में बगैर जिला सर्वे आफिसर से सलाह लिए वे अपनी कोई राय नहीं दे सकते।"[2] इन सारे ऐसे कार्यों के कारण, जिसमें हत्या, मारपीट इत्यादि के कारण शरीफ़ लोगों को चालाक व्यक्तियों द्वारा परेशान किया जाता है।

भूमि के पीछे किस तरह से लोग कांग्रेस में शामिल हो रहे हैं। कल तक मीर समसुद्दीन कांग्रेस पार्टी को गाली देता था, "कांगरेसी मुसलमाँ मक्कार हैं, गद्दार हैं, काफिरों के चन्द टुकड़ों पर पले।"[3] लेकिन अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण "दुलारी दापवाली जमा में मुसलमान टोली के मीर समसुद्दीन ने तनाजा दिया है। ढाई सौ एकड़ प्रसिद्ध उपजाऊ जमीन की एक चकबंदी और पाँच कुण्डों में तीन पर पन्द्रह साल से आधीदारी करने का दावा किया है उसने।"[4] मीर समसुद्दीन बहुत ही बड़ा अवसरवादी है। वह जमीन की खातिर

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 328–29
2. वही, पृ. 329
3. वही, पृ. 331
4. वही, पृ. 331

ही पार्टी में शामिल हुआ है। वह जमीन अपने नाम करवाने के खातिर ही लुत्तो के साथ काम कर रहा है, "राजनीतिक लंगी लग गयी मीर समसुद्दीन को और तीसरे ही दिन मीर समसुद्दीन कांग्रेसी हो गया। थाना कमिटी का मेम्बर है वह। एम.एल.ए. या एम.एल.सी. नहीं बनाऐं कोई बात नहीं, सर्वे में पैरवी करके जमीन दिलवा देना कांग्रेस का कर्त्तव्य है। इसलिए समसुद्दीन की ओर से पैरवी कर रहा है खुद लुत्तो।"[1] जितन के दो कुंडो पर दावा करने वाला मीर समसुद्दीन धमकी देता है, "सभी मुसलमानों के दस्तगत और अँगूठे का टीम लेकर कलक्टर साहब के पास जाएंगे। साफ कहेंगे यदि हिन्दुस्तान में नहीं रहने देना है तो साफ–साफ जवाब दे दीजिए। हम लोग पाकिस्तान चले जाएंगे।"[2] इतना ही नहीं जातिवाद एवं अवसरवाद का इतना बोलबाला बढ़ गया है कि मउर जाति का सुचितलाल भी जितन बाबू के एक कूंड पर दखल करने की कोशिश करता है। असफल होने के बाद वह सोशलिस्ट पार्टी को छोड़कर लुत्तो की कांग्रेस पार्टी में शामिल होने का प्रयास करता है लेकिन वहाँ उसे सफलता नहीं मिलती है। अन्त में सुचितलाल मउर कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य बन गया है। कम्युनिस्ट पार्टी में वह इसलिए जाता है कि भूमि सर्वेक्षण के समय पार्टी के माध्यम से अपना हित साध सके। कम्युनिस्ट पार्टी के सामने वह प्रस्ताव रखता है, "कब्जे में कम से कम पचास–साठ घर हैं। इतने घर सिम्पथाइजर हो जायेंगे तुरन्त।"[3] यहाँ लोगों की विचारधारा एकदम खत्म हो गयी है अपने स्वार्थ के लिए एक पार्टी से दूसरे पार्टी का सदस्य बनने की वे कोशिश कर रहे हैं।

आपसी वैरभाव के कारण लोग एक दूसरे की जमीन में तरह–तरह से दखलंदाजी करते हैं। इतना ही नहीं अगर एक व्यक्ति की ज़मीन एक जगह सम्मिलित रूप से मिल जाएगी तो दूसरे व्यक्ति को इससे परेशानी होगी। इसके लिए भी लोग राजनीतिक दलों का सहारा ले रहे हैं। गाँव में यह अन्ध आतुरता नेताओं में भी देखी जा सकती है। बलभद्दर बाबू अपने भाई से कहते हैं, "जैसे भी हो कांग्रेस के जरिए नहीं हो तो किसी भी पार्टी की मदद से जित्तन की धूर–धूर जमीन तितर बटेर करवा दो। तब समझूँगा बाप का बेटा।"[4]

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 332
2. वही, पृ. 338
3. वही, पृ. 358
4. वही, पृ. 48

इतना ही नहीं कांग्रेसी लुत्तो भी तो "मिसिर के बेटे को दागने के लिए ही कांग्रेस में आया है।"[1]

भूमि सर्वे के समय किस प्रकार लोग अपने स्वार्थ के लिए दूसरों का अहित करते हैं, इसका रेणु ने 'परती–परिकथा' में बड़े यथार्थ ढंग से चित्रण किया है। भूमि सर्वे के अधिकारियों और आम लोगों के बीच दलाल के रूप में काम करने वाले लोग भी अपनी राजनीति साध रहे हैं। 'परती–परिकथा' में रेणु ने दिखाया है कि किस प्रकार गरुड़धुज झा जमीन सर्वे के समय कितनी गंदी राजनीति करता है। "गरुड़धुज झा आजकल बहुत व्यस्त है। सर्वे के समय उसको रात–भर छुट्टी नहीं मिलतीं दिन–भर सोता है, अबेर में उठकर भाँग पीता है और अँधेरा होते ही 'जैगडेस' कहकर निकल पड़ता है। ... काम ही ऐसा है कि दिन में नहीं किया जा सकता। ... सर्वे कचहरी में एक ही हाकिम नहीं चपरासियों को जोड़ा जाए तो तैंतीस हाकिम हैं। तैंतीसों हाकिमो से खूब पटती है गरुड़धुज झा की। कानूनगो साहब के कान में गरुड़धुज ने ही मन्त्र फूँककर बतलाया – "बाइफ को मँगा लीजिए कानूनगो साहेब ! हर तरह की सुविधा तो होगी ही। फिर, इतना रुपैया घर कैसे भेजियेगा ? वाइफ आयेगी तो ...।" सभी हाकिम हँसकर बतियाते हैं उससें आँख की कनकी मारकर अपने सोने के कमरे में ले जाते हैं। कानूनगो साहेब की स्त्री तो बिना खिलाये छोड़ती ही नहीं कभी। बिना वकालत पास किए ही गरुड़धुज झा को सैकड़ों मुवक्किल घेरे रहते हैं। तब, एक बात है ! गरुड़धुज झा अपने मुवक्किल से काम बनाने के पहले ही फीस ले लेता है। हाकिमों की पूजा में जो हिस्सा मिलता है, उसका हिसाब अलग अलग है। ... गरुड़धुज झा बिगड़ा काम बनानेवाला आदमी है। दूसरी बात, गरुड़धुज झा के मार्फत कोई काम बनवाना हो तो उससे सीधे बात मत कीजिए। काम खराब हो जायेगा।"[2]

भूमि सुधार कार्यक्रन लागू होने से लोगों में एक प्रकार का उत्साह तो आया, लेकिन इससे बहुत सारी परेशानियाँ भी बढ़ीं। लोग आपसी वैरभाव करके लड़ाई झगड़ा में मुकद्मेबाजी के चक्कर में परेशान हो गए। इतना ही नहीं जमीन अपने नाम कराने के चक्कर में कानूनगो इत्यादि अधिकारियों को भी धन देना पड़ा, जिससे किसान कंगाल होते गए। इन सबका फायदा महाजन और पूँजीपति उठाते गए। भूमि सर्वे के समय महाजन एवं

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 397
2. वही, पृ. 403–04

पूँजीपतियों की क्या स्थिति थी ! इस पर लिखते हुए रेणु ने कहा है, "रोशन बिस्वां गाँव का सबसे बड़ा महाजन है आजकल। जमीन कम थीं लेकिन इस सर्वे में वह भी पूरी हो गयी। बंधकी, सूद, रेहन जमीन के अलावा कवाला बनकर बहुत सी जमीन खरीदी है। सारे गाँव में बस रोशन बिस्वाँ ही एक है जिसकी जमीन पर एक भी तनाजा नहीं पड़ा। असल में, उसके पास जितनी जमीन थी, सब रेहन और बँधकी। उस पर तनाजा देने से क्या फायदा ? सेर्वे के समय हजार–बारह सौ रुपैया हमेशा घर में मौजूद रखने के लिए जमीनवालों ने रोशन बिस्वाँ से रुपया मांगा। बिस्वाँ ने सबको एक ही जवाब दिया – "जमीन बंधकी कौन लेता है आजकल ? जेबर लाइए। नहीं तो जमीन फरोखतनामा लिख दीजिए। ... तीन सौ बीघे जमीन खरीदी है उसने। रोजकर्ज लेनेवालों की भीड़ लगी रहती है।"[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि जमीन के लिए किस प्रकार की राजनीति की जा रही है। कोई भी व्यक्ति अपने परिवार के ही दूसरे व्यक्ति के ऊपर भी विश्वास नहीं कर रहा है। ऐसे में राजनीतिक दल भी अपनी स्वार्थपूर्ति की नीति में पीछे नहीं रह रहे हैं। समय ऐसा आ गया है कि व्यक्ति का कुछ महत्त्व नहीं है, केवल पैसे का ही महत्व रह गया है। व्यक्ति स्वार्थ के लिए कितना नीचे गिर सकता है। रेणु ने इसे बहुत ही अच्छे ढंग से परती–परिकथा में चित्रित किया है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 336–37

II. दलीय राजनीति

आजादी के बाद प्रत्येक राजनीतिक दल की विचारधारा खत्म होकर उसके स्थान पर स्वार्थ, भ्रष्टाचार, जातिवाद, भाई–भतीजावाद, क्षेत्रीयता एवं अवसरवाद की राजनीति हावी होने लगती है। रेणु में 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि आजादी के पहले जिन राजनीतिक पार्टियों के मूल्य मानवीय हितों के लिए थे अब वह व्यक्तिगत स्वार्थ और अवसरवाद के लिए प्रयुक्त होने लगे हैं। जो राजनीतिक दल भारत के लिए नवनिर्माण का स्वप्न देख रहे थे, वे दल स्वप्न पूरा होने पर, घटिया राजनीति का उदाहरण प्रस्तुत करने लगे हैं। राजनीतिक दल चाहे वह कांग्रेस हो, कम्युनिस्ट पार्टी या समाजवादी, सभी दलों के चरित्र में पतन दिखाई देना शुरू हो गया है। रेणु ने इस पीड़ा को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से भोगा था इसलिए बहुत ही यथार्थपूर्ण ढंग से उन्होंने राजनीतिक दलों के चरित्रों को उद्‌घाटित किया है।

'परती–परिकथा' के परानपुर गाँव का छोटा–सा बच्चा भी इस तथ्य को जानता है कि "राजनैतिक संगठन करने वाले को कोई दोष नहीं लगता।"[1] रेणु ने यहाँ इस बात का संकेत दिया है कि भारत के गाँव में राजनीतिक पार्टियाँ किस प्रकार से प्रचार–प्रसार करती हैं उनकी क्या छवि बनी है तथा उनके मूल्य क्या हैं ?

कांग्रेस पार्टी का भारतीय समाज में बहुत महत्वपूर्ण स्थान थां उसने भारत की आजादी के लिए जनता को आन्दोलित करके ब्रिटिश सत्ता की जड़ों को हिलाकर रख दिया था। उस समय कांग्रेस पार्टी की सोच देश के प्रति केन्द्रित थीं वह सोच रही थी कि किस तरह भारत को गुलामी की जंजीरों से छुटकारा दिलाया जाए और इसमें कांग्रेस पार्टी को सफलता भी मिली। आजादी के पहले कांग्रेस की स्थिति देखिए ? "स्वाधीनता के पूर्व भारतीय कांग्रेस ही एकमात्र प्रभावी राजनीतिक संगठन था। एक राजनीतिक दल के लिए अपेक्षित कुछ गुण तो इसमें बहुत अधिक मात्रा में थे और कुछ गुणों का नितान्त अभाव था।"[2] लेकिन स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस के चरित्र में बदलाव आना शुरू हो गया है। अब

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 125
2. क्रान्ति कारक टिकनि त्यांचा काल : ले. अनंत जनार्दन करन्दीकर काड प्रकाशन, पुणे (1969)

कांग्रेस के अन्दर कांग्रेस पार्टी की विचारधारा के बदले व्यक्तिगत स्वार्थ, जातिवाद, अवसरवाद की राजनीति हावी हो गई है।

कांग्रेस पार्टी गाँवों में पहुँचने के बाद क्या राजनीतिक गुल खिलाती है। 'परानपुर' गाँव का लुत्तो किस प्रकार अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए कांग्रेस पार्टी का सदस्य बनता है और अपने स्वार्थ और हित के लिए कांग्रेस पार्टी के नाम पर राजनीति करता है, यह कहीं न कहीं गाँव की कांग्रेसी पार्टी की स्थिति का स्वरूप बनकर समाज के सामने आता है। कांग्रेस अब कुछ व्यक्तियों के हाथों की पार्टी बनकर रह गयी है।

'परानपुर' गाँव में कांग्रेसी नेता किस प्रकार की चलाकबाजी और कूटनीति का सहारा लेते हैं, इसका बहुत ही यथार्थ चित्रण 'परती–परिकथा' मे मिलता है। लुत्तो को लड़ैया राजनीतिक भी कहा जाता है। वह अपने निजी स्वार्थ के लिए राजनीति की हर कूटनीति करता है। वह अपनी राजनीतिक शक्ति का पूरा उपयोग करता है। लुत्तो मिसिर के बेटे को दागने के लिए राजनीति में आया हैं लेकिन उसका इसमें व्यक्ति स्वार्थ निहित है, क्योंकि लुत्तो शिवेन्द्र मिश्र के पुत्र जितेन्द्र मिश्र से अपने पिता के अपमान का बदला चुकाना चाहता है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह कांग्रेस का दामन पकड़ा हैं इतना ही नहीं लुत्तो परानपुर गाँव का प्रमुख कांग्रेसी नेता बन गया है।

राजनीति की गुटबंदी में परानपुर के विकास को बराबर आघात पहुँचता है। लुत्तो जितेन्द्र के विरुद्ध गाँव के लोगों को संगठित करता हैं असल में लुत्तो जाहिल जरूर है लेकिन वह बड़ा राजनीतिक लंगीबाज है। उसने अपनी लंगीबाज बुद्धि से समसुद्दीन को कांग्रेस का सदस्य बनाने के लिए विवश कर दिया। समसुद्दीन आजादी के चार दिन पहले तक कांग्रेस पार्टी को गाली देता था लेकिन आज अपने हित के लिए वह कांग्रेस में शामिल हो गया है। "समसुद्दीन कुछ दिनों तक स्थानीय राजनीतिक दलों के बाजार का बिना बिका हुआ कीमती सौदा बनकर दल के नेताओं को सुनाता रहा – जिस तरह हिन्दुओ में ब्राह्मण, उसी तरह मुसलमानों में मीर–पीर–फकीर ! मैं तीन हजार साढ़े आठ सो मुसलमानों का मीर हूँ। जो कहूँगा, तीन हजार साढ़े आठ सो मुँह से। जो करूँगा तीन–दूना ...।"[1] कहने का मतलब है कि किस तरह लोग वोट की राजनीति करने के लिए अपना हित साध रहे

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 332

हैं। कांग्रेस पार्टी में अब विचारधारा के मूल्य के स्थान पर वोट की राजनीति हावी हो गयी है। इसलिए तो मीर समसुद्दीन को कांग्रेस में शामिल कर लिया गया। "थाना कांग्रेस के सभापति जी यों ही लुत्तो को इतना नहीं मानते ! ... लुत्तो में एक बड़ा गुण है, उसको बात बहुत जल्दी सूझती है। किसी भी समस्या की सदरी चाबी नहीं मिल रही हो तो लुत्तो से कहिए तुरत एक चोरचाबी तैयार कर देगा। जब समसुद्दीन मीर ने अपनी कीमत एम.एल.ए., एम.पी. के रूप में बतायी तो सभी पार्टीवालों ने आपस में सोच–विचार करने के लिए बैठक बुलायी। ... सभी पार्टीवाले तैयार हुए। लेकिन थाना कांग्रेस के सभापति साहब के जिला सभापति साहब तैयार नहीं हो रहे थे। ... डिस्ट्रिक्ट बोर्ड – बोर्ड की मेम्बरी समसुद्दीन क्यों लेगा, जब दूसरी पार्टीवाले उसे तकदीर लड़ जाने पर मिनिस्टर तक बनाने को तैयार हैं। लुत्तो ने कहा – "सभापति ! आप लोग तो बेकार परेशान हो रहे हैं। खुशामद करने की क्या जरूरत ? मैं जानता हूँ साफ बात ! वह पाकिस्तानी एजेण्ट हैं कितना सबूत लीजिएगा आप ? हम देंगे चलिए ...। अभी भी उसके घर में रजाकार मार्का टोपी है।"[1]

लुत्तो के समझाने पर सभापति मान गए और लुत्तो को राजनीतिक लंगी बाज की उपाधि दी। इतना ही नहीं लुत्तो की राजनीतिक लंगीबाजी मीर समसुद्दीन के ऊपर भी लग गयी, "राजनीतिक लंगी लग गयी मीर समसुद्दीन को और तीसरे ही दिन मीर समसुद्दीन कांग्रेसी हो गयां थाना कमिटी का मेम्बर है वह। एम.एल.ए. या एम.एल.सी. नहीं बनाए कोई बात नहीं, सर्वे में पैरवी करके जमीन दिलवा देना कांग्रेस का कर्त्तव्य है।"[2] लुत्तो ने राजनीतिक लंगीबाज के वजह से निरसू भगता पर परमादेव की सवारी ले आने की योजना तैयार करवाई और निरसू ने वही कुछ बोला जो लुत्तो ने उसे सिखाया था। लालच देकर वह सरबजीत चौबे को भी अपने पक्ष में करके जित्तन के विरुद्ध कर दिया। इतना ही नहीं लुत्तो सुन्नरिनैका के प्रसंग में अपनी योजना पर पानी फिरता देखकर तिलमिला उठा। इसलिए उसने प्रयास किया कि सन्नरिनैका की कहानी सुनने के लिए एक व्यक्ति भी हवेली मे न जाए। इसी कारण दुलारीदाय की धारा को फिर से लाने के लिए की गई योजना के विरुद्ध जनता को भड़काकर उसने जनता के रोष को बड़ी चालाकी से जित्तन के विरुद्ध मोड़ दिया। जब मारपीट के सहने के बाद जित्तर कोई कार्यवाही नहीं करता है तब जनता समझ जाती है कि लुत्तो 'लुच्चों का सरदार' है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 332
2. वही, पृ. 332

लुत्तो अपने व्यक्तिगत अपमान को जातिवाद के रूप में प्रचारित करके राजनीतिक फायदा उठाना चाहता है वह जानता है कि जाति के नाम पर लोगों को आसानी से संगठित कर सकता हूँ इसलिए वह जातिवाद के आधार पर अपनी राजनीति करता है। यह कांग्रेस पार्टी के चरित्र का एक पार्ट ही है कि किस प्रकार पार्टी के अन्दर जातिवाद के नाम पर राजनीति करते हैं। लुत्तो यह सोचता है कि वह जातिवाद का अपमान बचपन से सहता आ रहा है। चंपानगर के शारदा बाबू की जात्रापार्टी के समय हुए अपने अपमान को वह कैसे भूल सकता है। "हाड़ को माँस से अलग कर देने वाली बोली"[1] यह सुनकर उसके मन में एक प्रकार की छटपटाहट उठती हैं वह केवल अपने व्यक्तिगत अपमान को जातिवाद की बात करके सवर्णों का दुश्मन भी बना लेता है। असवर्ण जातियों के सहारे वह कार्यकर्त्ता से नेता और नेता से मंत्री बन कर सवर्णों को रास पकड़कर चलाने के सपने देखता है। वह जातिवाद के सहारे राजनीति करने की कोशिश करता है। लुत्तो के चरित्र में दोगलापन भी हैं लोग जब 'खवास' कहते हैं तो उसे चोट लगती है, लेकिन वही लत्तो जब–तब बालगोबिन मोची को यह कहने से नहीं चूकता है कि ढोल–पोपी बजाने वाले राजनीति कैसे समझ सकते हैं ? लुत्तो पार्टी चन्दा का गोलमेल कर जाता है। इसीलिए पुलिस इन्स्पेक्टर ने लुत्तो से मुचलका लिया हैं यह चरित्र गाँव में कांग्रेस पार्टी की राजनीति करने वाले का है। रेणु ने यह दिखाया कि आने वाले समय में ऐसे ही लोग के हाथ कांग्रेस पाटी जाने वाली, जिनके पास उनकी कोई बात की अहमियत नहीं है कि कांग्रेस पार्टी की एक विचारधारा है, उसके अनुसार राजनीति करें। उनके लिए महत्वपूर्ण बात है कि उनका व्यक्तिगत स्वार्थ किस प्रकार सिद्ध हो इसके लिए वह घटिया से घटिया कार्य करने में उनको शर्म नहीं आएगी।

'परती–परिकथा' के परानपुर गाँव का छोटा सा बच्चा भी जानता है कि "राजनैतिक संगठन करने वाले को कोई दोष नहीं लगता।"[2] इसलिए पीताम्बर झा ब्राह्मण होकर भी मकबूल नाम रखकर साम्यवादी दल का स्थानीय सचिव बन गया हैं जबकि इस शाखा की स्थापना मनमोहन बाबू ने परानपुर गाँव में की थी। पीताम्बर झा उसका शिष्य था। पीताम्बर झा मकबूल नाम रखने के साथ ही साथ नुकीली फ्रेंचकअ दाढ़ी भी रख ली है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 362
2. वही, पृ. 425

अधिकांश गाड़ीवान मुसलमान उसकी पार्टी के सदस्य बने हैं। "दिन रात मुसलमान टोली में रहता है। उनके घर मुर्गी का अंडा देता है, बधना से पानी ढालकर पीता, उनके घर की बनी हुई रोटी भी खाता।"[1] लेकिन गाँव वालों को इस बात की जानकारी है कि वह यह सब काम निकालने के लिए करता है। रेणु ने इस बात की ओर ध्यान खींचा है कि आजादी के बाद जब साम्यवादी पार्टी ग्रामीण राजनीति में प्रवेश करती है तो उसके चरित्र में किस प्रकार बदलाव आता है। साम्यवादी पार्टी का गठन ही इसलिए हुआ था कि किसानों एवं मजदूरों को हक दिलाया जाएगा लेकिन यहाँ तो कुछ और ही नजारा है। ग्रामीण राजनीति में साम्यवादी पार्टी किस प्रकार मुखौटों एवं संकेतों का राजनीतिक खेल खेलती है। 'परती–परिकथा' में रेणु ने इसका यथार्थ चित्रण किया है। मकबूल प्रार्थना मन्दिर को 'अफीम की दुकान' समझता है। उसकी इस समझ के रहते हुए मुसलमान गाड़ीवान किस प्रकार कम्युनिस्ट बने रह सकते थे। इस प्रसंग के बाद अपनी पार्टी मीटिंग में उसने स्वीकार किया, "यह हमारी और खास कर मेरी करारी हार का एक मजार है।"[2]

साम्यवादी दल में किस प्रकार सिद्धान्तों के साथ खिलवाड़ शुरू हो गया था, इसका बहुत बढ़िया नजारा 'परती–परिकथा' में रेणु ने दिखाया है। साम्यवादी पार्टी की नीति थी कि जो उसकी पार्टी के सिद्धांत हैं वही उसके व्यावहारिक रूप भी रहेंगे, लेकिन बाद में किस प्रकार का इसमें घाल–मेल हो जाता है, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। "मेरे ख्याल में सबसे सही रास्ता यह है कि कम्युनिस्ट की हैसियत से हम इस भोज का विरोध करें और ग्रामवासी के नाते इसमें जरूर शामिल हों। ... वहाँ यह भी देखें कि अपनी पार्टी से प्रभावित किसानों और मजदूरों के पत्तल में सारी चीजें समान रूप से परोसी गई हैं या नहीं।"[3] सिद्धान्त और व्यवहार के इस अलगाव को रंगलाल जैसे प्रगतिशील लोग ठीक नहीं मानते हैं। बाद में कोसी प्रोजेक्ट में मकबूल अपनी गलती स्वीकार कर लेता है तो रंगलाल खुश हो जाता है। कहने का मतलब है कि साम्यवादी पार्टी से किसानों एवं मजदूरों को जो फायदा होने की बात थी वह भी आने वाले समय में नहीं हो पा रहा है। इस पार्टी में मकबूल जैसे लोग शामिल हो गए हैं जिनका राजनीतिक चरित्र मुखौटों एवं संकेतों पर आधारित है न कि पार्टी की विचारधारा और सिद्धान्तों पर। साम्यवादी पार्टी के

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 425
2. वही, पृ. 427
3. वही, पृ. 569

कार्यकर्त्ता पार्टी सिद्धान्तों की बात करते हुए किसानों एवं मजदूरों के खिलाफ हो रहे अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाते हैं लेकिन सच्चाई यह है कि मकबूल जैसे पार्टी के कार्यकर्त्ता उन्हीं मजदूरों का शोषण करने से नहीं चूकते। "बड़ा कौमलिस्ट बना है, तीनों भाई मिलकर उधर गरीबों का गला घोंट रहे हैं इधर मियाँ साहब बनकर किसान मजदूर की लीडरी करना चाहता है मकबूल। नौकरों को बड़ा भाई मारता है तो कौमलिस्ट भाई चुप नहीं रहता। कहता है और मारिये साले कों बड़ा काबिल हो गया है।"[1]

परानपुर गाँव में सोशलिस्ट पार्टी की शाखा भी है। लेकिन इस दल का कोई भी राजनीतिक पहलू परानपुर गाँव में उभरकर नहीं आता है। इस पार्टी के अपने जो अन्तर्विरोध हैं, उसी की तरफ रेणु ने दृष्टि डाली है। पार्टी के कार्यकर्त्ता किस प्रकार व्यक्ति गत स्वार्थ के लिए पार्टी का फायदा उठाते हैं। इतना ही नहीं पार्टी के चन्दे को ही खा जाते हैं और एक दूसरे पर आरोप प्रत्यारोप लगाते हैं। ग्रामीण राजनीति में समाजवादी दल की भूमिका पर भी रेणु ने प्रश्न चिह्न लगाए हैं। रेणु ने दिखाया है कि किस प्रकार से लोग विचारधारा को त्यागकर व्यक्तिगत हित साध रहे हैं। सोशलिस्ट पार्टी पर लिखते हुए उन्होंने कहा है "सोशलिस्ट पार्टी के जयदेवसिंह और रामनिहोरादास का आपसी मतभेद इतना बढ़ गया कि भरी बैठक में ही दोनों के दलवाले लड़ पड़े। ... जयदेवसिंह परानपुर पार्टी का इनचार्ज है और रामनिहोरादास ऑफिस सेक्रेटरी। जयदेवसिंह से उसकी हमेशा लड़ाई हुई है – बचपन से हीं स्कूल के मास्टर साहब ने नाम रखा था – सुन्द–उपसुन्द ! ... सो जयदेवसिंह को विश्वास साथियों से पता चला कि रामनिहोरादास के पास पार्टी की पुरानी रसीद–बही है जिस पर वह चुपचाप चन्दा वसूलता है, खाता है। बात खुली, जब सिरचन बढ़ई ने आकर जयदेवसिंह के पास फरियाद की – "बावन रुपये का है पलंग, बाबू साहेब ! पलंग बनवाकर ले गए रामनिहोरा बाबू। एक महीना दौड़ने के बाद, दाम के नाम पर एक डिबलूकट रसीद काटकर दीहिन हैं रसीद लेकर हम क्या करें।"[2] इससे पता चलता है कि जो पार्टी किसानों एवं मजदूरों के अधिकार के लिए लड़ाई लड़ती है उसके नेता अपनी जेब भरने में लगे हैं तथा आपसी वैरभाव को पार्टी के हितों से ज्यादा महत्व देकर लड़ाई लड़ते हैं, "पार्टी किसी की बपौती जमींदारी नहीं। इनचार्ज बेईमानी करे, रुपया हड़प जाएं चाहे पार्टी को जहन्नुम में भेज दे, कर्ज चढ़ाकर। कोई बात नहीं। अपने पॉकेट कॉमरेडों की बीवी–दीदी फुफुओं

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 246
2. वही, पृ. 356

के लिए चुनाव फण्ड से पैसे निकाल कर दिए जाते हैं। साड़ी–सेमिज ब्लाउज के लिए ... हाँ, हाँ। रामनिहोरादास प्रूफ देगा। चौबीसों घण्टे काम करनेवाला साथी यदि चार–आठ आने पैसे बतौर मदद के ले लेता है तो बात हाय कमाण्ड तक पहुँच जाती है – पटना।"[1] कहने का मतलब है कि पार्टी के मूल्य अब नहीं रहे व्यक्ति के मूल्य हावी हो गए हैं। पार्टी का केवल काम चलाने और गलत कार्यों के द्वारा उसका दामन पकड़कर अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिए सहारा लिया जा रहा है। राजनीतिक मूल्य खत्म हो गए हैं धन और व्यक्ति के मूल का महत्व बढ़ गया है।

जितेन्द्र को राजनीतिक क्षेत्र में लाने वाले प्रगतिशील समाजवादी पार्टी के प्रधान संस्थापक कुबेरसिंह का राजनैतिक और व्यक्तिगत चरित्र विसंगतियों से भरपूर है। बिहार सोशलिस्ट पार्टी के एक प्रसिद्ध कलाकार नेता ने कहा था, "जितेन्द्र। इस कुबेर के चक्रान्त में तुम किस तरह पड़ गए ? वह तुम्हारा शोषण कर रहा है। ... कुबेर सौभाग्यशाली है।"[2]

सचमुच किस्मत का कुबेर है, कुबेर सिंह सन् 36 से 40 तक उसने तीन पार्टियों में डुबकी लगाई और हर बार घोंघे सीपों से खूबसूरत हो गया था उसका चेहरा और तभी एक नई पार्टी बनाने का निश्चय उसने कर लिया था, जितेन्द्र के सहयोग सें जितेन्द्र ने उसका साथ भी दिया, उसकी सारी कमजोरियों, हठधर्मिता, तानाशाही और चरित्रहीनता के बावजूद भी। लेकिन दो स्थलों पर उसके सिद्धान्त कुबेर सिंह से टकराये सुभाष बाबू के प्रसंग को लेकर और चंडीपुर बम केस में अंडमान की सजा पाने वाले गदरपार्टी के प्रधान माखनदा को वाग्दत्ता वाणी को कुबेर सिंह की इच्छा के विरुद्ध माखनदा के पास पहुँचने के प्रश्न को लेकर। वाणीदास पर पार्टी परित्याग या पार्टी परिवर्तन का आरोप है। परिणाम स्वरूप कुबेरसिंह ने जितन को न सिर्फ अपनी पार्टी से निष्कासित किया, अपितु उस पर जेनेरल रैली में गदर पार्टी का भेदी कार्यकर्त्ता होने के अतिरिक्त अन्य कई अश्लील झूठे आरोप लगाकर दूसरे सदस्यों द्वारा अपमानित करवाया उन लोगों ने उसकी हत्या का भी प्रयास किया लेकिन राजा कामरूप नारायण की बुद्धिमानी से वह बच गया। बिहार के पत्रों में भी उसने जितेन्द्र के विरुद्ध विषवमन किया, "ऐसे चरित्रहीन व्यक्ति को किसी भी राजनैतिक पार्टी में जगह नहीं मिलेगी।"[3]

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 356
2. वही, पृ. 530
3. वही, पृ. 479

जितेन्द्र ही कुबेर सिंह के सारे भाषण, लेख वक्तव्य आदि का लेखन करता था, पत्रिका के सम्पादक का कार्य भी वही करता, लेकिन कुबेर सिंह किसी से कह रहा था कि "कलम पकड़ कर राजनीति लिखना मैंने सिखाया और जितेन्द्र कहता फिरता है कि ...।"[1] इतना ही नहीं "जितेन्द्र जिस पार्टी में प्रवेश कर देश सेवा करने का प्रयास करता, कुबेर सिंह गुप्त संदेश भेजकर उसकी जड़ ही करवा देता है।"[2]

इस प्रकार जितेन्द्र को राजनीतिक लंगी लगाकर कुबेरसिंह ने आधा मार दिया, राजनीतिक क्षेत्र में नपुंसक और नकटा बनाकर छोड़ दिया और अब राजनीति के नाम से ही जितेन्द्र को उबकाई आती है, घृणा से चेहरा विकृत हो उठता है। इरावती की सांस्कृतिक रुझान को देखकर उसका शंकालु मन पूछ बैठता है कि "तुम्हारे इस सांस्कृतिक अनुष्ठान के पीछे कोई राजनीतिक हाथ तो नहीं ? सरकारी या गैर सरकारी किसी किस्म की राजनीति से प्रभावित तो नहीं लोकमंच की कल्पना।"[3]

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय राजनीतिक दलों में स्वतंत्रता के बाद नैतिक मूल्यों एवं मान्यताओं के प्रति जो गिरावट दिखाई देती है, उसका भारतीय ग्रामीण समाज की राजनैतिक परिस्थितियों का वास्तविक स्वरूप क्या था, इसका सर्वांग चित्रण रेणु ने अपने इस उपन्यास में करके 'ग्रामीण जीवन के राजनैतिक दस्तावेज' को प्रस्तुत किया है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 400
2. वही, पृ. 400
3. वही, पृ. 589

III. जातिवाद की राजनीति

"जातिवाद की दीमकों का मुध्य आहार रहा है मनुष्य का हृदय।"[1] रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि परानपुर गाँव में जाति व्यवस्था का परंपरागत रूप विद्यमान है। "बहुत उन्नत गाँव है परानपुर। साह–आठ हजार की आबादी है। प्रत्येक राजनीति पार्टी की शाखा है यहाँ।"[2] यहाँ विभिन्न जातियों के तेरह टोले में बंटी है। जातिवाद का असर इतना बढ़ गया है कि गाँव के विकास में बहुत बड़ा अवरोध सिद्ध हो रहा है। "... डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ने प्रस्ताव पास कर परानपुर अस्पताल को बन्द कर दिया है। ... भूमिहार डॉक्टर को राजपूतों ने मिलकर धमकी दी। कायस्थ डॉ. के खिलाफ दरखास्त दी गयी थी – पैसा लेकर भी दूसरी जातिवालों को बढ़िया दवा नहीं देता और कायस्थों को मुक्त में दवा और सूई देकर इलाज करता है। ... डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ने अस्पताल को बन्द कर दिया, पाँच साल पहले।"[3] कहने का मतलब यह है कि जातिवाद का विकृति स्वरूप इतना अधिक बढ़ गया है जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती है। लोग केवल अपनी जाति तक ही सीमित रह पाना चाहते हैं। भारत के नवनिर्वाण में जातिवाद एक बाधक कारण बनकर सामने आयां भारतीय समाज में जातिवाद की बुराई प्राचीन काल से व्याप्त रही है लेकिन आधुनिककाल में उसका स्वरूप और अधिक विकृत हुआ क्योंकि आधुनिककाल में राजनीति जातिवाद का पोषक तत्व बनकर सामने आई। आज के भारतीय समाज में जातिवाद राजनीति का एक अहम भाग बनकर सामने आ रही है। रेणु ने दिखाया है कि आजादी के बाद किस प्रकार राजनीतिक पार्टियाँ अपना हित साधने के लिए जातिवाद का सहारा लेते हैं और उस पर ही अपनी घटिया राजनीति करने की कोशिश करते हैं। "पिछले आठ–दस वर्षों से जातिवाद ने काफी जोर पकड़ा है। राजनीतिक पार्टियाँ भी जातिवाद की सहायता से संगठन करना जायज समझती हैं। राजनीति के दंगल में सब कुछ माफ है।"[4]

रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि जातिवाद की बुराई लोगों के हृदय में इस प्रकार बैठ गई है कि उससे उबर पाना बहुत ही मुश्किल काम है। "आठ वर्षों से जातिवाद के दीमकों का मुख्य आहार रहा है मनुष्य का हृदय। सर्वे की आँधी में छलनी

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 332
2. वही, पृ. 323
3. वही, पृ. 323
4. वही, पृ. 324

जैसा आदमी का दिल – पीपल के सूखे पत्ते की तरह उठ रहा है।"[1] कहने का मतलब है कि जातिवाद का असर लोगों के हृदय में इस तरह बैठ गया है कि वे सांस्कृतिक जीवन के महत्त्व को भी भूल गए हैं। रेणु लिखते हैं कि "पिछले डेढ़ साल से गाँव में न कोई पर्व ही धूमधाम से मनाया गया है और न किसी त्योहार मे बाजे ही बजे हैं। इस दरम्यान संसार में आनेवाले नये मेहमानों के स्वागत में सोहर का गीत, सो भी कहीं नहीं गाया गया। लड़के–लड़कियों के ब्याह रुके हुए हैं। ... गीत के नाम पर किसी के पास एक शब्द भी नहीं रह गया है मानो। मधुमक्खी के सूखे मधुचक्र–सी बन गयी है यह दुनिया।"[2]

गाँव में जातिव्यवस्था के बनते–बिगड़ते सम्बन्ध जब आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से अनुप्राणित होने लगे तो व्यवस्था में विद्यमान धार्मिक भय का स्वरूप बिगड़ने लगता है। झूठ बोलकर धोखा देकर जाति परिवर्तन कर अपने हितों को पूरा करने के लिए बदलाव आना ग्रामीण समाज में शुरू हो गया था। भूमि सर्वे के समय किस प्रकार की जातिवाद की गंदी राजनीति की जाती है। निम्नजाति के लिए भूमि वितरण का विशेष विधान होने के कारण गाँव की ऊँची जाति वालों के लिए भी हरिजन बन जाना आज की जातिवादी विकृति स्वरूप का ही एक हिस्सा है। "तीन साल पहले तक जो क्षत्रिय अपने को खास मानसिंह के वशंज बतलाते थे अथवा आल्हा–ऊदल की सन्तान बताकर दंगा फसाद करते थे – देख लीजिए उन्हें उनके लड़के शिउ्यूल्ड कॉस्ट और एवॉरिजिनल कम्युनिटी की फहरिस्त में अपना नाम लिखाने के लिए धक्कम–धुक्की कर रहे हैं। सोलकन्ह ही नहीं, कुछ बुनियादी बाबुओं ने भी तिकड़म जोगाड़ करके परिगणित जाति में अपनी जाति का नाम दर्ज करवा लिया है – नहीं, नहीं कौन कहता है कि हम लोग राजपूत हैं। देख लीजिए गाँव में जाकर, हमारी जाति के लोग भेड़ चराते हैं। औरतें साल में तीन ही बार नहाती हैं, आज भी !"[3] स्पष्ट है कि व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए किस प्रकार से लोग अपनी जाति छिपाकर निम्नजाति का प्रमाण–पत्र बनवाने के लिए तरह–तरह के झूठे साक्ष्य प्रस्तुत करने की कोशिश करते हैं। यही जातियाँ कहीं न कहीं निम्नजातियों का शोषण करती हैं। लेकिन राजनीतिक रूप से फायदा उठाने में पीछे भी नहीं रहती हैं। आजकल गरुड़धुज झा भी अपने को परिगणित जातियों में नामांकित कराने के लिए तरह–तरह के प्रयास कर रहे हैं।

---

1. रेण रचनावली, भाग–2, पृ. 329
2. वही, पृ. 329
3. वही, पृ. 403

यह वही गरुड़धुज हैं जो ऊँची जाति और नीची जाति के बीच हमेशा राजनीतिक फायदा उठाने की कोशिश करते हैं। "गरुड़धुज झा महापात्र हैं – महाब्राह्मण ! ब्राह्मण लोग भी उसके हाथ का छुआ हुआ नहीं खातें गरुड़धुज झा ने दो–तीन महीने तक कचहरी की दौड़–धूप की किसी तरह 'हरिजन ब्राह्मण' की लिस्ट में नाम लिख लिया जाये – हाँ हुजूर, डोम से भी गया–गुजरा समझते हैं लोग हमारी जाति को।"[1]

सुवंश और मलारी का अन्तर्जातीय विवाह गाँवों में युवावर्ग में पनपने वाली प्रगतिशील चेतना का ही परिणाम है। इसके विवाह की आलोचना करने वाले ग्रामवासी भी जब यह सुनते हैं कि उनका विवाह सरकारी था और बड़े–बड़े नेता और मन्त्री उसकी शादी में शामिल हुए थे तो उनकी बोलती बन्द हो जाती है। गाँव वालों के दृढ़ जातीय संस्कार अब सामाजिक और राजनीतिक सत्ता के महत्व को आँकने लगे हैं। गाँव के कम्युनिस्ट नेता पीताम्बर झा राजनीति के कारण मुसलमान टोली के समस्त वोटों को प्राप्त करने के उद्देश्य से अपना नाम 'मकबूल' रख कर वह मुसलमानों की टोली में रहता है। वह मुसलमानों के घर मुर्गी–अंडा खाता है, बंधना में पानी डालकर पीता है, किन्तु "... राजनीतिक संगठन करने वालों को कोई दोष नहीं लगता, यह गाँव का छोटा सा बच्चा भी जानता है। ... बड़ा क्रान्तिकारी काम किया है मकबूल ने।"[2]

"भारतीय समाज में सांस्कृतिकरण की प्रक्रिया तो सैकड़ों सालों से चलती रही है, इसमें नीची जाति अपने से ऊँची शक्तिशाली जाति के नियमों एवं प्रथाओं का अनुसरण करती है।"[3] इस प्रक्रिया में बदलाव भारत की आजादी के बाद व्यापक रूप से दिखाई पड़ता है। सदा अनुकरण करने वाली जातियों ने नई व्यवस्था में अपनी हिस्सेदारी की कोशिश शुरू कर दी। अपनी सामाजिक एवं राजनीतिक अवस्था को उन्नत बनाने तथा सत्ता में हिस्सेदारी के लिए निम्न जातियाँ खुलकर सामने आने लगी।

भारतीय गाँवों में राजनीति के प्रवेश के बाद किस प्रकार जातिवाद का जहर फैलने लगता है इसकी कल्पना नहीं की जा सकती है। रेणु का 'परती–परिकथा' का परानपुर गाँव इस प्रकार की राजनीति के जहर से जूझ रहा है। नगर की भांति गाँव में भी

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, 403
2. वही, पृ. 425
3. आधुनिक भारत मे सामाजिक परिवर्तन – एम.एन. श्रीनिवासन, पृ. 21

विभिन्न राजनीतिक दलों का अखाड़ा बन गया है। परानपुर गाँव में तेरह टोले जातियों की हैं और सभी टोले किसी एक राजनीतिक दल के साथ नहीं हैं, बल्कि भिन्न–भिन्न दलों के साथ उनका सम्बन्ध है। "पिछले आठ चुनावों में सालिड वोट कांग्रेस को नहीं मिला, इसीलिए इस बार सालिड वोट प्राप्त करने के लिए हर पार्टी की एक शाखा प्रत्येक मास अपनी बैठक में महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास करती है।"[1] ये सभी दल अपनी स्थिति को शक्तिशाली बनाने के लिए सभी प्रकार की युक्तियों का प्रयोग करते हैं राजनीति में जातिवाद के प्रयोग से भी वे संकोच नहीं करतें गाँव में जातिवाद की दलगत नीति इन्हीं राजनीतिक दलों द्वारा प्रेरित की जाती है – "पिछले आठ दस वर्षों में जातिवाद ने काफी जोर पकड़ा है। राजनीतिक पार्टियाँ भी जातिवाद की सहायता से संगठन करना जायज समझती हैं। राजनीति के दंगल में सब कुछ माफ है।"[2] भूमि सर्वे का लाभ उठाकर लुत्तो अपने राजनीतिक स्वार्थ की पूर्ति करता है और भोली–भाली जनता को अन्य दलों के प्रति भड़काने का प्रयास करता है – "सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट पार्टी वाले जिनकी मदद करेंगे उन्हें जमीन हरगिज नहीं मिल सकतीं ब्रह्मा, विष्णु उठकर आवें तब भी नहीं ...।"[3] कम्युनिस्ट पार्टी के जनरल सेक्रेटरी मकबूल के खिलाफ लुत्तो प्रेम दीवाना से मिलकर गुटबंदी करता हैं प्रेम दीवाना भी कई शहरों से चक्कर काटकर लौटा है और राजनीति में यह सीख आया है ... "हर जगह गुटबाजी है, बिना गुट बनाए कुछ नहीं हो सकता।"[4] गाँव की राजनीति किस प्रकार वैयक्तिक स्वार्थ से प्रेरित हो रही है, इसका अच्छा उदाहरण लुत्तो के माध्यम से देखा जा सकता है। लुत्तो तीन सौ एकड़ भूमि का दान पत्र बटोर लेने के बाद प्रतिशत के अनुसार कमीशन न मिलने के कारण सर्वोदयी दल के खिलाफ खड़ा हो जाता है। गाँववालों के अन्दर सर्वोदयी दल और भूदान के विरुद्ध जनता के आक्रोश को उभारने में पीछे नहीं रहता है।

परानपुर गाँव के पंचायती चुनाव में राजनीतिक दल के लोग जातिवाद का सहारा लेकर अपने स्वार्थ की सिद्धि करते हैं और अपने हित के लिए अपनी जाति को बदनाम करते हैं रेणु ने दिखाया है कि पंचायत के चुनाव में लोग तरह–तरह की घटिया राजनीति करने

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 326
2. वही, पृ. 323
3. वही, पृ.
4. वही, पृ. 428

से नहीं चूकते हैं। "लुत्तो ने गरुड़धुज झा को कानूनी दांव–पेंच का उदाहरण देकर समझा दिया – ग्राम पंचायत के लिए कांग्रेस की ओर से रोशन बिस्वा को खड़ा किया जाए नाम रहेगा रोशन बिस्वा का, काम तो सभी लुत्तो के मन से ही होंगे। गाँव पंचायत के मार्फत गाँव में पूरी तरह जड़ जमाकर लुत्तो विधान–सभा के लिए नाम पेश करेगा। रोशन बिस्वा तन–मन–धन से मदद करेगा। कैसे नहीं चुनेंगे कांग्रेस वाले ? रुपया की क्या कमी होगी ? एक ही साल में तीन–तीन चुनाव लड़ने का पैसा, ग्राम पंचायत के माध्यम ? यदि गरुड़धुज झा जमा नहीं कर दें तो वह ब्राह्मण नहीं – चमार।"[1] इससे स्पष्ट होता है कि व्यक्ति जाति को माध्यम बनाकर चुनाव में जीत कर आगे भविष्य में क्या करेंगे ? केवल धन बल, अत्याचार, भ्रष्टाचार के अलावा कुछ नहीं कर सकेंगे। ग्रामीण राजनीति में जो राजनीति की जातिवादी आग लगाई गई वह आने वाले समय में खतरनाक रूप में सामने आयेगी। जिस राजनीति में मानवीय मूल्यों का ह्रास होगा वहाँ संतुलित समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है।

गाँव की राजनीति हो या कहीं और की हो, जातिवाद का विष हर जगह फैला हुआ है। एक जाति दूसरी जाति को नीचा दिखाने की पूरी कोशिश करती है तथा उसमें सफल होने पर अपनी जाति के हित के लिए भी वे काम नहीं करते। ऐसे व्यक्ति कितने स्वार्थी हो सकते हैं इसकी कल्पना नहीं की जा सकती हैं जो राजनीतिक दल निम्नजातियों के उत्थान की बात करता है यदि निम्नजातियों के कार्यकर्त्ता काबिल है। तो उस दल के लोगों को कष्ट भी होता है। जातिवाद का असर इतना अधिक फैल गया है कि इससे बचा नहीं जा सकता है। जातिवाद को लोग मोहरे की तरह प्रयोग कर रहे हैं कम्युनिस्ट पार्टी का मकबूल परानपुर गाँव का पार्टी सचिव है वह गरीबों एवं मजदूरों के अधिकार के लिए माँग करता है, लेकिन उसके घर में ही गरीबों को उचित न्याय नहीं मिलता है। रेणु ने इस बात की ओर संकेत किया है कि आने वाले राजनेताओं का दोहरा व्यक्तित्व होगा। खाने के दाँत अलग होंगे और दिखाने के अलग।

मकबूल के दोहरे व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए रेणु ने लिखा है "बड़ा कौमनिस्ट बना है, तीनों भाई मिलकर इधर गरीबों का गला घोंट रहे हैं। इधर मियाँ साहब बनकर किसान मजदूर की लीडरी करना चाहता है मकबूल। नौकरों को बड़ा भाई मारता

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 563

है तो कौमलिस्ट भाई चुन नहीं रहता। कहता है और मारिये साले को। बड़ा काबिल हो गया है।"[1]

छोटी जाति के लोगों का काबिल होना भी बड़ी जाति के लोगों को अखरता है। लेकिन यहाँ इस बात से पूरी तरह फायदा उठाता है लुत्तो। लुत्तो खवास टोली की छोटी जाति का है। वह जित्तन के खिलाफ तरह–तरह के आरोप लगाकर अपने जाति के लोगों की सहानुभूति लेता है। लुत्तो इस बात को बहुत अच्छी तरह से जानता है कि उसकी और जित्तन से व्यक्तिगत दुश्मनी है लेकिन वह अपनी जाति के सहारे जित्तन को परेशान करने की कोशिश करता है। क्योंकि चोरी के जुल्म में लुत्तो के पिता को जित्तन के पिता ने दगवा दिया था जिसका बदला वह जित्तन से लेना चाहता है। लुत्तो अपने पिता के दागने वाले मिश्र परिवार से बदला लेने के लिए छोटी जातियों को उभाड़ता है तथा जातिवाद के आधार पर प्रजातन्त्र को छोटे–छोटे जातितन्त्र में बदलने की कोशिश करता है।

परानपुर यद्यपि राजधानी से बहुत दूर है, फिर भी लंगीबाज कांग्रेसी नेता लुत्तो अपनी छोटी जातियों में रोब जमाने लिए गलत तरीकों को अपनाता है। रेणु लिखते है कि "लुत्तो अपना रोब जमाने के लिए मिनिस्टरों का नाम लेता है।"[2] वह बालगोबिन से बोलता है "यह मत बोलना कि सभापति ने कहा है कलमबाग के मामले में जान नहीं, आगे बढ़ने का। ... कहना होगा खबर दिल्ली तक चली गयी है, नेहरू जी के पास। तब वहाँ से खबर अखबार में भी छप जायेगी। इतना सा झूठ बोलने में कया लगता है ? नहीं तो टोले के लोगों को तो जानते ही हो। तुरन्त धोती ढीली हो जाएगी।"[3]

जाति के माध्यम से लोग जमीन इत्यादि पर कब्जा करने की कोशिश करते हैं मडर जाति का सुचितलाल भी जित्तर बाबू के एक कुंड पर दखल करने की कोशिश में असफल होकर इसे राजनीतिक रूप देकर भुनाने का प्रयास करता है। सुचितलाल के "कब्जे में कम से कम पचास–साठ घर हैं। इतने घर सिम्पथइजर हो जायेंगे तुरन्त।"[4] पार्टी के संगठन के लिए गाँव में जनबल है और यही है सुचितलाल जैसे समाजवादी कार्यकर्त्ता का

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 426
2. वही, पृ. 375
3. वही, पृ. 364
4. वही, पृ. 532

समाजवादी सत्य। इतना ही नहीं किस प्रकार अवसर की तलाश में अपनी जाति का नेता भी बनने से नहीं चूकते सुचितलाल मडर। रेणु ने सुचितलाल के अवसरवादी राजनीति पर लिखा है "सुचितलाल भी भोज खाने के पक्ष में हैं। वह अपनी जाति और टोले का मडर है। उसके गाँववाले नहीं मानेंगे।"[1]

लुत्तो अपने व्यक्तिगत टकराव के कारण छोटी–छोटी जातियों को इक्कट्ठा करके कोसी प्रोजेक्ट का गलत प्रचार करके, उस पर अपनी राजनीति जमाना चाहता है। कांग्रेसी नेता ऐसे हैं कि वह जनता को गुमराह करके अपनी राजनीति साधते हैं। लेकिन जित्तन के समझाने पर जनता समझ जाती है कि लुत्तो ने केवल स्वार्थ के लिए जनता को गुमराह किया है। इससे जनता के निगाह में लुत्तो गिर जाता है। यह चरित्र लुत्तो का ही नहीं आने वाले समय में राजनेताओं का होगा, इस बात का संकेत रेणु ने परती–परिकथा में दिया है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 426

IV. सरकारी योजनाओं में राजनीति

भारत आजादी मिलने के बाद कांग्रेसी सरकार का गठन हुआ। कांग्रेसी सरकार की योजना थी कि भारत का नवनिर्माण किया जाए। इसके लिए नीतियाँ और कार्यक्रम बनाए गए और उसे लागू करने के लिए पूरी तैयारी की गई। सरकारी योजनाओं का उद्देश्य था कि आम जनता को उसका फायदा मिले लेकिन कुछ तकनीकी कमियों के कारण से योजनाओं का सही रूप से समुचित उपयोग नहीं हो पाया। रेणु ने 'परती–परिकथा' में सरकारी योजनाओं के तमाम राजनीतिक पहलुओं पर प्रकाश डाला है।

जिन सरकारी योजनाओं की कल्पना रेणु ने 'मैला आँचल' में किया था उसका फ़लीभूत रूप 'परती–परिकथा' में दिखाई देता है। 'मैला आँचल' का डॉ. प्रशान्त एक पत्र में ममता को लिखता है कि "यहाँ की मिट्टी में बिखरे लाखों–लाख इन्सानों की जिन्दगी के सुनहरे सपनों को बटोर कर अधूरे अरमानों को बटोरकर यहाँ के पानी के जीवन कोष में भर देने की कल्पना मैंने की थी। मैंने कल्पना की थी, हजारों स्वस्थ इन्सान हिमालय की कंदराओं में त्रिवेणी के संगम पर, अरुण तिमुर और सुणकोसी के संगम पर एक विशाल डैम बनाने के लिए पर्वततोड़ परिश्रम कर रहे हैं। लाखों एकड़ वन्ध्या धरती कोशी कवलित भरी हुई मिट्टी शस्य श्यामलता उठेगी। कफ़न जैसे सफेद बालू भरे मैदान में धानी रंग की जिंदगी के बेल लग जाएंगे।"[1] रेणु की 'परती–परिकथा' का केन्द्र बिहार का परानपुर गाँव है। अतीत में किसी समय कोसी नदी के प्रवाह मं परिवर्तन होने के कारण हजार बीघे जमीन परती हो गयी थी। परानपुर इसी परती भूमि के किनारे पर स्थित है। नवीन वैज्ञानिक तथा तकनीकी साधन कृषि कार्य के लिए प्रयुक्त होते हैं, भूमि वितरण की नवीन योजनाएँ बनती हैं, शिक्षा के नवीन अंकुर फूटते है।, पढ़ी लिखी युवा–पीढ़ी के साथ जातिगत ऊँच–नीच के संस्कार शिक्षित होने लगते हैं, नवीन राजनीतिक चेतना पनपने लगती है। रेणु ने इन सबका यथार्थ चित्रण किया है। 'परती–परिकथा' में सरकारी योजनाओं के प्रति उत्सुकता एवं उत्साह दिखाने के कारण रेणु पर सरकारी योजनाओं को प्रचार का आरोप भी लगा। शिवप्रसाद सिंह ने रेणु पर सरकारी डाकुमेण्टरी लिखने तक का आरोप लगाया है "अगर ग्राम जीवन के यथार्थ पक्ष को पकड़ की तुलना पर कसे तो परती–परिकथा लोक गीतों से भरी हुई किसी सरकारी डाकुमेण्टरी सी मालूम होती है, जिसमें दरारों भरी धरती एकाएक

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 181

नहर या श्रमदान के बल पर बने नाले आदि के द्वारा पानी पाकर हरी–भरी हो जाती है और जिसमें एक–एक फुट की बालों वाले ज्वार–बाजरे लहराने लगते हैं। इस दृष्टि से इसे प्रसार गीतों के बल पर प्रसार उपन्यास कहा जा सकता है।"[1] रेणु पर इस तरह का आरोप लगाना गलत है कि रेणु सरकारी योजनाओं के प्रचार–प्रसार के लिए परती–परिकथा लिखा क्योंकि रेणु एक सर्जक और भविष्यद्रष्टा रचनाकार थे। रेणु ने दिखाया कि इन सरकारी योजनाओं से आम जन के जीवन में नवीन प्रकार के बदलाव भी आए।

रेणु ने सरकारी योजना की तारीफ ही नहीं की बल्कि उसमें होने वाले खामियों की तरफ भी अपनी दृष्टि डाली। रेणु ने स्वयं लिखा है "यदि हमारे राष्ट्र के लेखक को महान निर्माण कार्यों से प्रेरणा नहीं मिलती तो उसे राजकीय पैमाने पर प्रेरित न किया जाए। रचने दीजिए उन्हें देहवादी रचनाएँ। नव निर्माण की पहली शर्त है – राष्ट्र को नई प्रेरणा प्रदान करना और बावजूद सारी खामियों के इसने हमारे देश की जनता को प्रेरित करना शुरू किया है। आन्तरिकता शून्य उपदेशों का असर उल्टा होता है। जनजीवन के सुख–दुख से परे रहने वाले साहित्यकार की कटाई हुई रचनाओं का प्रयास जन–जीवन पर नहीं पड़ सकता।"[2] रेणु आमजन के लेखक थे और उनका जुड़ाव भी आमजन से था। रेणु आमजन की सुख सुविधाओं के लिए किए गए कार्यों की सराहना भी करते थे। केवल सरकारी काम है इसकी वजह से आलोचना करनी चाहिए, रेणु ने ऐसा कभी नहीं किया बल्कि सही कार्यों की तारीफ भी करते थे। रेणु ने बहुत बारीकी से अध्ययन किया था कि सरकारी योजना से आमजन के जीवन में क्या बदलाव आ रहे हैं।

इस सन्दर्भ में नेमिचन्द्र जैने ने लिखा है " ... इन योजनाओं के फलस्वरूप व्यापक परिवर्तन होने लगते हैं। नए–नए विचार, नए–नए आन्दोलन इस क्षेत्र के गाँवों में आकर पनपते हैं और देहात के अपेक्षाकृत जीवन में भयंकर आलोड़न उत्पन्न हो जाता है, साथ ही साथ उधर कांग्रेस सरकार भूमि कानूनों में भी सुधार करने का प्रयत्न करती है जिसके फलस्वरूप भूमि के नएबंदोबस्त की तैयारियाँ होती हैं, नए बंटवारे की योजनाएँ बनती हैं। परानपुर गाँव के सभी निवासी अपना–अपना दावा अपना–अपना अधिकार भूमि के विभिन्न अंशों पर घोषित करते हैं और तीन वर्ष तक बंदोबस्त विभाग के अधिकारी अर्जियाँ मांगते हैं। लोगों के दावों तथा मांगों की जाँच करते हैं और मामले निपटाते हैं।

---

1. आधुनिक परिवेश और नवलेखन, शिवप्रसाद सिंह, पृ. 121
2. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 271

देहात के जीवन में भूमि के बंटवारे से अधिक क्रान्तिकारी स्थिति दूसरी नहीं हो सकती। उसके कारण सदियों से जमी हुई जीवन की पर्तें – भावनाओं की, विचारों की, संस्कारों की, सामाजिक सम्बन्धों की, आचार–व्यवहार की, रीति–रिवाज की, संक्षेप में प्रत्येक स्तर की पर्तें – टूटने लगती हैं।"[1] इससे बात पुष्ट हो जाती है कि रेणु ने 'परती–परिकथा' में कोसी प्रोजेक्ट से होने वाले फायदा पर दृष्टि डाली है तो आमजनता के हित के लिए न कि सरकारी नीति के लिए।

नदी घाटी योजना के तहत कोसी की मुख्यधारा को मोड़कर सूखी दुलारीदाय नदी से जोड़ने के प्रस्ताव को लेकर जब लुत्तो गरुड़धुज झा और मुखिया रोशन विस्वां इत्यादि ने अपनी घटिया राजनीतिक खिचड़ी पकाने लगे। ये सारे राजनेता कोसी योजना की जनता को सही जानकारी न देकर इसके बारे में गलत प्रचार करके अपनी स्वार्थी राजनीति करने से पीछे नहीं हटते। रेणु ने लिखा कि कोसी योजना से जनता के लिए सुख समृद्धि का साधन है "परानपुर की परती पर इसी साल जूट और धान की खेती ... इसमें जूट, धान, दलहन, तिलहन, मकई, ज्वार इत्यादि की उपज होगी, जबकि दुलारीदाय में सिर्फ जूट और धान की खेती होती थी। ... दुलारीदाय में कुछ उपजाऊ जमीन ढाई हजार एकड़, जबकि परती पर सात आठ हजार एकड़ जमीन अगले वर्षों में तैयार हो जाएगी।"[2]

इन सारी बातों को लुत्तो इत्यादि नेताओं ने जनता को सारी जानकारी न देकर केवल कोसी घाटी के बारे में गलत ही बताकर जनता को उकसाते रहें। लेकिन लुत्तो के घटिया कारनामों से जित्तन विचलित नहीं हुआ। गाँव के लोगों से पत्थर खाकर भी वह सत्य कहता है "दोष हमारे विशेषज्ञों का नहीं। हमारी सरकारी के पुराने कलपुर्जे ही इसके लिए जिम्मेवार हैं। वरना जैसा कि मैंने बतलाया आप आज तोड़ने फोड़ने के बदले गढ़ने का सपना देखते। ... इतना बड़ा काम हो रहा है किन्तु आप इससे नावाकिफ़ हैं कि क्या हो रहा है, किसके लिए हो रहा है। ... मुझे ऐसा भी लगता है कि जानबूझ कर ही आपको अंधकार में रखा जाता है। क्योंकि आप की दिलचस्पी से उन्हें खतरा है। ... इन कामों से आपका लगाव होते ही नौकरशाहों की मनमानी नहीं चलेगी। एक कम चाय पीने के लिए तीन गैलन तेल जलाकर वे शहर नहीं जा सकेंगे। सीमेन्ट की चोर बज़ारी नहीं कर सकेंगे। एक दिन में होने वाले काम में एक महीने की देर नहीं लगा सकेंगे। ... नदियों पर बिना

---

1. जैन, नेमिचन्द्र का कथन उद्धृत, नगरीकरण और हिन्दी उपन्यास, क्षमा गोस्वाती, पृ. 236
2. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 632

पुल बनाए ही कागज पर पुल बनाकर बाद में बाढ़ के पुल के बहजाने की रिपोर्ट वे नहीं दे सकेंगे।"[1] कहने का मतलब है कि रेणु ने उस व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठायी जो भारत के नवनिर्माण की बात कर रही है। हाथी के दांत खाने के लिए और तथा दिखाने के लिए और ही हैं। रेणु ने आजाद भारत के शुरुआती दौर के भ्रष्टाचार में लिप्त नौकरशाहों और लालफीताशाही की करनी पर प्रकाश डाला। आप इस बात से अन्दाज लगा सकते हैं कि अगर भारत की ऐसी स्थिति रही तो भारत का नवनिर्माण नहीं हो पाएगा। कोई भी सरकारी कार्य या निर्माण हो तो उसकी सही जानकारी सरकार द्वारा जनता को नहीं मिलती क्योंकि इससे भ्रष्टाचार इत्यादि का उजागर हो जाएगा। भारतीय संसद को आज 2005 में 'सूचना जानने का अधिकार' पारित करके सरकारी कार्यों पर होने वाले घोल–मोल एवं भ्रष्टाचार और घूस–खोरी से रोकने का प्रयास किया। रेणु ने इस बात को आज से लगभग 50 वर्ष पहले ही दिखा दिया था – "हम जब जानते हैं कि सरकार को इस योजना से जनता की भलाई होने वाली है तो बेकार बखेड़ा क्यों करें ? हम क्यों न गुमराह जनता को समझावें।"[2]

जित्तन राजनीतिक दलों के कार्यकर्त्ताओं से कहता है कि "राजनीतिक पार्टी के कार्यकर्त्ताओं से मैं कहूँगा, जनता की सरलता का दुरुपयोग अपने स्वार्थ के लिए न करें। ... क्षतिपूर्ति, पुनर्वास तथा जमीन वितरण आदि मसले ऐसे हैं जिससे सरकारी लालफीता और घूस खोरी से आप ही बचा सकते हैं, जनता को।"[3] जित्तन की बात सुनकर लुत्तो ने दाँत कटकटाकर कहा ए बालगोबिन ढोल वाले चुप क्यों है ? बजाने को कहो। नारा लगाओ। इसके फलस्वरूप मानिकपुर के जत्थेदार ने कहा कि मानिक पुर वालो वापस चलो। मधुलता के एक बूढ़े किसान ने कहा झूठ मूठ ही हम लोगों को परेशान किया। पैर पीछे न लौटाए आगे बढ़िए ऐसा लुत्तो ने किसानों से कहा। किसी ने कहा कि लुत्तो बाबू नारा लगाइए – नहर का फैसला। तभी भिम्मल मामा जो अब तक चुन–चुप खड़े थे, बोले सुबुद्धि की जय हो। कहने का मतलब कि किस प्रकार जित्तन के समझाने के बावजूद लुत्तो अपने स्वार्थ की राजनीति करता है। तभी जनता का यह स्वर सुनाई पड़ता है कि "चलो–चलो वापस चलो। झूठ–झूठ परेशान किया। अन्याय बात। छीः छीः औरत को घेरकर मारा। हाय–हाय !

---

1. वही, पृ. 634
2. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 634
3. वही, पृ.

चलो–चलो वापस चलो अपने–अपने गाँव में उत्सव करों सर्वे में भी जो बेजमीन रहे, उसको भी जमीन मिलेगी।" इस तरह उपर्युक्त अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि स्वतंत्र भारत की राजनीतिक स्थिति के प्रति रेणु का दृष्टिकोण बिलकुल साफ था।

यह तथ्य है कि भारतवर्ष किसानों का देश है, इसीलिए यहाँ की राजनीति शुरू से ही जमीन के इर्द–गिर्द चलती रही है, चाहे वह रियासतों के विलीनीकरण का मामला हो, चाहे सामंतों, जमींदारों या बड़ी जोत के किसानों का मसला हो।

रेणु ने परती–परिकथा में जिस विस्तृत परती जमीन की बात उठाई है, वह बिहार की परती भूमि तो है ही, एक दूसरे अर्थ में पूरा देश है। उनकी कोशिश परती जमीन के माध्यम से देश की राजनीति का सर्वेक्षण है।

इस क्रम में कहना न होगा कि रेणु ने राजनीति के अनेक पक्षों क्षेत्रीय, दलीय, जातिगत, परिवारगत आदि पर चर्चा करके उसे एक ऐसे स्थल तक पहुँचा दिया हे जहाँ हम परानपुर की परती के माध्यम से पूरे देश की राजनीतिक स्थिति को समझ सकते हैं।

.....

चौथा अध्याय

'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' की राजनीतिक दृष्टि का तुलनात्मक अध्ययन

रेणु के उपन्यास 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' का हिन्दी साहित्य में महतवपूर्ण स्थान है। 'मैला आँचल' में आजादी के पहले और बाद की घटनाओं का वर्णन है, जबकि 'परती–परिकथा' में केवल आजादी मिलने के बाद की घटनाओं का वर्णन मिलता है। रेणु ने इन उपन्यासों में ग्राम्य जीवन में होने वाले परिवर्तनों को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। रेणु ने इन उपन्यासों में दिखाया हे कि भारत के नवनिर्माण का सपना पूरा होने में किस प्रकार से अनेक समस्याएँ सामने आती हैं।

साहित्य की दुनिया में आने से पहले रेणु ने राजनीति में कार्यकर्त्ता के रूप में सक्रिय रूप से भाग लिया था। रेणु ने राजनीतिक यथार्थ को बहुत नजदीक से देखा था। वे अध्ययन के दौरान से ही राजनीति से जुड़े हुए थे। रेणु का मानना था कि शासन और समाज में व्यक्ति का महत्त्व होना चाहिए। रेणु ने देखा कि इस शासन व्यवस्था में आम आदमी का कोई महत्व नहीं है, इसलिए उन्होंने जीवन में राजनीति से निकलकर साहित्य की दुनिया का चुनाव किया। रेणु ने लिखा है "जब कोई आदमी राजनीति और साहित्य दोनों क्षेत्रों में समान रूप से काम कर सकता हो और अचानक उसे फैसला करना पड़ जाए कि दोनों में से किसे चुने तो साहित्य को चुनने वाला व्यक्ति बुद्धिमान होता है।"[1] इस तर्क के सहारे रेणु राजनीति से निकलकर साहित्यिक दुनिया का चुनाव करते हैं। वे राजनीति से निकल कर राजनीति से अछूते नहीं रहे बल्कि साहित्य लेखन के माध्यम से राजनीति में होने वाले परिवर्तनों और उसके स्वरूप पर हमेशा दृष्टि डालते रहे।

रेणु के उपन्यास 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में राजनीतिक परिवर्तनों का यथार्थ वर्णन मिलता है। स्वतन्त्रता के पहले जो राजनीतिक दल समर्पित, निष्ठावान, उद्देश्यपूर्ण राजनीतिक स्वरूप रहा, उसके स्थान पर स्वतन्त्रता के बाद भ्रष्टाचार, अवसरवाद, क्षेत्रियता, जातिवाद तथा व्यक्तिगत हित प्रमुख हो गया। स्वाधीनता आन्दोलन की लड़ाई का नेतृत्व करने वाली कांग्रेस पार्टी के स्वरूप में व्यापक परिवर्तन आयां रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि आजादी मिलने तक गाँधीवादी मूल्य जीवित रहते हैं लेकिन गाँधीजी के मृत्यु के साथ गाँधीवादी मूल्यों की भी हत्या कर दी जाती है। रेणु ने इस बात को 'मैला आँचल' में 'बावनदास' के माध्यम से दिखाया है। 'परती–परिकथा' तक गाँधीवादी मूल्य एकदम लुप्त प्राय हो गए हैं यहाँ पर व्यक्तिगत स्वार्थ, जातिवाद तथा अवसरवाद का

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 249

बोलबाला हो गया। यह किसी एक पार्टी का चरित्र नहीं है, बल्कि लगभग सभी पार्टियों का इस तरह का चरित्र दिखाई देता है।

भूमि का सम्बन्ध किसानों का हमेशा से रहा है, अगर उस पर उनका अधिकार नहीं रहेगा तो उनका जीवन किस प्रकार से चल पायेगा। भूमि की समस्या को रेणु ने 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में बड़े यथार्थ ढंग से चित्रित किया है। भूमि सुधार अधिनियम लागू होने पर राजनीतिक दलों की क्या प्रतिक्रिया होती है, इस बात को रेणु ने बड़े यथार्थ रूप में चित्रित किया है।

भारतीय ग्रामीण क्षेत्र में प्रवेश के बाद राजनीतिक पार्टियों का सिद्धान्त और विचारधारा लुप्त होता गया और उसके स्थान पर भ्रष्टाचार, जातिवाद और अवसरवाद का बोलबाला हुआ। कांग्रेस पार्टी अब तक अपने को गरीबों, मजदूरों एवं किसानों का मसीहा घोषित और प्रचारित करती हुई घूमती थी। आज वही पार्टी पूँजीपतियों, जमींदारों तथा भ्रष्टाचारियों के हाथ की कठपुतली बन गयी है। रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि दुलारचन्द कापरा जो कल तक जुआ कपनी और तस्करी करता था आज वही कांग्रेस की थाना कमेटी का सचिव बना घूम रहा है। ऐसी ही बात रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाई है। यहाँ पर लोग अपने व्यक्तिगत हित की पूर्ति के लिए कांग्रेस में शामिल हुए हैं। लुत्तो जो कांग्रेसी नेता है असल में वह लंगीबाज है। वह मिसिर के बेटे जित्तन को दागने के लिए कांग्रेस में शामिल हुआ है। इस प्रकार से सोशलिस्ट पार्टी का चरित्र अब विचारधारा और सिद्धान्तों से हट कर जातिवाद और भ्रष्टाचार के हाथों में केन्द्रित हो गया है। यहाँ भी पार्टी के मूल्यों से कोई लेना देना नहीं है, बल्कि व्यक्तिगत हित सर्वोपरि हो गया है।

इस प्रकार देखते हैं कि इन राजनीतिक दलों का असली चरित्र भूमिसुधार अधिनियम के समय खुलकर आम जनता के सामने आता है कि ये दल जमींदारों या पूँजीपतियों के साथ है या आम जन के साथ हैं।

I. भूमि सुधार आन्दोलन

आजाद भारत का सपना था कि हर व्यक्ति को समान अधिकार मिलेगा तथा किसानों और मजदूरों को उनका पूरा अधिकार दिया जाएगा। आजादी के पहले किसानों के पास उनकी खुद की जमीन नहीं थी, वह जमींदारों की जमीन के माध्यम से खेती करते थे। भारत की लगभग 70 प्रतिशत आबादी खेती पर आश्रित है। ऐसी स्थिति में अगर किसानों का जमीन पर अधिकार नहीं रहेगा तो इससे न किसान का विकास होगा न ही देश का विकास होगा। आजादी के बाद कांग्रेसी सरकार ने 'जमींदारी प्रथा' खत्म करने का प्रयास किया लेकिन इसमें उसे पूर्ण सफलता नहीं प्राप्त हुई। कहने के लिए जमींदारी प्रथा खत्म हो गई, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। बल्कि जमींदारी प्रथा बरकरार रही, हाँ इतना अवश्य हुआ कि जमींदारों का नाम बदल गयां ऐसा इसलिए हुआ कि जमींदारी उन्मूलन कानून स्पष्ट नहीं हुआ था।

इसके परिणाम की चर्चा करते हुए रजनी पामदत्त ने कहा है "इन कानूनों से बहुत कम लाभ हुआ है और व्यावहारिक रूप में उनसे जमींदारी प्रथा तो हरगिज खतम नहीं हुई है। न ही इन कानूनों से साधारण किसान और खेत मजदूर जनता की समस्याएँ हल हुई हैं। ... इन कानूनों से केवल थोड़े से धनी किसानों का लाभ हुआ है। अधिकार गरीब किसानों को अस्थाई पट्टेवाले काश्तकारों को बटाईदारो को और खेत मजदूरों को उनसे कोई लाभ नहीं हुआ है। इसके अलावा जहाँ कहीं जमीन के पट्टों पर नाम चारे के लिए हद बाँध दी गई है, वहाँ भी व्यवहार में जमींदार अपनी विशाल जमींदारियों को सुरक्षित रखने में कामयाब हुए हैं, क्योंकि उन्होंने दिखावे के लिए अपनी जमीन अपने भाई–भतीजों में बाँट दी है या ऐसा ही कोई और तरकीब या बहाना बनाकर कानून से बच गये हैं।"[1] इतना ही नहीं जमींदार लोग आजादी के बाद राजनीतिक शरण लेना शुरू कर दिये। ये जमींदार अब कांग्रेस की जिला कमेटी में सचिव इत्यादि जैसे पदों पर सुशोभित होने लगें इस प्रकार जमींदारों ने किसानों के शोषण को कभी कम करने का प्रयास नहीं किया बल्कि हमेशा किसानों को परेशान करते रहे।

रेणु ने किसान जीवन की समस्याओं को बहुत ही सूक्ष्म एवं यथार्थ रूप से उद्घाटित किया है। जमींदारी प्रथा खत्म करने वाले कानून की खामियों तथा उस कानून के निर्माता कांग्रेस के चरित्र को भी खोलकर रख दिया है। क्योंकि कांग्रेस के इस कानून का भरपूर फायदा जमींदारों ने उठाया।

---

1. आज का भारत, रजनी पामदत्त, पृ. 105

'मैला आँचल' में रेणु ने दिखाया है " ... जमींदारी प्रथा खतम हो गई। अब जमींदार जमीन से बेदखल नहीं कर सकता। हमने उन्हें जमीन से बेदखल कर दिया। जो जोतेगा, जमीन उसकी हैं जो जितना जोत सको, जिसकी जमीन मिले जोतो, बोओ, काटो। अब बाँटने का झंझट नहीं। ... धरती माता का प्यार झूठा नहीं। फिर खेतों में जिंदगी झूमेगी।"[1] लेकिन वास्तव में ऐसा कुछ नहीं हुआ, क्योंकि इस तरह के सपने किसानों को दिखाने के लिए किए गए थे मगर सच्चाई कुछ और ही थी। जमींदारी प्रथा खत्म जरूर हुई थी केवल दिखावटी कागजों तक सीमित होकर।

रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि किस प्रकार जमींदार कांग्रेसी सरकार में शामिल होकर अपने इलाके की जमीन को बचा लेते हैं। "सन् 1937 की कांग्रेसी मिनिस्टरी के समय ही मुंशी जलधारी लाल ने सारे स्टेट को तरेह टुकड़ों में बाँटकर छोड़ दिया था। इस बार जमींदारी उन्मूलन के समय ... परानपुर स्टेट बेदाग बच गया।" स्पष्ट हो जाता है कि कांग्रेसी सरकार जमींदारी प्रथा खत्म करने में कितनी ईमानदारी से काम करती है, यह इसी उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है। सन् 1950 के आस–पास के दस्तावेजों से भी कुछ इसी प्रकार की सूचना मिलती है। "1950 के दशक में ही बटाईदारों के बड़े–बड़े संघर्ष हुए। कोसी क्षेत्र के जमींदार दिपारा क्षेत्र की विशाल भूमि को हथिया उसे पास के दूसरे जिलों से लाए गए पट्टेदारों को लगान पर चढ़ा देते थे फिर जब वह जमीन उपजाऊ बन जाती तो इन पट्टेदारों को बेदखल करके उसी भूमि को पहले से अधिक लगान पर दूसरे पट्टेदारों को दे देते थे। 1939 से ही इन पट्टेदारों ने खासकर आदिवासी पट्टेदारों ने, जमींदारों द्वारा की जा रही बेदखली के खिलाफ सक्रिय प्रतिरोध करना शुरू कर दिया था। जल्द ही बड़ी तादाद में गैर आदिवासी बटाईदार भी इस संघर्ष में शामिल हो गए।

1950 के दशक में जब यह संघर्ष किंवदन्ती बन गए नक्षत्र मालाकार की रहनुमाई में चोटी पर जा पहुँचा तो सरकार को मजबूर होकर 1952 में पुर्णिया में नए सिरे से सर्वेक्षण और बन्दोबस्ती करवानी पड़ी।"[3] इस बात को रेणु ने भी बहुत बारीकी से देखा और उपन्यास में बहुत ही यथार्थ रूप में चित्रित किया "लैण्ड सर्वे सेटलमेण्ट। जमीन की फिर से पैमाइश हो रही है, साठ–सत्तर साल बाद। भूमि पर अधिकार ! बटैयादारों आधीदारों का जमीन पर सर्वाधिकार हो सकता है, यदि वह साबित कर दे कि जमीन उसी ने जोती–बोयी है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 179
2. वही, पृ. 393
3. बिहार के धधकते खेत खलिहानों की दास्तान, पृ. 23

चार आदमी खेत के चारों ओर के गवाह जिसे अरिया गवाह कहते हैं – गवाही दे दें, बस हो गया। कागजी सबूत ही असल सबूत नहीं।

"बिहार टेनेन्सी ऐक्ट की दफा 40 के मुताबिक लगातार तीन साल तक जमीन आबाद करनेवालों को मौरूसी हक हासिल हो जाता था, किन्तु कचहरी की करामात और कानूनी दाँव–पेंच से अनभिज्ञ किसानों की इसमें कोई भलाई नहीं हुई। जमींदारी की प्रथा को खत्म करने के बाद राज्य सरकार ने अनुभव किया – पूर्णिया जिले में एक क्रान्तिकारी कदम उठाने की आवश्यकता है।"[1] ...जहाँ तक दफा 40 का सवाल है, इसकी सूचना मिलते ही किसानों में कुछ आशा की किरण दिखती है, लेकिन कचहरी से निराशा मिलने के बाद उनकी स्थिति और दयनीय हो जाती है। रेणु ने मैला आँचल में दिखाया है कि "सबों की दरख्वास्त खारिज हो गयी ... कल गाँव के सभी रैयत आए थे, फैसला सुनकर सभी रोने लगे। अब जमींदार जमीन भी छुड़ा लेगा।"[2] इसके बाद कया स्थिति होती है। किसान को जमीन से बेदखल कर दिया गया और जमींदार अब किसान बन कर राज्य कर रहे हैं। रेणु ने ऐसे किसानों के बारे में 'परती–परिकथा' में लिखा है कि "... हिन्दुस्तान में सम्भवतः सबसे पहले पूर्णिया जिले पर ही लैण्ड सर्वे ऑपरेशन का प्रयोग किया गया। जिले के जमींदारों और राजाओं की जमींदारियों का विनाश अवश्य हुआं किन्तु हिन्दुस्तान के सबसे बड़े किसान यहीं निवास करते हैं। ... गुरुबंशी बाबू जमींदार नहीं, किसान हैं दस हजार बीघे जमीन है, दो–दो हवाई जहाज रखते हैं। दूसरे हैं भोला बाबू। पन्द्रह हजार बीघे जमीन है, डेढ़ दर्जन ट्रैक्टर रखते हैं। पर यह बात भी सच्ची है कि वे जमींदार नहीं किसन सभा की सदस्यता से किस आधार पर वंचित करेंगे उन्हें ? यहाँ पाँच सो बीघे वाले किसान तृतीय श्रेणी के किसान समझे जाते हैं और हर गाँव पर इन्हीं किसानों का राज है।"[3]

इन दोनों स्थितियों को देखते हुए जो दृष्टि बनती है कि किसान राज्य किसका होगा, किसानों का या जमींदारों का। एक ओर किसानों को जमीन से बेदखल किया जा रहा है तो दूसरी ओर जमींदार अपनी जमीन बचाकर किसान बन रहे हैं। यह तो सरासर किसानों के प्रति नाइन्साफी हो रही है। जो पार्टी किसानों और मजदूरों के अधिकार दिलाने

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 326
2. वही, पृ.
3. वही, पृ. 326

की बात करती थी वही कांग्रेस पार्टी आज सत्ता परी काबिज होने के बाद जमींदार और पूँजीपतियों के हाथ की कठपुतली बनकर रह गई है।

'अधिया' और बटाईदार किसानों को जमीन नहीं मिली। इसमें दोष किसका है कानून या न्याय करने वाला या किसानों ने अपनी सही ढंग से फरियाद नहीं कर पाए जिसके कारण उनको जमीन से बेदखल किया गया। रेणु ने मैला आँचल में दिखाया है कि "बात यह है कि 94 सैकड़े लोगों ने तो गलत और झूठा दावा किया होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं सही और वाजिब हकवाले बाकी रैयत भी इन्हीं झूठे दावे करने वालों के कारण बेमौत मर गए। इसमें कानून का क्या दोष है ? लोगों का नैतिक पतन हो गया है।"[1] इसमें नैतिकता का सवाल किसके साथ जोड़ा जाए किसानों के साथ या नेताओं के साथ। नैतिकता का पतन किसका हुआ है। इन सारे प्रश्नों पर विचार करने की जरूरत है। इन प्रश्नों से टकराये बिना सही उत्तर नहीं मिल पायेगा।

रेणु ने 'परती–परिकथा' में इस नैतिकता को सही रूप में पकड़ा है, उन्होंने लिखा है कि "जिले भर के किसानों और भूमिहीनों में महाभारत मचा हुआ है। सिर्फ भूमिहीन नहीं डेढ़ सौ बीघे के मालिकों ने भी दूसरे बड़े किसानों की ज़मीन पर दावे किए हैं। ... हजार बीघे वाला भी एक इंच जमीन छोड़ने को राजी नहीं है। छः महीने में ही गाँव एकदम बदल गया हैं बाप बेटे में भाई–भाई में अपने हक को लेकर ऐसी लड़ाई कभी नहीं हुई। भरी कचहरी में हल्प लेकर सरबन बाबू ने कह दिया – "लालचन मेरा कोई नहीं। ... इसके बाप का ठिकाना नहीं। मेरे बाबू जी मरने के तीन बरस बाद।"[2]

इस प्रकार देखते हैं कि व्यक्ति किस प्रकार से अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए तमाम गलत चीजों का सहारा लेता है। इसके कारण सरकारी कर्मचारी और राजनेता उसका भरपूर फायदा उठाते हैं। लेकिन वास्तविकता देखा जाए तो गरीब किसान को इस बात का पता नहीं है कि उसकी गलतियों का फायदा भरपूर रूप से जमींदार उठा रहा है। इतना ही नहीं बल्कि उन्हें वह जमीन से बेदखल भी करा देता है। इन्हीं सारी बातों का फायदा 'मैला आँचल' के तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद उठाता है। वह भोले भाले गाँव वालों को अपने हित के लिए सन्थालियों के खिलाफ कुचक्र रचता है, उसके बहकावे में गाँव के सभी लोग आ जाते हैं। क्योंकि वह कांग्रेस पार्टी का जिला कमेटी का सदस्य भी बन गया

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 132
2. वही, पृ. 324

है उसकी पकड़ ऊपर तक बन गई है। सन्थालियों को तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद बाहर का आदमी घोषित कर दिया और उनके खिलाफ मोर्चा खोल दिया। "बाहर से आकर बसे हुए सन्थालियों ने तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद के चालीस बीघा वाले बीहन के खेत को लूटना शुरू कर दिया इनके दुष्कर्मों का परिणाम यह हुआ कि उनकी आँखों के सामने उनकी पत्नी और बेटी के साथ बलात्कार किया गया। चार मारे गए और सात घायल हुए बात यहीं समाप्त नहीं हुई। धूमधाम से सेसन केश चला। सभी सन्थालों को दागुल हौज हो गया।"[1]

सन्थालियों की स्थिति बहुत बुरी हो गई लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। संथाली स्वाभिमानी होते हैं। विश्वनाथ प्रसाद ताक मामूली जमींदार है लेकिन सत्ता पर अपनी मजबूत स्थिति बना लेने के बाद वह संथालों को अपने हित के लिए परेशान कर रहे हैं, "बंगाल में सन्थालों ने ब्रिटिश शासन ही नहीं वरन् नए जमींदार वर्ग साहूकारों के खिलाफ भी विद्रोह किया। जमींदारों को उस जमीन पर मालिकाना अधिकार दे दिए गए थे जिस पर वे किसान हजारों साल से खेती करते आ रहे थे और साहूकारों ने क़र्ज़ की गैर अदायगी के आधार पर उन्हें अपनी जमीन से बेदखल कर दिया था। स्वाभिमानी संथाल तत्कालीन अन्याय के खिलाफ विद्रोह करने के लिए उठ खड़े हुए।"[2] जब सन्थाली भूमि के लिए संघर्ष कर रहे थे तो गैर सन्थाली बेदखली किसान भी जमींदारों के विरुद्ध खड़े हो रहे थे और इनके साथ भी जमींदार उसी बर्बरता के साथ पेश आता था। "जमींदारी उन्मूलन के बाद भी हर साल फसल कटने के समय एक डेढ़ सौ लड़ाई दंगे और चालीस पचास कत्ल होते रहे फिर से जमीन की बन्दोबस्ती की व्यवस्था की गई। ... सारे जिले में गत तीन वर्षों से विशाल आँधी चल रही है।"[3] किसानों का संघर्ष जमींदारों के खिलाफ उतना नहीं दिखता जितना कि एक किसान का दूसरे किसान के प्रति दिखाई देता है।

एक प्रकार से इस भूमि सुधार आन्दोलन से किसान–किसान के बीच संघर्ष शुरू हो गया है। लेकिन ऐसी बात नहीं है कि किसानों को सही राह नहीं मिली। गरीबों और मजदूरों की आँखें कालीचरन ने खोल दी। लेकिन गरीबों और मजदूरों की आँखें खुली कि नहीं खुली इसकी सूचना देते हुए रेणु ने मैला आँचल मे लिखा है "जमीन के लिए गाँव में नई दलबन्दी हुई। जिन लोगों की जमीन नीलाम हुई है, दर्खास्त खारिज हुई है वे एक तरफ

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 170
2. वही, पृ. 326
3. भारत में राष्ट्रवाद, सं. सल्पाराय, पृ. 303

हैं। जिन्होंने नई बन्दोबस्ती ली है अथवा जमींदार से माफी मांग ली है, सुपुर्दी लिखकर दे दी है या जो जमीन बंदोबस्त लेना चाहते हैं वे सभी दूसरी तरफ हैं।"[1] इस प्रकार देखते हैं कि किसानों में ही आपसी मतभेद दिखाई देता है। उनके मन में चेतना का अभाव है। इसका पूरा फायदा जमींदार लोग उठाते हैं। किसानों को आपस में बांट देते हैं। किसान अपने हित के लिए अपने भाई की जमीन पर कब्जा करने की कोशिश करता है। रेणु ने दिखाया है कि किसानों में चेतना के अभाव में दिग्भ्रमित हैं। "नया ट्रैक्टर खरीदा हुआ है। बटाई करने वाले किसानों को जमीन से बेदखल किए बिना फार्म बनाना असंभव है। ... बेदखल किए गए किसान दल बाँधकर रोज नारा लगाते हैं, गलियाते हैं।"[2] इससे स्पष्ट है कि किसानों के अन्दर जमींदार के खिलाफ आवाज उठानी शुरू कर दी है, लेकिन उनके अन्दर अभी वह नेतृत्व की क्षमता नहीं विकसित दिखाई देती है जो होनी चाहिए। जो राजनीतिक दल कल तक किसानों और मजदूरों के अधिकार के लिए लड़ाई लड़ रहे थे वही आज जमींदारों के हिमायती बन गए हैं।

जमींदारो के उत्पीड़न से किसान परेशान थे। उन्हें कोई ऐसा विकल्प नहीं दिखाई दे रहा था जिसके माध्यम से वे जमींदारो के चंगुल से छुटकारा पा सकते थे। जमींदारों का उत्पीड़न दिनोंदिन बढ़ता जा रहा था। कहने के लिए जमींदारी प्रथा खत्म हो गयी थी लेकिन सच्चाई यह थी कि अभी भी जमींदारों की दादागिरी चलती थी। रेणु ने इस बात को बड़ी पैनी दृष्टि से देखा और परखा। रेणु को राजनीतिक दलों से भरोसा उठ चुका था कि वे लोग किसानों की समस्या से निजात दिला सकते हैं। इसीलिए उन्होंने किसानों का नेतृत्व एक 'नक्षत्र मालाकार' नामक व्यक्ति के हाथ में सौंपा। यही नक्षत्र मालाकार 'मैला आँचल' में 'चलित्तरकर्मकार' के रूप में दिखाई देता है। रेणु ने इस पात्र के माध्यम से किसानों के हित के लिए जमींदार और सरकार के खिलाफ लड़ते हुए दिखाया है। रेणु नक्षत्र मालाकार में लिखते हैं कि "1949 में पूर्णिया–भागलपुर के कुछ इलाकों में अकाल पड़ गया था। सभी बड़े किसानों और गल्ले के व्यापारियों ने अनाज छिपा लिया था। ... किसान मजदूरों की पार्टियाँ आवश्यक बैठक बुलाकर अकाल की समस्या पर विचार करने का प्रोग्राम तय ही कर रही थीं। उधर नक्षत्र मालाकार ने हजारों भुक्खड़ो की टोली लेकर किसानों और व्यापारियों के बखार और गोले को लुटवाना शुरू कर दिया। ... ऐसे साथी

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 132
2. वही, पृ. 323

को लुटेरा और डकैत कहने का साहस हममें नहीं था। हमने उसे गुमराह कहा।"[1] इसी नक्षत्र मालाकार को रेणु ने 'मैला आँचल' में चलित्तरकर्मकार के माध्यम से चित्रित करते हुए लिखा है कि सरकार ऐसे लोगों के बारे में क्या धारणा रखती है। एस.पी. साहब कहते हैं कि "चलित्तरकर्मकार को न तो देश से मतलब है और न गाँव से और न समाज से, उसका पेशा है डकैती करना, लूटना। वह समाज का दुश्मन है, देश का दुश्मन है।"[2] इतना ही नहीं ऐसे चलित्तरकर्मकार युवक के बारे में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी की क्या धारणा है ? यह पार्टी ऐसे युवक को लम्पट सर्वहारा के रूप में प्रचारित करती है। इस पार्टी का मानना है कि ऐसे लोग केवल डाका इत्यादि ही डाल सकते हैं उनके अन्दर किसानों की स्थिति सुधार की बात नहीं है, वह केवल दहसत ही फैला सकते हैं। "जोतदारों के बर्बर उत्पीड़न की स्थिति में उनके प्रति नफरत से भरकर किसानों का एक हिस्सा बागी–दल बना लेता है, जोतदारों की हत्याएँ संचालित करता है और डाके डालता है।"[3] चलित्तर कर्मकार' जैसे लोगों के बारे में क्यों गलत धारणा व्यक्त की जाती है। इसके पीछे क्या कारण हो सकते है। इन सब पर विचार करने की जरूरत है। क्योंकि बिना इस बात के जाने कि चलित्तर कर्मकार जैसे लोगों को डकैती क्यों करनी पड़ती है ? जोतदारों की हत्या क्यों करनी पड़ती है। इत्यादि पर विचार किया जाये तो यह धारणा गलत साबित हो जायेगी कि वह समाज और देश का दुश्मन है। इस सन्दर्भ में चन्द्रभूषण का यह कथन ध्यातव्य है कि "किसान संघर्ष के महत्व को कनहीं समझने वाले समय–समय पर उपजे इनके जन–नायकों सिद्धू सन्थाल, तिलका, माँझी, विरसा मुण्डा, वसुदेव, बलवन्त फड़के, सहजानन्द, सूरजनारायण, नक्षत्रमालाकार, कार्यानन्द, इन्द्रलाल, याज्ञनिक और 60 के दशक के बाद मुठभेड़ के नाम पर या प्रतिरोध संघर्ष के दरम्यान मारे जा रहे सुपात या अनाम योद्धाओं की अवहेलना करने वाले किताबी, बतफरोस, नौकर मार्क्सवादी कहे जायेंगे जो अपनी रचनाओं को वर्ग–संघर्ष के प्रभाव के छूत से बचाने में लगे रहते है।"[4] यहाँ इस बात पर विचार करने की जरूरत है कि 'चलित्तर कार्मकार' लोग क्यों पैदा होते हैं। इसका जवाब साफ है कि ऐसे लोग सामाजिक विषमताओं और संघर्षों से उत्पन्न होते हैं न कि स्वयं ही डकैती या अन्य कार्यों

---

1. ऋणजल धनजल, रेणु, पृ. 111
2. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 219
3. कृषि कार्यक्रम (माले), पृ. 39
4. क्रान्ति और संयुक्त मोर्चा, भाग–1

के लिए उत्पन्न होते है। चलित्तर कर्मकार जैसे युवक न तो गुमराह हैं न ही वह दिग्भ्रमित हैं। आज भी सैकड़ों और हजारों की संख्या में लोग भारत के कोने–कोने में मिल जायेंगे अपने अधिकार के लिए लड़ने वाले लोग। आज जो नक्सलवाड़ी की समस्या बढ़ती जा रही है इसमें भी कहीं न कहीं सामाजिक विषमता और उससे उत्पन्न व्यापक असंतोष है। इसलिए समाज और देश की स्वस्थ्य मानसिकता पर विचार करने की जरूरत है।

भूमिसुधार आन्दोलन के समय किसानों की स्थिति और अजीबो–गरीब हो गई है। यहाँ पर जो जनसंघर्ष हुआ उसका भी पूरा का पूरा फायदा जमींदार को मिला क्योंकि सन्थालियों को जमीन नहीं मिली। और उनको ऊपर से जेल में डाल दिया गया। विश्वनाथ प्रसाद जैसे लोग अपने तिकड़म से लोगों को खुश्या करने के लिए अपनी थोड़ी सी जमीन में से बांटकर अपना यश कमाता है और उसके पीछे अपना स्वार्थ सिद्ध करता है। 'मैला आँचल' में जमींदार के प्रतिनिधि विश्वनाथ प्रसाद का अचानक हृदय परिवर्तन होता है और उस गाँव के सभी भूमिहीन और बेदखल हुए किसान को पुनः भूमि मिल जाती है। अब किसानों को भूमि मिल जाती है तो उनकी क्या स्थिति होती है। इसे रेणु ने 'मैला आँचल' में बहुत ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया हैं "कंधे पर हल लिए मरियल बैलों को हाँकता हुआ जा रहा है विरंची ... कोयरी टोला के सोबरन का तीन बीघा खेत मनकुत्ता पर जोतता है। मगर इस साल टोटा पड़ेगा। उनकी सूरत, दियासलाई की डिबिया में जैसे हलवाहे की छापी रहती है – एकदम दुबला–पतला, काला कलूटा, कमर में बिस्ठी ... वैसी ही है।"[1] इतना ही नहीं है बल्कि तइसीलदार के तिकड़मी दिमाग की ऐसी फिरकी चली की गाँव के सभी किसानों की स्थिति बदतर हो गयी। जमींन उन्मूलन के कानूनी छाँव पेंच करके तहसीलदार सारी की सारी जमीन अपने पास ही रखी और थोड़ी सी जमीन गाँव के अन्य किसानों में बंटवाई। रेणु लिखते हैं "खेलावन अब खुद भैंस चराता है। तीन बजे रात में भैंस जैसा चरती है वह दिन–भर में नहीं चरेगी। अब तो उसको अपना रमना भी नहीं है, इसीलिए धत्ता की ओर ले जाता है। खेलावन यादव, यादव टोली का मड़र, भैंस चराकर लौट रहा है।"[2] रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि किस प्रकार भूमि सुधार का फायदा वर्चस्ववादी लोग उठाते हैं। जो किसान भोले–भाले हैं उनको अधिकार नहीं मिल पाता है। लेकिन 'परती–परिकथा' के किसानों में अधिक चेतना दिखाई देती है। जहाँ 'मैला–आँचल'

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 3000
2. वही, पृ.

के किसान अपना सारा सरोकार तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद को सौंपकर अपनी जमीन से बेदखल हो जाते हैं यहाँ 'परती–परिकथा' मे ऐसा नहीं है। बल्कि यहाँ भूमि सुधार आन्दोलन के समय अलग ही रंग दिखाई पड़ता है। रेणु ने परती–परिकथा में दिखाया है कि भूमि सुधार के समय हर किसान में अपनी जमीन बचाने के लिए जागृति है तथा जो चालाक लोग हैं वे अपनी चालाकी में भी पीछे नहीं हैं। ऐसे लोग कहीं राजनीति से फायदा उठाते हैं तो कहीं कानूनी दाँव पेंच से अपना रास्ता तैयार करते हैं। "जिले भर के किसानों और भूमिहीनों में महाभारत मचा हुआ है। सिर्फ भूमिहीन नहीं, डेढ़ सौ बीघे के मालिकों ने भी दूसरे बड़े किसानों की जमीन पर दावे किए हैं। ... हजार बीघे वाला भी एक इंच जमीन छोड़ने को राजी नहीं।"[1] 'परती–परिकथा' के किसान मैला आँचल के किसान की तरह कानूनी शिकस्त खाने पर रोते नहीं या तहसीलदार की शरण में नहीं जाते बल्कि पूरी तैयारी के साथ अपनी जमीन को बचाने के लिए जागृति लाते हैं। इस बात को रेणु बहुत बारीकी से चित्रित किया है। रेणु लिखते हैं कि "छै महीने में ही गाँव का बच्चा–बच्चा पक्की गवाही देना सीख गया ! छै महीने में ही गाँव एकदम बदल गया है।"[2]

भूमि सुधार आन्दोलन के समय सत्ताधारी दल के लोगों का ही बोलबाला था। मैला–आँचल में रेणु ने दिखाया है कि तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद कांग्रेस की जिला कमेटी के सदस्य हैं जिसके कारण उनका हर काम आसानी से हो गया। उनकी जमीन भी बच गई और वे जनता के शुभ चिन्तक भी बन गए। यही बात 'परती–परिकथा' में दिखाई पड़ती है। सर्वे के समय में लोगों की धारणा है कि जिस व्यक्ति की सहायता कांग्रेसी लोग करेंगे उसकी एक भी इंच जमीन नहीं खराब होगी। रेणु लिखते हैं कि "... सर्वे के समय लुत्तो की कीमत और बढ़ गयी है। सभी धीरे–धीरे जान गए हैं, सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट पार्टीवाले जिनकी मदद करेंगे, उन्हें जमीन हर्गिज नहीं मिल सकती, ब्रह्मा–विष्णु–महेश उठकर आयें तब भी नहीं। ... इसमें बहुत बड़ा रहस्य है जिसे सिर्फ लुत्तो ही जानता है।"[3]

इस प्रकार अन्त में कह सकते हैं कि रेणु ने भूमि सुधार कार्यक्रम को बहुत बारीकी से समझा है और अपने दोनों उपन्यास 'मैला आँचल' और 'परती परिकथा' में उसका वर्णन किया है। रेणु ने दिखाया है कि आजादी के बाद किसानों की जमीन से किस

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 327
2. वही, पृ. 327
3. वही, पृ. 329

प्रकार राजनीति की जा रही है और उसका फायदा सीमित लोगों अर्थात वर्चस्ववादी लोग उठा रहे हैं। इतना ही नहीं आज भी भारत में किसानों के लिए जमीन की समस्या बनी है। आज जहाँ हम भूमण्डलीकरण के युग में जी रहे हैं वहीं किसान अपनी जीविका चलाने के लिए समुचित रूप से खेती करने पर भी तबाह हैं। इसका सबसे बड़ा कारण है – भूमि का असामान्य वितरण। किसी के पास सैकड़ों बीघा जमीन है तो किसी के पास रहने के लिए जमीन नहीं। इन सारी बातों को रेणु ने अपने उपन्यास के माध्यम से समाज के सामने रखा है। आज जरूरत है समाज और देश इस समस्या पर विचार करे और सही रूप से भूमि का वितरण सभी लोगों में किया जाए, तभी किसानों का समुचित विकास हो पायेगा। किसानों के बिकास से ही भारत का विकास हो सकता है। किसान अगर समुचित फसल की पैदावार नहीं कर पायेगा तो देश के सामने अनेक प्रकार की समस्या पैदा हो जायेगी। आज जरूरत है, इन सारी बातों पर विचार करने कीं तभी देश, राष्ट्र और समाज का भला हो सकता है न कि घटिया राजनीति करके इस लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है। भारत के सभी लोगों को एकजुट होकर इस समस्या से निजात पाने के लिए प्रयास करने की जरूरत है।

II. राजनीति में जातिवाद

भारत की आजादी के बाद राजनीतिक दलों का प्रवेश गाँवों में होता है और ग्रामीण जनों में चेतना का विकास होता है। लोग धीरे–धीरे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होते हैं। राजनीतिक दलों का ग्रामीण जीवन में प्रवेश करने के बाद राजनीतिक स्वरूप में काफी परिवर्तन दिखाई देता है। अब राजनीतिक दल जातिगत राजनीति का सहारा लेना शुरू कर दिए। रेणु ने अपने दोनों उपन्यासों 'मौला–आँचल' और 'परती–परिकथा' में राजनीतिक दलों के इस चरित्र को बड़ी बारीकी से चित्रित किया है। ये राजनीतिक दल अपने हित के लिए किस प्रकार जातियों को गोलबन्द करके अपने राजनीतिक हित साध रहे हैं, यह देखने ही लायक है। इतना ही नहीं अब लोग राजनीतिक पार्टी की विचारधारा और सिद्धान्त को न देखकर पार्टी से नहीं जुड़े रहे हैं, बल्कि यह देखकर पार्टी में शामिल हो रहे हैं कि उसकी जाति के लोग उस दल के प्रमुख नेता हैं कि नहीं ? अगर नहीं हैं तो उस दल में लोग शामिल नहीं होंगे। लोगों के मन में ऐसी मानसिकता बन चुकी है उनकी जाति का विकास बिना उनके जाति के नेता से नहीं होगा। अगर लोगों की ऐसी ही मानसिकता रही तो न तो इससे देश का विकास होगा न ही समाज का भला होगा। इन सारी बातों से रेणु टकराते हैं और समाज के सामने राजनीति के जातिगत विकृत स्वरूप को चिह्नित करते हैं।

रेणु शुरुआती दिनों में समाजवादी आन्दोलन से जुड़े हुए थे। उस समय काफी उत्तेजना के साथ उन्होंने आन्दोलन में बढ़–चढ़ कर भाग लिया थां उन्होंने कहा था "किन्तु हम हारेंगे नहीं हम विश्वास नहीं खोएंगे। हमने देखा है क्रुद्ध जन समुद्र के उत्ताल तरंगों को जनशक्ति की प्रचण्ड ज्वाला को ... हमारे मुहँ से कौर छीनने वाले अनाज चोर, काले बाजार वाले भ्रष्टाचार के देवता, शोषण के आचार्य अन्धकार के सम्राट, गरीबी के जनक आजादी के शत्रु। ... 8 अगस्त 42 के उस ऐतिहासिक प्रस्ताव की धज्जियाँ उड़ाने वाले महापुरुषगण जिन्होंने अंग्रेजों को भगाने का बीड़ा उठाया था वे आज अंग्रेजों के चरणों पर आजादी का सिर चढ़ाकर ... किसान मजदूर राज्य स्थापित करने की प्रतिज्ञा करने वाले जिन्होंने 'ताकत' को अपनी बपौती सम्पति समझते हैं और जनसाधारण को पद–पर पर लांछित और अपमानित करके जनशक्ति को दबाने की नापाक हरकत कर रहे हैं। ... बगावत के प्रतीक। हमें बगावत का वरदान दो ! हम इनके स्वर्ग में आग लगाना चाहते हैं, हम सच्चा

स्वराज्य लाना चाहते है।"[1] लेकिन रेणु अपने इस काम में सफल नहीं हो पाये इसलिए उन्होंने समाजवादी आन्दोलन से अपने को अलग कर लिया। रेणु अपने को समाजवादी आन्दोलन से अलग होने का क्या हो सकता है ? इस सवाल से टकराना चाहिए। रेणु हमेशा समान मानवीय दृष्टि से लोगों को देखते थे। रेणु इस बात को अच्छी तरह से जानते थे। समाज और राष्ट्र का विकास तभी हो सकता है जब हर व्यक्ति का विकास होगा। रेणु ने देखा जो समाजवादी आन्दोलन गरीब और दबे कुचले के लिए आन्दोलित था आज वह जातिगत ध्रुवीय आधार पर फँस कर रह गया है। रेणु ने इन सारी बातों को देखते हुए अपने को समाजवादी आन्दोलन से अलग कर लिया लेकिन अपनी लेखनी के माध्यम से वे अपने आन्दोलन को हमेशा आगे बढ़ाते रहे, जिससे मानवजाति का हित हो सके।

आजादी के बाद राजनीतिक स्वरूप में किस प्रकार परिवर्तन आता है, इस बात को रेणु ने 'परती–परिकथा' में बड़े सटीक ढंग से रखा है। वे लिखते हैं कि "पिछले आठ–दस वर्षों से जातिवाद ने काफी जोर पकड़ा है। राजनीतिक पार्टियाँ भी जातिवाद की सहायता से संगठन करना जायज समझती हैं। राजनीति के दंगल में सब कुछ माफ है।"[2] इतना ही नहीं राजनीतिक स्वरूप का बोलबाला इतना बढ़ गया है कि जिससे जातीय गत समस्या और बढ़ गयी है। अब हर जातियों की अपनी पहचान पर काम करने दिया जा रहा है। अगर व्यक्ति उसकी जाति का नहीं है तो उसे तमाम तरह से परेशान किया जाएगा। रेणु परती–परिकथा में लिखते हैं कि "... भूमिहार डॉक्टर को राजपूतों ने मिलकर धमकी दी। कायस्थ डॉक्टर के खिलाफ दरखास्त दी गई थी – पैसा लेकर भी दूसरी जातिवालों को बढ़िया दवा नहीं देता और कायस्थों को मुक्त में दवा और सूई देकर इलाज करता है। ... डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ने अस्पताल को बन्द कर दिया, पाँच साल पहले।"[3] स्पष्ट है कि लोग जाति वैमनस्य के कारण विकास गाँव देश का नहीं होने देते केवल जाति के आधार पर एक दूसरे के ऊपर आरोप–प्रत्यारोप लगाया जा रहा है, कोई भी व्यक्ति सच्चाई जानने की कोशिश नहीं करता। केवल मेरी जाति ऊँची है और तुम्हारी जाति नीची है। इसी के चक्कर में फँसकर विकास अवरुद्ध कर लेते हैं। इसमें राजनीतिक दल अपनी खिचड़ी पकाने में पीछे नहीं रहते हैं। वे तो केवल मौके की तलाश में रहते और आग में घी डालते हैं। रेणु ने इस

---

1. एकांकी के दृश्य, रेणु, पृ. 17
2. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 324
3. वही, पृ. 323

(जातिवाद) घिनौने रूप को बड़े बारीकी से चित्रित किया है। रेणु ने 'मैला आँचल' में लिखा है कि "राजपूतों और कायस्थों में पुश्तैनी मन–मुटाव और झगड़े होते आए हैं। ब्राह्मणों की संख्या कम है, इसलिए वे हमेशा तीसरी शक्ति का कर्त्तव्य पूरा करते रहे हैं। अभी कुछ दिनों से यादवों के दल ने भी जोर पकड़ा है।"[1] कुछ लोग समाज में ऐसे भी होते हैं जो एक जाति को दूसरी जाति से लड़ाने का काम करते हैं। कुछ ऐसा ही काम जोतखी जी का है। उन्होंने राजपूतों को समझाया "जब–जब धर्म की हानि हुई है, राजपूतों ने ही उनकी रक्षा की है। घोर कलिकाल उपस्थित है, राजपूत अपनी वीरता से धर्म को बचा लें।"[2] स्पष्ट हो जाता है कि जातिवाद का जहर आज कोई नया नहीं है बल्कि यह प्राचीन काल से चला आ रहो है जो काम प्राचीन काल की जाति के लिए धर्म निर्धारण करता था आज उसी बात को राजनीति निर्धारित कर रही है। राजनीति ने ग्रामीण जीवन में चेतना का विकास अवश्य किया लेकिन इससे जातिवाद को और बढ़ावा मिला।

जातिवाद का स्वरूप इतना विकृत हो चुका है कि ऊँची जाति के लोग नीची जाति के लोगों को लीडर के रूप में नहीं देख सकते हैं। इसके पीछे कारण यह है कि परंपरा से चली आ रही वर्चस्ववादी जातियों का वर्चस्व टूटने का भय है। इसी कारण ये लोग नीची जाति के लोगों को नेता के रूप में स्वीकार नहीं करना चाहते हैं। प्राचीन समाज से लेकर आधुनिक समाज तक लगभग यही स्थिति बनी रही है कि अपने से नीचे के लोगों को वह इज्जत समाज में उच्च वर्ग के लोगों ने नहीं दिया। इसके पीछे वर्चस्ववाद की पूरी की पूरी परम्परा रही है। रेणु ने इस परम्परा पर भी प्रहार किया है। रेणु ने देखा है कि आज भारत आजाद होने के बाद भी जातिवाद के इस ऊँच–नीच के भेदभाव को नहीं भुलाया जा सका है। रेणु लिखते हैं कि "आज तो लीडर ही हो गए। तो आजकल कांग्रेस आफिस का चौका–बर्तन कौन करता है।" हर गौरी अचानक उबल पड़ा। "अरे भाई, सभी काशी चले जाओगे ? पत्तल चाटने के लिए भी तो कुछ लोग रह जाओ। जेल क्या गए, पंडित जमाहिरलाल हो गए। कांग्रेस आफिस में भोलटिपरी करते थे, अब अंधों में काना बनकर यहाँ लीडरी छाँटने आया है। स्वयंसेवक न घोड़ा का दुम।"[3] एक ओर जहाँ उच्च वर्ण के लोग निम्न वर्ग के लोगों को नेता के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं वहीं

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 28
2. वही, पृ. 29
3. वही, पृ. 33

'परती–परिकथा' के लुत्तो ने निम्न वर्ग के होने का भरपूर राजनीतिक फायदा उठाया है। लुत्तो शासक पार्टी का नेता हैं वह कांग्रेस पार्टी में मिसिर के बेटे को दागने के लिए आया है। वह मिसिर के बेटे को दागे निश्चित रूप से चाहे बोली से या गोली से क्योंकि वह "जाहिल ही है लुत्तो लेकिन है असल राजनीतिक लंगीबाज।"[1] इतना ही नहीं है वह अपने से निम्न जाति के लोगों के साथ भी उचित व्यवहार नहीं करता है। एक तरफ तो स्वयं अपनी निम्न जाति का फायदा उठाता है वहीं दूसरी तरफ निम्न वर्ग के लोगों को अपनी बराबरी का हक देने में उसे काफी दिक्कत होती है। लुत्तो बालगोबिन के बारे में कहता है कि बालगोबिन मोची को तुम टोल–पोपी बचाने वाले राजनीति की बातें कैसे समझ सकते हों इस प्रकार देखते हैं कि जातिवादी राजनीति करने वाले लोग स्वयं का फायदा लेने के लिए जाति का सहारा ले लेते हैं, लेकिन अपना स्वार्थ सिद्ध हो जाने पर अपनी जाति को ही लोग भूल जाते हैं। चुनाव जीतने के बाद जन प्रतिनिधि जनता से काफी दूर हो जाते हैं। गाँव की हवा उनके स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त नहीं होती। संपादक जी प्रान्तायी सभापति हो गए हैं वह भी पटना में ही रहेंगे। "... सब आदमी अब पटना में ही रहेंगे। मेले (एम.एल.ए.) लोग तो हमेशा वहीं रहते हैं। सुराज मिल गया अब क्या है ... छोटन बाबू का राज है। एक कोरी बेमान बिलेक मारकेटी के समय कचहरी में घूमते रहते हैं। हाकिमों के यहाँ दात खिटकाते फिरते हैं। सब चौपट हो गया।"[2] इस तरह राजनीतिक दल के नेता जाति के नाम पर चुनाव जीतकर भी लोगों का भला नहीं करते हैं। केवल अपने हित के लिए इन सारी बातों का सहारा लेते हैं।

भारत में जातिवाद का वर्चस्व धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है। अब तो जाति मे उपजाति भी खोजी जाने लगीं इतना ही नहीं अब जाति के साथ गोत्र भी पूछा जाने लगा। इन सबका भी राजनीतिकरण किया जा रहा है। रेणु ने भारतीय समाज को बहुत बारीकी से देखा था। इसलिए उन्होंने अपने उपन्यासों में इस बुराई को बड़े यथार्थ ढंग से चित्रित किया है। अब भी लोग चेतनावान होने पर भी जाति का सहारा लेने से पीछे नहीं हैं, लोगों को इस बात का जहाँ तिरस्कार करना चाहिए वहाँ इस बात को वे स्वीकार कर रहे हैं। जातिवाद वास्तव में समाज का एक अभिशाप अंग है। रेणु ने जाति व्यवस्था पर व्यंग्य करते

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 332
2. वही, पृ. 218

हुए लिखा है कि "जाति बहुत बड़ी चीज़ है। जात–पात नहीं मानने वालों की भी जाति होती है। सिर्फ हिन्दू कहने से ही पिंड नहीं छूअ सकता। ब्राह्मण है ? ... कौन ब्राह्मण ! गोत्र क्या है ? मूल कौन है ? ... शहर में कोई किसी से जात नहीं पूछता। शहर के लोगों की जाति का क्या ठिकाना। लेकिन गाँव में तो बिना जाति के आपका पानी नहीं चल सकता।"[1] इतना ही नहीं जातिवाद की इस विकृति में व्यक्ति का जीना दूभर हो गया हैं रेणु परती–परिकथा में लिखा है कि "आठ वर्षों से जातिवाद के दीमकों का मुख्य आहार रहा है मनुष्य का हृदय।"[2] इस तरह देखते हैं कि जातिवाद का जहर धीरे–धीरे पूरे समाज में व्याप्त होता जा रहा है। अगर ऐसी ही स्थिति रही तो व्यक्ति की स्वस्थ्य मानसिकता भी विकृत हो जायेगी। इसलिए इस बुराई से बचने की जरूरत है।

भारतीय राजनीति में जातिवाद का फायदा किस प्रकार हर राजनीतिक दल उठा रहा है। इस बात की तरफ रेणु ने स्पष्ट संकेत दिए हैं। रेणु का मानना है कि जो पार्टियाँ समाज के विकास के लिए गठित थीं, आज वही पार्टियाँ समाज को विभाजित करने के लिए तुली हैं। रेणु ने इस बात को 'मैला आँचल' में बहुत यथार्थ ढंग से चित्रित किया है। उन्होंने दिखाया है कि जब शहर कालीचरण जाता है तो उससे उसकी जाति पूछी जाति है किसी ऐसे–वैसे पार्टी के नेता द्वारा नहीं बल्कि साम्यवादी दल के नेता द्वारा। जब इस बात का पता चल जाता है कि मेरी गंज में सबसे ज्यादा यादव जाति के लोग हैं तो वहाँ साम्यवादी दल के नेता एक यादव नेता को सम्बोधित करने के लिए भेजते हैं। उन्हें भरोसा है कि इससे सारे यादव लोग साम्यवादी दल के कार्यकर्त्ता बन जाएंगे। लेकिन वही पार्टी बाद में कालीचरण की सहायता के लिए तैयार नहीं होती हैं कालीचरण पार्टी के लिए सब कुछ करता है लेकिन पार्टी से उसे तिरस्कार और अपमान के साथ जेल की सजा मिलती है। रेणु ने ऐसे राजनीतिक दलों के चरित्र को एकदम बेपर्दा कर दिया है कि जो लोग जाति के नाम पर लोगों को बहकाके अपने पक्ष में कर लेते हैं लेकिन जब सच्चाई का सामना करने की बात आती है तो वह कार्यकर्त्ता का साथ छोड़कर हट जाती है। रेणु ने इसी तरह 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि साम्यवादी दल का स्थानीय सचिव मकबूल है। यह पीताम्बर झा था अब अपना नाम बदलकर छोटी जाति के लोगों के साथ रहता है और अपने हित के लिए जुड़ा है, लेकिन जब मकबूल के तीनों भाई गरीबों का गला घोंटते हैं और

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 60
2. वही, पृ. 329

नौकरों को बुरी तरह से पीटते हैं। मकबूल इन बातों को चुपचाप देखता ही नहीं बल्कि नौकरों को पीटने वाले बड़े भाई को उकसाते हुए कहता है कि "और मारिए साले को। बड़ा काबिल हो गया है।"[1] इस प्रकार देखते हैं कि लोग एक तरफ जिस जाति के हित की बात करते हैं उसी जाति के लोगों के साथ उचित वर्ताव नहीं करते हैं। साम्यवादी दल का नारा था गरीबों, मजदूरों और किसानों के हित के लिए वह आन्दोलन करेगी। लेकिन वास्तव में ऐसा कुछ नहीं कर पाती है। उसका नारा केवल कहने के लिए ही है करने के लिए कुछ नहीं है। साम्यवादी दल की विचारधारा और सिद्धान्त के स्थान पर लोगों के व्यक्तिगत स्वार्थ और लाभ प्रमुख हो गया है। रेणु ने अपने दोनों उपन्यासों में इस बात की तरफ संकेत किया है कि इस दल के नेता निहितार्थ स्वार्थी और लोभी हैं। ये लोग केवल अपना हित साधते हैं और कुछ नहीं। इस दल के लोगों के लिए देश और समाज से कोई मतलब नहीं है बल्कि अपने हित से मतलब रह गया है।

जाति बड़ी चीज है। जाति से बढ़कर कुछ नहीं है ऐसा विचार कांग्रेसी नेता बालदेव जी का हैं उन्होंने कांग्रेस पार्टी की शाखा मेरीगंज में खुलवाई लेकिन आज उनका पार्टी के अन्दर महत्व नहीं रहा। पार्टी में आज दुलारचन्द कापरा और तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद जैसे लोगों का वर्चस्व कायम हो गया है। वैसे अगर जातिवाद पर नजर डालें तो पता चलता है कि जातिवाद का कोई प्रामाणिक आधार नहीं होता है। केवल स्वार्थ और अपने व्यक्तिगत हित की रक्षा के लिए लोग इसका सहारा लेते हैं वैसा देखा जाये तो स्वार्थी लोगों को जाति की याद केवल संकट के समय आती है। इन स्वार्थी जनों से पूछा जाना चाहिए कि क्या केवल जाति का प्रयोग अपने व्यक्तिगत हित के लिए तो स्वार्थी लोगों के पास इसका जवाब नहीं होगा। रेणु ने 'मैला–आँचल' में बालदेव के माध्यम से ऐसे चरित्र का चित्रण किया है जो केवल अपने स्वार्थ के कारण ही अपनी जाति को याद करता है। बालदेव के दिन जब सुखमय में थे तो उनको अपनी जाति की याद नहीं आयी लेकिन जब स्वयं उनके ऊपर संकट पड़ा तो उनको अपनी जाति की याद आयी। "... वह पुरैनियाँ जाएगा, वहीं से चन्नन पट्टी चला जाएगा। वह अब अपने गाँव में रहेगा, अपने समाज में, अपनी जाति में रहेगा। ... जाति बहुत बड़ी चीज है। ... जाति की बात ऐसी है कि सभी बड़े–बड़े लीडर अपनी–अपनी जाति की पाटी में हैं। ... यह तो राजनीति है।"[2] लेकिन

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 410
2. वही, पृ. 299

'परती परिकथा' में रेणु ने दिखाया है कि बालगोबिन को अपनी जाति पर ही गुस्सा आता है। वह अपनी जाति के ऊपर गुस्सा क्यों करता है। इस प्रश्न पर विचार किए जाने की आवश्यकता है। जातिगत संस्कार ने लोगों को इतना जकड़ लिया है कि लोग इससे उठकर सोच ही नहीं सकते हैं। इसके पीछे प्राचीनकाल से वर्चस्ववादी परंपरा का हाथ रहा है। उस व्यक्ति का कोई महत्व नहीं रहा, जो समाज को कुछ देना चाहता है जो गुण उसके अन्दर है जिससे समाज का भला हो सकें उसे समाज द्वारा नकार दिया जाता है, क्योंकि वह भला आदमी इसे नहीं दे सकता इसका पैमाना उसकी जाति से तय किया जाता है।

इस प्रकार की सामाजिक व्यवस्था से बचने की जरूरत है। आज इस व्यवस्था का बढ़चढ़कर समर्थन करने के लिए राजनीति खड़ी है। राजनीति को जिस प्रकार जातियो से जोड़ा जा रहा है उसका स्वरूप तो और ही विकृत होता जा रहा है। एक ही पार्टी के अन्दर अपने से निम्न जाति के लोगों को आगे बढ़ने नहीं दिया जाता है। ऐसे समय में उसके सामने क्या विकल्प हो सकता है। जाति के बन्धन में उसे ऐसा बांध दिया गया है कि वह उससे उभरकर स्वस्थ्य मानसिकता से कुछ सोच नहीं सकता है। "बालगोबिन को ऐसी बातें सुनकर बड़ा गुस्सा आता है, अपनी जाति पर अपने पर भी। वह क्यों चमार होकर जन्मा इस मिरतूभूबन में ? इसीलिए लुत्तो उसको रोज ठोकर देता है, कूट बोली बोलकर चिढ़ाता है। इन्हीं लोगों के चलते बालगोबिन का माथा हमेशा झुका रहता है।"[1] यह जाति व्यवस्था इतनी विकृत हो गई है कि व्यक्ति अपनी जाति में रहना ही नहीं चाह रहा है। इन सारी बातों को ऊँची जाति के लोग किस प्रकार नीची जाति के लोगों को और नीचा करके दिखाने में सहायक के रूप में उपयोग करते हैं। रेणु ने इन दोनों उपन्यासों में 'मैला आँचल' में जहाँ जाति का महत्व इतना है कि बालदेव उसी में जाकर रहना पसन्द करते हैं वहीं 'परती–परिकथा' में 'बालगोबिन्द' को अपनी जाति के कारण ही तमाम तरीके के लांछनों को सहना पड़ता है, जिसके कारण उसे अपनी जाति पर गुस्सा आता है।

जाति में राजनीति का रंग इतना भरा जा रहा है कि इससे व्यक्ति को बच पाना मुश्किल हैं लोग अपने से नीची जाति के मीटिंग तक में जाना पसन्द नहीं करते, क्योंकि इससे उनकी इज्जत कम हो जायेगी। इस इज्जत को बचाने के लिए ऊँची जाति के लोग झूठ–मूठ का बनावटी रंग दिखाते हैं। रेणु ने इस बात को बड़े यथार्थ ढंग से उद्घाटित

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 397

किया है। रेणु 'मैला आँचल' में लिखते हैं कि "सिपैहियाटोली का एक बच्चा भी इस सभा में नहीं था। उनके टोले में कटिहार से काली टोपीवाले दल के संजोजकजी आए हैं। लाठी–भाला टरेनि देते हैं। छोटी जात के लोगों की सभा में वे नहीं जा सकते।"[1] इतना ही नहीं संयोजक ही पुनः भारत को आर्यावर्त घोषित करते हैं और सत्ता क्षत्रिय जाति के हाथ में होने की बात करते हैं। लेकिन इस जाति की लड़ाई से बावनदास बहुत दुःखी है वह सोचता है कि लोगों को अपनी जाति अपने ऊपर लिखकर चलना चाहिए। "बावनदास सोचता है, अब लोगों को चाहिए कि अपनी–अपनी टोपी पर लिखवा लें – भूमिहार, राजपूत, कायस्थ, यादव, हरिजन।"[2] बावनदास की यह सोच आने वाले समय में यथार्थ रूप से दिखाई देती है। आज लोग तमाम तरह से अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए अपनी जाति का उपयोग करते हैं। अपनी जाति का उपयोग जहाँ स्वार्थ सिद्ध होने के लिए होता है लोग वहां अवश्य ही उसका उपयोग करना शुरू कर दिए हैं। रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि वे लोग जो कल तक अपने को क्षत्रिय जाति का कहते हैं आज फायदा के चक्कर में पड़कर किस प्रकार अपने आपको हरिजन घोषित कराने की भरपूर कोशिश करते हैं। "तीन साल पहले तक जो क्षत्रिय अपने को खास मानसिंह के वंशज बतलाते थे अथवा आल्हा–ऊदल की सन्तान बताकर दंगा–फसाद करते थे – देख लीजिए उन्हें ! उनके लड़के शिड्यूल्ड कास्ट और एवॉरिजिनल कम्युनिटी की फहरिस्त में अपना नाम लिखाने के लिए धक्कम–धुक्की कर रहे हैं। सोलकन्ह ही नहीं, कुछ बुनियादी बाबुओं ने भी तिकड़म–जोगाड़ करके परिगणित जाति में अपनी जाति का नाम दर्ज करवा लिया है – वहीं, नहीं ! कौन कहता है कि हम लोग राजपूत हैं। देख लीजिए गाँव में जाकर, हमारी जाति के लोग भेड़ चराते हैं। औरतें साल में तीन ही बार नहाती हैं, आज भी।"[3] इस दृश्य को देखने के बाद यह बात सामने आती है कि लोग अपने स्वार्थ के लिए इतना नीचे गिर जायेंगे, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इतना ही नहीं रेणु 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि श्री गरुड़धुज झा भी अपने को हरिजन घोषित कराने की पूरी कोशिश करते हैं। जिसके कारण वह अपना हित साध सकें। रेणु ने गरुड़धुज झा के बारे में लिखा है कि "गरुड़धुज झा महापात्र है – महाब्राह्मण। ब्राह्मण लोग भी उसके हाथ का छुआ नहीं खातें गरुड़धुज

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 113
2. वही, पृ. 177
3. वही, पृ. 403

झा ने दो–तीन महीने तक कचहरी की दौड़ धूप की – किसी तरह 'हरिजन ब्राह्मण' की लिस्ट में नाम लिख लिया जाये – हाँ हुजूर, डोम से भी गया गुजरा समझते हैं लोग हमारी जाति कों कण्टाहा ब्राह्मण ... ।"[1] जहाँ 'मैला आँचल' में जाति के अहम पर लोग आर्यावर्त की घोषणा करते फिर रहे हैं वहीं 'परती–परिकथा' में क्षत्रिय और ब्राह्मण अपने को हरिजन बनाने की बात कर रहे हैं। रेणु इन दोनों स्थितियों को बड़ी बारीकी से उभारा है। लेकिन वास्तव में देखा जाए तो दोनों स्थितियो के पीछे कारण यह है कि जहाँ एक ओर राजनीति का प्रवेश है वहाँ पर लोग अपने यश को बरकरार रखना चाहते हैं। जैसे क्षत्रिय लोग अपने को संघ से जोड़कर अपने वर्चस्व को बनाए रखना चाह रहे हैं। वहीं दूसरी ओर जहाँ व्यक्तिगत हित की बात होती है तो लोग सिद्धान्त और विचारधारा को त्याग कर लालच में पड़ने से पीछे नहीं रहते हैं। रेणु ने दिखाया है कि लोगों के अपने काम के लिए उल्लू सीधा करने से मतलब है और कुछ नहीं।

इस जातिवाद के महाभारत पर सही नजर डाली जाये तो बात साफ उभरकर आती हे कि इससे मानवता का नुकसान है। जातिवाद की लड़ाई में विकास के सारे काम रुक जाते हैं। राजनीतिक दलों का जातिवाद से केवल इतना मतलब है कि वे अपने हित के लिए उल्लू सीधा करते हैं। कोई भी राजनीतिक दल इस बात की गारंटी लेने को तैयार नहीं है कि इस जातिवाद के महाभारत को वह खत्म कर देगा। राजनीतिक पार्टी हमेशा इस बात के चक्कर में रहती है कि कहाँ से पार्टी का फायदा पहुँचाया जाए। रेणु ने जातिवाद के इस महाभारत को सही पकड़ा है " ... जातिवाद के दीमकों का मुख्य आहार रहा है मनुष्य का हृदय।"[2] अगर इस बुराई को समाज ने समाप्त नहीं किया तो मनुष्य के अन्दर विवेक बुद्धि के बिना कुछ भी करने की क्षमता नहीं रह जाएगी। क्योकि मनुष्य के शरीर में हृदय का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है। अगर मनुष्य के शरीर में हृदय नहीं रहेगा तो वह पशु हो जाएगा। सोचिए पशु हो जाने पर मानव समाज पुनः आदिम समाज की ओर वापस लौट जाएगा। इसलिए इस बुराई को जड़ से खत्म करने की जरूरत है। इसके लिए पूरे मानव समुदाय को संगठित होने की जरूरत है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 403
2. वही, पृ. 329

III. कांग्रेस के अन्तर्विरोध

भारत में कांग्रेस पार्टी का प्रमुख इतिहास रहा है। कांग्रेस पार्टी के गठन से लेकर भारत की आजादी तक, इस पार्टी के प्रति लोगों का लगाव और श्रद्धा बनी हुई थी। कांग्रेस पार्टी का नारा था कि भारत की आजादी के बाद सत्ता भारतीयों के हाथ में रहेगी तथा समान अधिकार से सभी व्यक्तियों का जीने का अधिकार होगा। साम्राज्यवाद के खिलाफ लोगो को आन्दोलित करने में कांग्रेस पार्टी पूर्ण रूप से सफल रही। इसके पीछे प्रमुख कारण था देश के प्रति समाज के प्रति तथा मानव के प्रति सच्ची ईमानदारी। इस पार्टी में बहुत कम ऐसे तत्व थे जिनके प्रति लोगों का विश्वास न रहा हो। कांग्रेस पार्टी की विचारधारा और सिद्धान्त दोनों ही देश और समाज के हित में उपयोग थे। पार्टी का उद्देश्य था कि जब हमारा शासन होगा तो सभी लोगों का अपना मकान होगा तथा अनाज उपजाने के लिए खुद की जमीन होगी। इन सारे सपनो को सजोए हुए पार्टी ने लोगों को आन्दोलित किया था। उस समय पार्टी के नेताओं में त्याग, बलिदान और देश सेवा की भावना कूट–कूट कर भरी थी। ये लोग देश के प्रति हँसते–हँसते कुर्बान हो जाने के लिए हमेशा तैयार थे। इनकी कुर्बानियों से लोग नसीहत लेते थे। ऐसे नेताओं के त्याग और बलिदान से ही भारत को आजादी मिली।

आजादी के बाद भारतीय राजनीति में एकाएक बदलाव आया। कांग्रेस पार्टी के नेतृत्व में भारतीय सरकार का गठन हुआ। लोगों के मन में भारत के नवनिर्माण की बात थी कि यह पार्टी भारत के विकास में बढ़ चढ़कर काम करेगी। लेकिन व्यवहारिक रूप में ऐसा कुछ नहीं हुआ। ऐसा न हो पाने के पीछे क्या कारण हो सकते हैं। जिस पार्टी का नारा ही भारत के नवनिर्माण का था वही पार्टी जब सत्ता पर काबिज हुई तो उसके सारे उद्देश्य केवल कागजी कार्यवाही तक सीमित क्यों हो गए ! इन सबके पीछे प्रमुख तत्व कौन से थे। कांग्रेस पार्टी की विचारधारा और सिद्धान्तों में आजादी के बाद से ही पतन शुरू हो गया, अब पार्टी के अन्दर लोगों के व्यक्तिगत लाभ भ्रष्टाचार, जातिवाद तथा क्षेत्रवाद का तत्व हाबी होने लगा। ऐसे तत्वों के कारण ही कांग्रेस के चरित्र का पतन हुआ।

रेणु भारतीय राजनीति के हर पहलू से भली–भांति परिचित थे। वे स्वयं विद्यार्थी जीवन से लेकर युवावस्था तक सक्रिय राजनीति में भाग ले चुके थे। रेणु इस बात को बहुत बारीकी से देख रहे थे कि जिन लोगों को राजनीति का एक शब्द भी नहीं आता था वही

लोग बड़े–बड़े राजनेता बनते जा रहे हैं। आजादी के बाद राजनीति में इस तरह गदर मचा हुआ था कि लोगों को धीरे–धीरे यह एहसास होने लगा कि अगर राजनीति का यही चरित्र रहा तो ईमानदार लोग इससे दूर हो जाएंगे। रेणु ने स्वयं को बाद में ऐसी राजनीति से दूर कर लिया था। राजनीति के स्वरूप को देखा जाए तो राजनीति उतनी गन्दी नहीं है, जितने कि लोग इसे गन्दी करने पर तुले हुए हैं। आज लोग अपने वर्चस्व, लाभ और हित के लिए राजनीति का प्रयोग कर रहे हैं कुछ अलगाववादी ताकतें भी अपना सिर उठाकर कभी धर्म के नाम पर कभी राष्ट्र के नाम, कभी जाति के नाम पर तो कभी क्षेत्र के नाम पर अपनी राजनीतिक एजण्डे खड़े कर रही है। आज राजनीतिक स्वरूप बहुत ही विकृत हो चुका हैं ऐसे रानीतिक स्वरूप से देश और समाज को बचाने की जरूरत है।

'मैला–आँचल' और 'परती–परिकथा' में रेणु ने दिखाया है कि कांग्रेस पार्टी के मूल्यों का पतन किस प्रकार होता है और उसके स्थान पर व्यक्तिगत हित किस प्रकार हावी हो जाते हैं। 'मैला आँचल' और 'परती परिकथा' दोनों में भारत की आजादी के बाद जो बदलाव आता है उसका बहुत ही यथार्थ चित्रण मिलता है। इन दोनों उपन्यासों में कांग्रेस पार्टी के अन्तर्विरोधों को बहुत यथार्थ ढंग से उद्‌घाटित किया गया है। रेणु ने दिखाया है कि किस प्रकार लोग अपने को पार्टी से जोड़कर रातोंरात बड़े–बड़े नेता बन जाते हैं जो व्यक्ति लम्बे समय से पार्टी के कार्यों से लगातार लगे हुए हैं उन्हें पार्टी दरकिनार कर देती है। पार्टी का आज मतलब लोगों के हित सधने चाहिए और किसी चीज से कुछ लेना–देना नहीं रह गया है। अपने व्यक्तिगत हित को ही लोग देशहित और समाज हित मान रहे हैं हमेशा अपने फायदे के लिए पार्टी का उपयोग कर रहे हैं।

स्वाधीनता आन्दोलन की लड़ाई कांग्रेस के नेतृत्व में ही लड़ी गई। स्वतन्त्रता मिलने के बाद कांग्रेस पार्टी का पतन शुरू हो जाता है। स्वतन्त्रता मिलने के बाद ही बावनदास की हत्या के साथ गाँधीवादी मूल्यों की भी हत्या कर दी जाती है। गाँधीजी कांग्रेस में हमेशा सत्य और अहिंसा का पाठ पढ़ाते थे। बावनदास गाँधीवादी मूल्यों का प्रतीक था। 'मैला आँचल' में रेणु ने दिखाया है कि गाँधीवादी मूल्यों की हत्या इसलिए की गई कि आजादी के बाद भ्रष्टाचारी और अवसरवादी लोगों का ही कांग्रेस में राज होगा। बावनदास इस बात को जानता था कि सुराज मिलने पर पार्टी नेताओं की क्या स्थिति होगी। आज कांग्रेस के नेताओं का नैतिक पतन हो गया है। जिस पार्टी के नेता हमेशा जनता के बीच रहकर जनता के बारे में बात करते थे वही लोग शासन में आ जाने के बाद जनता को

भूल जाते हैं। बावनदास नेताओं के मूल्यों का पतन महसूस करता है "ससांक जी परांती सभापति हो गए हैं, वह भी पटना में रहेंगे। मेले लोग तो हमेशा वहीं रहते हैं। ... सुराज मिल गया अब क्या है। ... छोटन बाबू का राज है। एक कोरी बेमान, बिलेक मारकेटी के साथ कचेहरी में घूमते रहते हैं। हाकिमों के यहाँ दाँत खिटकाते फिरते हैं। सब चौपट हो गया।"[1] इतना ही नहीं बावनदास ने इस बात को बहुत नजदीक से देखा है कि कांग्रेसी नेता किस प्रकार अवसरवादी राजनीति करते हैं। गाँधी जी की मृत्यु पर उनकी राख को लेकर भी अवसरवादी राजनीति होने लगती है। बावनदास कहता है "गाँधी जी का भसम लेकर ससांक जी आवेंगे। छोटन बाबू बोले जिला का कोटा भसम जिला सभापति को ही लाना चाहिए। ... ससांक जी क्यों ला रहे हैं। इसमें बहुत बड़ा रहस्य। ... अमीनबाबू तुरत उठकर बैठ गए – बोले आप ठीक कहते हैं, छोटनबाबू गाड़ी तो चली गई। कटिहार जाने से गाड़ी मिल सकती है। ... तुरंत मोटर इस्टाट करके दोनो रवाना हो गए। सभापति मंतरी ... हो राम। राम मिलाए जोड़ी (हा ... हा) चले दोनों ... हा – हा। भसम लाने ... हा – हा। देश को भसम कर देंगे ये लोग। भसमासुर।"[2] इस प्रकार देखते हैं कि गाँधी जी के जिन मूल्यों पर चलकर देश को आजादी मिली थी उन्हीं मूल्यों पर किस प्रकार की अवसरवादी राजनीति की जा रही है।

रेणु ने इस बात को बड़ी बारीकी से देखा है कि मूल्यहीनता की बात कांग्रेस के बड़े नेता से छोटे नेता तक किस प्रकार पहुँचती है। उन्होंने परती–परिकथा में दिखाया है कि किस प्रकार कांग्रेस का स्थानीय नेता लुत्तो के अन्दर मूल्यहीनता की भावना भरी हुई है। लुत्तो को पार्टी विचारधारा और सिद्धान्तों से कोई मतलब नहीं है। उसे सिर्फ मतलब है स्वयं अपने से तथा अपने स्वार्थों के कारण ही तो वह कांग्रेस में शामिल हुआ है, वह कांग्रेस में मिसिर के बेटे को दागने के लिए शामिल हुआ है। रेणु ने लिखा है "किन्तु लुत्तो की बात निराली है। शासक पार्टी का कार्यकर्त्ता है – थाना कमिटी के प्रियजनों में से एक थाना कमिटी के सभापति जी जाहिल हैं। उनका विश्वास है कि पढ़े लिखे लोग काम कम बात ज्यादा करते हैं। इसलिए थाने पर भी ग्राम कमिटियां एक से एक जाहिलों के जिम्मे लगायी गयी हैं। फिर, लुत्तो ने अपने एक–एक लीडर को खुश कियां वर्कर के ही बल पर लीडर, लीडर के बल पर मिनिस्टर ! ... बड़े लोगों की सेवा कभी निष्फल नहीं जाती। ... सर्वे के

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 287
2. वही, पृ.

समय लुत्तो की कीमत और बढ़ गयी है। सभी धीरे–धीरे जान गये हैं, सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट पार्टी वाले जिनकी मदद करेंगे, उन्हें जमीन हर्गिज नहीं मिल सकती, ब्रह्मा–विष्णु–महेश उठकर आयें, तब भी नहीं।"[1] बावनदास को जिस बात का डर था वही हुआ। मूल्यहीनता तथा अवसरवाद की राजनीति कांग्रेस पार्टी के बड़े नेताओं से छोटे नेताओं तक पहुँचने लगीं इस बात की ओर कांग्रेस के किसी भी नेता का ध्यान नहीं गया कि वास्तव में पार्टी की विचारधारा और सिद्धान्त को कायम रखा जा सकता है। रेणु ने 'परती–परिकथा' में सीधा दिखाया है कि जमीन सर्वे के समय अगर जिस व्यक्ति का सहयोग कांग्रेस पार्टी के नेता नहीं करेंगे उस व्यक्ति को इंच भर जमीन नहीं मिलेगी। यहाँ सीधे–सीधे तौर पर राजनीति के विकृत स्वरूप का परिचायक कांग्रेस पार्टी में दिखाई देता है। जो कांग्रेस पार्टी में मैला आँचल तक कहीं–न–कहीं गाँधीवादी मूल्यों का शेष बावनदास के माध्यम से दिखाई पड़ता था, वह तो परती–परिकथा में बिल्कुल विलुप्त हो चुका है।

लुत्तो को ऊपर के नेताओं का वरदहस्त प्राप्त है तथा गाँव के महाजन एवं कर्मचारी उसके हाथ में है। लुत्तो जातिवाद फैलाकर अपनी राजनीति को चमकाता है, छोटी जातियों के संगठन बनाता है, जिसका आदेश सभापति ने दिया है। रेणु ने यहाँ पर इस बात का संकेत किया है कि कांग्रेस के चरित्र में किस प्रकार जातिवाद का जहर स्थानीय नेताओं के अन्दर भरा जा रहा है। जिसका परिणाम आगे चलकर बहुत भयानक साबित होगा। कांग्रेस की धर्मनिरपेक्षता की घोषणा के बावजूद लुत्तो धर्म का अपनी राजनीति के सिर के रूप में इस्तेमाल करता है। लोगों की धार्मिक भावनाओं को भड़काकर परती का कब्जा करना चाहता है। 'परती–परिकथा' में भी लीगी मीन समसुद्दीन कांग्रेस में शामिल हो जाता है तथा धर्म के नाम पर गाड़ीवानों को बहकाता है। इस प्रकार मूल्यों में पतन की कहानी जो ऊपर से प्रारम्भ हुई थी, नीचे तक जाती है। कांग्रेस पार्टी की मूल्यहीन राजनीति एवं अवसरवादी प्रवृत्ति को रेणु ने स्पष्ट तरीके से समर्पित किया है।

कांग्रेस पार्टी के अन्दर किस प्रकार धन का बोल बाला चलता है यह देखने की बात है। रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि किस प्रकार तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद और दुलारचन्द कापरा पैसे के दम पर कांग्रेस पार्टी के थाना केमिटी इत्यादि के मेम्बर बन जाते हैं वही त्याग और देशभक्ति करनेवाले बावनदास और बालदेव को पार्टी के किनारे

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 329

लगा देते हैं। वही 'परती–परिकथा' में लुत्तो राजनीति के द्वारा पैसा कमाना चाहता है। रेणु ने इन दोनों स्थितियों को बहुत ही यथार्थ ढंग से चित्रित किया हैं रेणु ने इस बात को देखा कि किस प्रकार लोगों के अन्दर में भ्रष्टाचार और अवसरवाद हावी हो जा रहा है। लोग अपने कहीं पैसे के बल पर सत्ता काबिज होना चाह रहे हैं तो कहीं सत्ता पर काबिज होकर पैसा कमाना चाह रहे हैं। राजनीति के प्रयोग को लोगों ने अनेक दुष्परिणाम भुगतने के लिए भी भूमिका तैयार कर रहे हैं। लोगों का स्वार्थ सिद्ध हो चाहे देश का विकास अवरुद्ध हो, चाहे समाज का विकास अवरुद्ध हो या पार्टी का विकास अवरुद्ध हों इन सबसे कोई लेना देना नहीं है।

रेणु ने 'मैला–आँचल' में दिखाया है कि दुलारचन्द कापरा जैसे लोग पैसे के दम पर पार्टी में अपना प्रमुख स्थान बनाते हैं। बालदेव सोचता है कि लोग पैसे के दम पर किस प्रकार निष्ठावान कार्यकर्त्ताओं को पार्टी से बाहर कर दिया जाता है। कांग्रेस के सामान्य कार्यकर्त्ता बालदेव तथा बावनदास अपनी पूरी निष्ठा के साथ पार्टी के सहयोग के लिए काम करते हैं, लेकिन धन की ताकत से कुछ लोग पार्टी में अपना वर्चस्व कायम कर लेते हैं। रेणु लिखते हैं "लेकिन बालदेव जी क्या करें ? चौधरी जी को वह सब दिन से गुरु की तरह मानता आ रहा है। किसी काम में तरौटी नहीं होने दिया। इतना चौअलियाँ मेंबर बनाकर दिया। गाँव में चरखा सेंटर खुलवा दिया, लेकिन जिला कमेटी के मेंबर तहसीलदार साहब हो गए। बालदेव को कोई खबर नहीं दी गई। कपड़े की मेंबरी भी नहीं रही। नीमक कानून के समय से जेल जाने का यही वख्शीस मिला है।

कालीचरन की पाटी वाले ठीक कहते हैं, "कांगरेस अमीरों की पाटी है।"[1] यह धन की ताकत का कमाल है कि तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद 'चारसौटकिया' मेम्बर बनकर कांग्रेस में पद प्राप्त कर लेता है। कांग्रेस के मूल्यों में पतन का यह उदाहरण है कि पार्टी में धन की ताकत निष्ठा और प्रतिबद्धता पर भारी पड़ती है। तहसीलदार और दुलारचन्द कापरा जैसे लोग कांग्रेस से जुड़कर क्या जनता का भला करेंगे ? कभी नहीं। क्योंकि ऐसे लोग पार्टी का प्रयोग अपने हित के लिए हथियार के रूप में करते हैं। दुलारचन्द कापरा जो आजादी के पहले तस्करी और शराब की दुकान चलाता था आज पैसे के दम पर थाना कमेटी का मेम्बर बन गया है और बावनदास जैसे निष्ठावान और त्यागवान व्यक्ति की हत्या

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 156

कराने में कोई कसर नहीं छोड़ता हैं बावनदास की हत्या और दुलारचन्द कापरा जैसे लोगों का कांग्रेस पार्टी में वर्चस्व इस बात का सूचक है कि कांग्रेस के अन्दर अब अन्तर्विरोध हावी हो गया है। पार्टी इस बात को समझ नहीं पा रही है कि पार्टी में बावनदास जैसे निष्ठावान कार्यकर्त्ता की जरूरत है ना कि दुलारचन्द कापरा जैसे तस्कर की। अब दुलारचन्द कापरा जैसे लोगों को ही पार्टी में स्थान मिल रहा है।

रेणु ने परती परिकथा में दिखाया है कि दुलारचन्द कापरा और तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद का चरित्र किस प्रकार स्थानीय कांग्रेसी नेताओं के अन्दर विकसित हो रहा है। जहाँ दुलारचन्द कापरा और तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद कांग्रेस पार्टी में अपने धन के बल से पार्टी में प्रमुख स्थान बनाते हैं वहीं लुत्तो राजनीति के बल से धन कमाने की कोशिश करता है। लुत्तो भूमि सर्वे के समय अपनी राजनीतिक लंगी लगाने में पीछे नहीं रहता। रेणु ने इस बात की ओर संकेत किया है कि किस प्रकार कांग्रेस के अन्दर पूंजीवाद का बढ़ावा मिलना शुरू हो गया। जो पार्टी साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के खिलाफ आन्दोलन खड़ा की थी वही पार्टी आज पूँजीवाद को पूरा आश्रय दे रही है। यह पार्टी के अन्दर उसके सिद्धान्तों का पतन दिखाई देता है। रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि कांग्रेस का स्थानीय नेता असल में राजनीतिक लंगी बाज है। इतना ही नहीं बल्कि कांग्रेस पार्टी के सभापति उसे कहते हैं कि "जाहिल ही है लुत्तो, लेकिन है असल राजनीतिक लंगीबाज।"[1] उसकी लंगीबाजी उस समय काम आती है जब वह शमसुद्दीन के कांग्रेस प्रवेश की समस्या को चोरचाबी का इस्तेमाल करके बड़ी सफाई से हल कर डालता है। वह लहरों को गिनकर चाँदी काटने वाले सरकारी कर्मचारियों से किसी भी प्रकार कम नहीं है। उसने भी कांग्रेस का चन्दा वसूल करके गपतगोल कर डाला है।

इस प्रकार देखते हैं कि पूंजीवाद का पार्टी के अन्दर किस प्रकार बोल–बाला बढ़ता जा रहा है। कांग्रेस के नेताओं का चारित्रिक पतन यहाँ तक हो गया है कि वे लोग पार्टी चन्दा को ही खा जा रहे हैं। रेणु इन सारी बातों को बड़े बारीक पैनी दृष्टि से उभारा है। रेणु ने देखा कि कांग्रेस के अन्दर आज ईमानदार लोगों की कमी होती जा रही है और कापरा तथा लुत्तो जैसे नेताओं का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। अगर यही स्थिति रहेगी तो आने वाले समय में कांग्रेस की स्थिति को संभालना मुश्किल हो जायेगा।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 332

कांग्रेस के चरित्र में बदलाव इतना आ गया है कि आज वह जातिवाद के राजनीति से अपने को अलग नहीं कर पा रही है। कांग्रेस पार्टी धीरे–धीरे अमीर जाति की पार्टी होती जा रही है। जिस बात का अनुभव बालदेव भी करता है। वह कहता है कि – "कालीचरन की पाटी वाले ठीक कहते हैं, "काँगरेस अमीरों की पाटी है।"[1] बालदेव की इस सोच में सचाई यह है कि आने वाले समय में कांग्रेस केवल अमीर लोगों की पार्टी हो जाती है और इतना ही नहीं कांग्रेस के अन्दर तमाम तरह के कुचक्र रचने से बाज नहीं आते। इस जाति ज़हर का प्रभाव कांग्रेस के ऊपरी नेताओं से स्थानीय नेताओं के बीच किस प्रकार विकसित हो रहा है। इस बात को रेणु ने परती–परिकथा में दिखाया है। रेणु लुत्तो के बारे में लिखते हैं कि वह जातिवाद के सहारे राजनीति चलाने वाले जाहिल नेता का प्रतिनिधित्व करता है।

इस प्रकार देखते हैं कांग्रेस पार्टी का मूल्य पहले देश सेवा और समाज सेवा के प्रति समर्पण था, आज वही पार्टी केवल पार्टी नेताओं के हाथ की कठपुतली बनकर रह गई है। जिस पार्टी ने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम की लड़ाई का नेतृत्व किया आज उसकी स्थिति यह हो गई है कि वह भ्रष्टाचारी अवसरवादी तथा पूँजीवादी लोगों के हाथों में खेल रही है। कांग्रेस पार्टी के नेता जनता को संगठित करके अपने हित साधते हैं और कुछ नहीं। रेणु ने इसीलिए 'परती परिकथा' में लुत्तो के बारे में लिखा है कि "इसलिए 'जनता' को लेकर दिनदहाड़े डकैती करने आये हो ?" कहने का मतलब है कांग्रेस में आज के नेता जनता को लेकर दिनदहाड़े डकैती करने में पीछे नहीं हैं। आज कांग्रेस के अन्दर विचारधारा और सिद्धान्त के नाम पर व्यक्तिगत हित, लालच और अवसरवाद की राजनीति की जा रही है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 156
2. वही, पृ. 350

IV. कम्युनिस्ट और समाजवादी आन्दोलन में बदलाव

कम्युनिस्ट आन्दोलन का भारतीय इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान हैं कम्युनिस्ट आन्दोलन का उद्देश्य था गरीब, दबे कुचले किसान, मजदूर और स्त्रियों को उनका हक दिलाना। कम्युनिस्ट आन्दोलन हमेशा अपने सिद्धान्तों और विचारधारा के अनुरूप कार्य करता रहा। इस आन्दोलन में किसानों और मजदूरों का महत्वपूर्ण स्थान रहा। इस आन्दोलन से जुड़े हुए लोगों का मानना था कि भारत की आजादी के बाद सत्ता किसानों और मजदूरों के हाथ में होनी चाहिए। लेकिन यह आन्दोलन भी भारतीय राजनीति में अपनी पूर्व निर्धारित भूमिका नहीं निभा पाया। इस आन्दोलन से जुड़े लोगों में भी धीरे–धीरे दिखावटीपन सामने आने लगा। राजनीतिक जीवन में राजनीति से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े होने के कारण रेणु ने हर दल की वस्तुस्थिति को बहुत बारीकी से समझा था। रेणु प्रत्यक्ष रूप से इस आन्दोलन से तो नहीं जुड़े हुए थे, लेकिन एक सजग राजनीतिक कार्यकर्त्ता होने के नाते अपने आस–पास घटित होनेवाली हर घटना से परिचित थे। रेणु ने देखा कि जो आन्दोलन किसानों और मजदूरों के अधिकार के लिए खड़ा हुआ था आज उसकी स्थिति यह हो गयी है कि वह मुखौटों की राजनीति कर रहा है। मुखौटों की राजनीति ने कम्युनिस्ट पार्टी को प्राथमिक उद्देश्य से भटकाना प्रारंभ कर दिया। पार्टी के कार्यकर्त्ताओं को पार्टी से कुछ भी लेना देना नहीं है, उन्हें तो सिर्फ अपने हित की पूर्ति के लिए कार्य करना चाहिए। पार्टी के साथी तो केवल कहने के लिए कामरेड हैं, उनकी वस्तुस्थिति कुछ और ही है। पार्टी से उनको केवल अपना हित साधना चाहिए और उन्हें किसी अन्य चीज से कोई मतलब नहीं है। इस तरह के विचारों ने कम्युनिस्ट आंदोलन को काफी कमजोर कर दिया था। रेणु ने बहुत बारीकी से देखा कि कम्युनिस्ट आन्दोलन की विचारधारा और सिद्धान्त के साथ उसके व्यवहार में जमीन–आसमान का फर्क दिखाई दे रहा है, ऐसी स्थिति से वे दुःखी थे।

रेणु ने 'मैला–आँचल' में कम्युनिस्ट आन्दोलन को उतना प्रभावपूर्ण नहीं दिखाया है क्योंकि आजादी के बाद इस आन्दोलन में थोड़ा सा ठहराव आता है। 'मैला आँचल' में कम्युनिस्ट पार्टी एक जगह 'चलित्तरकर्मकार' के बचाव में पर्चे बांटते हुए सामने आती है, बाकी जगहों पर उसका प्रत्यक्ष रूप से कहीं भूमिका नज़र नहीं आती है। रेणु ने कम्युनिस्ट आन्दोलन के तत्कालीन महत्व का निरूपण किया है।

रेणु ने कम्युनिस्ट आन्दोलन के बदलाव का यथार्थपूर्ण वर्णन 'परती परिकथा' में किया है। उन्होंने दिखाया है कि कम्युनिस्ट पार्टी जब ग्रामीण किसानों में आती है तो पार्टी के स्थानीय कार्यकर्त्ता मूल्यों के स्थान पर अपना व्यक्तिगत हित देखते हैं। रेणु ने 'परती–परिकथा' में मकबूल के माध्यम से कम्युनिस्ट दल की स्थिति की तरफ संकेत किया है कि किस प्रकार इस आन्दोलन का बिखराव होता है। रेणु लिखते हैं 'कम्युनिस्ट पार्टी का स्थानीय सचिव मकबूल है। और आगे बातें हैं कि इस पार्टी का मुखौटों की राजनीति किस प्रकार है। मकबूल का वास्तविक नाम पीतांबर झा है। उसने अपने ब्राह्मणत्व को झटक कर पटक देने के लिए अपना नाम मकबूल रखा है। वह गरीब गाड़ीवानो को झूठा सपना दिखा कर उनका नेता बन जाता है। जब इन लोगों को मकबूल की सच्चाई का पता चल जाता है तो वे लोग इसका साथ छोड़ देते हैं। इतना ही नहीं गरीब मजदूरों का अधिकार दिलाने वाला मकबूल व्यावहारिक जीवन में क्या करता है ? यह देखने लायक बात है। मकबूल के तीनों भाई गरीबों का गला घोंटते हैं और नौकरों को बुरी तरह से पीटते हैं। मकबूल इन बातों को चुनचान देखता ही नहीं, बल्कि नौकरों को पीटने वाले बड़े भाई को उकसाते हुए कहता है – "और मारिए साले को ! बड़ा काबिल हो गया है।"[1] इस प्रकार का कम्युनिस्ट पार्टी के लोगों का चरित्र है। दिखाने के लिए दाँत अलग हैं और खाने के लिए अलग, यह केवल मुखौटे की राजनीति है। मकबूल अवसरवादी राजनीति करने में भी पीछे नहीं है। वह एकतरफ अपनी पार्टी की विचारधारा की बात करता है सैद्धांतिक स्तर पर, लेकिन उसकी व्यावहारिक परिणति कुछ और ही है। रेणु लिखते हैं "अन्त में मकबूल ने समाजवादी सत्य का हवाला देकर कहा – "साथियों ! मेरे खयाल में सबसे सही रास्ता यह है कि कम्युनिस्ट की हैसियत से हम इस भोज का विरोध करें और ग्रामवासी के नाते इसमें जरूर शामिल हों।"[2]

इस प्रकार देखते हैं कि कम्युनिस्ट पार्टी जिस आन्दोलन को खड़ा करना चाह रही थी, उसमें उसे सफलता नहीं मिल पाती है। इस पार्टी के अन्दर भी स्वार्थ, लालच, असरवाद तथा मुखौटे की राजनीति हावी हो गयी। इस पार्टी के उद्देश्य अब किसानों और मजदूरों को उनके अधिकार दिलाने के बदले पार्टी के कार्यकर्त्ता अपना भला चाहने लगे हैं।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 156
2. वही, पृ. 544

साहित्य की दुनिया में आने से पहले रेणु समाजवादी आन्दोलन से गहरे रूप से जुड़े हुए थे। उन्होंने समाजवादी पार्टी के सारे मूल्यों को बहुत गहराई से परखा और जाँचा था। उन्होंने इस आन्दोलन से अपने विद्यार्थी जीवन से जुड़े हुए थे। रेणु समाजवादी पार्टी के सक्रिय कार्यकर्त्ता रहे तथा सन् 1942 के आन्दोलन के दौरान जेल की यात्रा भी की थी। उनकी राजनीतिक विचारधारा पर आचार्य नरेन्द्रदेव, लोहिया, जयप्रकाश आदि राजनीतिज्ञों का प्रभाव था। रेणु सन् 1952 के बाद से सक्रिय राजनीति से दूर रहे लेकिन अपने लेखन के माध्यम से जुड़े रहे। रेणु अपने उपन्यास 'मैला–आँचल' और 'परती–परिकथा' दोनों में समाजवादी मूल्यों का बारीकी से चिन्तन मनन किया तथा उन मूल्यों का आलोचनात्मक अध्ययन भी किया। रेणु के लेखन की सबसे बड़ी खासियत यह रही है कि उन्होंने कभी पार्टी का प्रचार के रूप में अपना लेखन कार्य नहीं किया बल्कि उन्होंने यथार्थ वस्तुस्थिति से पाठक को परिचित करवाया। 'मैला–आँचल' से लेकर 'परती–परिकथा' के सफर तक रेणु ने समाजवादी मूल्यों का जो मूल्यांकन किया है, वह बहुत ही यथार्थपूर्ण है। समाजवादी आन्दोलन के महान उद्घोषक रामवृक्ष बेनीपुरी का कथन है "अब राजनीति में तीन पार्टियां होंगी – एक चोरी करने वालों की, दूसरी गाली देने वालों की और तीसरी सबसे बड़ी पार्टी होगी उनकी जो चोरी भी करेंगे और गालियाँ भी देंगे।"[1] इतना ही नहीं बेनीपुरी जी लिखते हैं कि "यह राजनीति भी क्या है ? इससे भी गन्दी कोई चीज हो सकती है, ऊफ इसमें कितना पाखण्ड है, झूठ है, प्रपंच है, तिकड़म तो इसकी कुंजी है। वह इतिहास को मिटाता है। झूठा इतिहास तैयार करता है।"[2]

इस प्रकार देखते हैं कि राजनीति का स्वरूप लगातार विकृत होता जा रहा है। राजनीतिक दलबन्दी और राजनीतिक घटिया सोच देश के विकास में अवरोधक साबित होगी। रेणु लिखते हैं कि "पार्टी और दलबाजी ने इस देश का सबसे ज्यादा नुकसान किया है।"[3] यह राजनीतिक दलबन्दी से समाज इतना जटिल होता जा रहा है कि इससे बचना होगा। रेणु समाजवादी दल के मूल्यांकन में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी है। सोशलिस्ट पार्टी के बारे में बावनदास क्या कहता है, यह देखने लायक है "सोसलिस क्या कहेगा हमको ... सब पाटी समान। उस पाटी में जितने बड़े लोग हैं, मन्तरी बनने के लिए मार कर रहे हैं।

---

1. मुझे याद है – रामवृक्ष वेनीपुरी, पृ. 166
2. वही, पृ. 97
3. आत्मपरिचय, रेणु, पृ. 135

सब मेले मन्तरी होना चाहते हैं। देस का काम, गरीबों का काम, चाहे मजदूरों का काम, जो भी करते हैं एक ही लोभ से।"[1] स्पष्ट हो जाता है कि सोशलिस्ट पार्टी के अन्दर भी लोग स्वार्थ की राजनीति शुरू कर दिए हैं।

सोशलिस्ट पार्टी का उद्देश्य था कि सबको रहने के लिए घर तथा जमीन दी जायेगीं लेकिन यह पार्टी भी यथार्थ में ऐसा कुछ नहीं कर पायी। सोशलिस्ट पार्टी का ग्राम्यजीवन में प्रवेश करने से लोगों के मन में इसके प्रति उत्साह था कि यह पार्टी जमींदारी उन्मूलन में लोगों के साथ रहेगी। लेकिन यह पार्टी भी लोगों के मूल्यांकन पर खरी नहीं उतरी। इस पार्टी के स्थानीय कार्यकर्त्ता कालीचरन जैसे लोग पूरी ईमानदारी से पार्टी संगठन को गाँव में खड़ा करते हैं, लेकिन ऊपर के नेताओं के आगे उनकी एक भी नहीं चलती है। इस पार्टी का किसी भी समस्या पर क्या निर्णय लेना चाहिए उचित समय पर नहीं लिया जाता है। इतना ही नहीं अगर स्थानीय कार्यकर्त्ता आम लोगों के अधिकार के लिए संघर्ष करते हैं तो पार्टी उनके सहयोग में कभी भी साथ नहीं रहेगी। पार्टी के नेताओं को भी वही सुख सुविधाओं की लालच है जो सत्ता दल के नेता उठा रहे हैं। इस दल के नेताओं में त्याग और बलिदान का भाव लगभग विलुप्त दिखाई देता है। इसके स्थान पर वे व्यक्तिगत स्वार्थ अवसरवाद और जातिवाद की गन्दी राजनीति करते हैं।

रेणु ने 'मैला–आँचल' में दिखाया कि समाजवादी पार्टी के लोगों का नारा था कि "यह आजादी झूठी है।"[2] उनका नारा इसलिए था कि देश के सामने राजनीतिक पार्टियों में यह सहमति थी कि साम्राज्यवाद के खिलाफ जो लड़ाई है उसका सकारात्मक परिणाम निकले, पर आजाद भारत में किसानों और मजदूरों का राज कायम होगा, लेकिन सत्ता में काबिज होने के बाद कांग्रेसी इस नारे को भूल गए। सोशलिस्टों ने इस बात को बहुत ही जोर शोर से पकड़ा और किसानों और मजदूरों के राज कायम करने की बात की। इस पार्टी के लोगों ने देश के लोगों के सामने यह बात रखी है जो आजादी है वह मात्र एक दिखावा है। इसमें किसानों और मजदूरों का शोषण किया जा रहा है। यह आजादी झूठी है।

मैला आँचल में सोशलिस्ट पार्टी के बारे में लिखा गया है – "सुशलिंग पार्टी ! ... रास्ते में कालीचरन वासुदेव को समझाता है, "यही पाटी असल पाटी है। गरम पाटी है।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 232
2. वही, पृ. 226

'किरांतीदल' का नाम नहीं सुना था ? ... बम फोड़ दिया फटाक से मस्ताना भगतसिंह, यह गाना नहीं सुना हो ? वही पाटी है। इसमें कोई लीडर नहीं सभी साथी हैं, सभी लीडर हैं। सुना नहीं। हिंसाबात तो बुरजुआ लोग बोलता है। बालदेव जी तो बुरजुआ है, पूँजीवाद है। ... इस किताब में सबकुछ लिखा हुआ है। बुरजुआ, बेटी दुरजुआ पूँजीवाद पूँजीपति, जालिम जमींदार, कमानेवाला खाएगा, इसके चलते जो कुछ हो।"[1] यहाँ कोई लीडर नहीं सभी साथी ऐसा लोगों को बताया गया, केवल अपनी पार्टी का सदस्य बनाने के लिए, एक प्रकार से लोग को रहस्य में रखा गया कि सभी समान हैं लेकिन सच्चाई कुछ और ही है।

सोशलिस्ट पार्टी का नारा था कि जो जमीन जोतेगा जमीन उसी की होगी, और इस लड़ाई में स्थानीय कार्यकर्त्ता गाँव के लोगों में प्रचार भी करते हैं लेकिन ठीक समय में संघर्ष करने की बात आती है तो पार्टी अपने कदम पीछे हटा लेती है। रेणु ने मैला आँचल में दिखाया है कि सोशलिस्ट पार्टी के लोग गीत गा कर इस बात का प्रचार किया कि –

"जो जोतेगा सो बोएगा।
जो बोएगा सो काटेगा।
जो काटेगा वह बाटेगा।"[2]

इतना ही नहीं गाँव के लोगों में इस पार्टी के प्रति अत्यधिक उत्साह दिखाई पड़ता है। रेणु लिखते हैं कि "गाँव–भर के हलवाहों, चरवाहों और मजदूरों का नेता कालीचरण है। छोटा नेता बासुदेव सबों को समझाता है "भाई, आदमी को एक ही रंग में रहना चाहिए। यह तीन रंग का झंडा ... थोड़ा सादा, थोड़ा लाल और पीला ... यह तो खिचड़ी पाटी का झंडा है। कांग्रेस तो खिचड़ी पाटी हैं इसमें जमींदार हैं सेट लोग हैं और पासंग मारने के लिए थोड़ा किसान–मजदूरों को भी मेंबर बना लिया जाता है। गरीबों को एक ही रंग के झंडेवाली पार्टी में रहना चाहिए।"[3] समानता की बात करनेवाले सोशलिस्ट कार्यकर्त्ता सभी को जमीन दिलाने की बात करते हैं। ये लोग जमींदार और पूँजीपतियों का विरोध करते हैं। रेणु ने इस बात को बहुत बारीकी से देखा था कि जमींदार किस प्रकार से किसानों का शोषण करता है। जमींदारों के प्रति कालीचरन का दृष्टिकोण देखने लायक

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 99–100
2. वही, पृ. 127
3. वही, पृ. 144

है। रेणु लिखते हैं कि "कामरेड कालीचरन और वासुदेव अपनी पार्टी के मेंबरों से कहते हैं, "पुराने तहसीलदार यदि नागनाथ थे तो यह नया तहसीलदार साँपनाथ है। दोनों में कोई फर्क नहीं दोनों ही जालिम जमींदार के कठपुतले हैं।"[1] कहने का मतलब है कि इस पार्टी का शुरुआती आन्दोलन तो ठीक से चला लेकिन इसमें सफलता क्यों नहीं मिली इस पर विचार किया जाना चाहिए ? कौन से ऐसे तत्व थे जिसके कारण सोशलिस्ट पार्टी अपने उद्देश्यों में सफल नहीं हो पायी और धीरे–धीरे वह अपने मूल्य उद्देश्य से हटकर दूसरे कार्यों की ओर वह लग गयी।

सोशलिस्ट पार्टी का आन्दोलन धीरे–धीरे अपने मूल्य उद्देश्य से पीछे हटने का प्रमुख कारण रहा है कि जो बुराईयाँ कांग्रेस पार्टी में थी वही सारी बुराईयाँ धीरे–धीरे इस पार्टी में आ गयी। इस पार्टी के कार्यकर्त्ताओं को पूरे उत्साह से काम नहीं करने दिया गया। कालीचरन जैसे संघर्षशील युवक को दबा दिया जाता है और स्वार्थी लोगों का बोलबाला हो जाता है। कालीचरन ने पार्टी को पत्नी की तरह प्रेम किया लेकिन उसके हाथ में आया क्या झूठा आरोप और जेल की सजा। यहाँ तक कि उसका साथ पार्टी ने भी छोड़ दिया। इससे संघर्षशील युवकों का इस पार्टी से मोहभंग हो गया। रेणु ने 'परती परिकथा' में लिखा है कि "क्योंकि ये बुद्धिहीन दलबद्धता को पाशविक वृत्ति समझते थे।"[2] इस बात की तरफ लोगों को ध्यान देने की जरूरत है दलबद्धता से भी देश और समाज का विकास नहीं हो सकता है। बल्कि जरूरत है ठीक समय पर संघर्ष की जरूरत होनी चाहिए।

सोशलिस्ट पार्टी के कार्यकर्त्ताओं में भी वही दिखावटी रंग नजर आने लगा, यहाँ पर भी सिद्धान्तों का धीरे–धीरे ह्रास होने लगा और स्थान पर लोगों का व्यक्ति स्वार्थ हावी होने लगा। अब पार्टी कामरेडों को अपने स्वयं की भाव भंगिमा में रहना पसन्द आने लगा। इस पार्टी के नेता भी मन्त्री और एम.एल.ए. बनने का सपना देखने लगे। ये लोग यथार्थ मे काम न करके केवल अपने तक सीमित होने लगे तथा तमाम तरह के आडम्बरों का सहारा लेना शुरू कर दिए। रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया है कि "सुंदर आजकल हमेशा खद्दर का पंजाबी कुर्ता पहने रहता है। पंजाबी कुर्ते के गले में दो इंच की ऊँची पट्टी लगी हुई है। इसको सोशलिस्ट काट कुर्त्ता कहते हैं, सोशलिट को छोड़कर और कोई नहीं पहन सकता।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 144
2. वही, पृ. 573

गाँव के मेंबरों में सिर्फ तीन मेंबर ही ऐसा कुर्त्ता पहनते हैं – काली, बासुदेव और सुन्दर। बाकी मेंबरो ने जीवन में कभी गंजी भी नहीं पहनी है। लेकिन बिना सोशलिस्ट–काट कुर्ता पहने कोई कैसे जानेगा कि सोशलिस्ट है, किरांती है ! एक कुर्त्ते में सात रुपए खर्च होते हैं। ... बासुदेव आजकल बीड़ी नहीं पीता, मोटरकार सिकरेट पीता है। सिक्रेटरी साहब सैनिक जी, चिनगारी जी, मास्टर साहब, सभी बड़े–बड़े लीडर सिकरेट पीते हैं। सोशलिट पाटी के मेंबर को बीड़ी नहीं सिकरेट पीना चाहिए।"[1] सोशलिस्ट पार्टी में छोटे कार्यकर्त्ताओं में भी बड़े नेताओं जैसा ही हाव भाव वेशभूषा और खानपान की आदत पड़ गयी है। ये लोग इस बात पर बल नहीं देते कि वास्तव में समाज में सभी के साथ समानता का व्यवहार किया जाये बल्कि ये लोग अपने को और लोगों से अलग होने के लिए पढ़ने का सहारा लेकर केवल कामरेड कहलाना चाहते हैं और अपना व्यक्तिगत हित साधना चाहते हैं।

सोशलिस्ट पार्टी के अन्दर एक और जबर्दस्त बुराई पैदा होती है जातिवाद कीं यह पार्टी जातिवाद के सहारे ही ग्रामीण राजनीति में प्रवेश करती है। इस जातिवादी व्यवस्था से समाज विभाजित होता है न कि संगठित होता है। रेणु ने मैला आँचल में दिखाया है कि कामरेड गंगाप्रसाद सिंह यादव सैनिक जी को मेरीगंज इसलिए भेजा जाता है कि वहाँ पर यादवों की आबादी सबसे ज्यादा है जिससे यादव लोग जाति के नाम पर सोशलिस्ट पार्टी से जुड़ सके। रेणु लिखते हैं कि "मेरीगंज में सबसे ज्यादे यादवों की आबादी है। वहाँ आपका जाना ही ठीक होगा। वहाँ आर्गेनाइज करने में कोई दिक्कत नहीं होगी।"[2] इस तरह देखते हैं कि सोशलिस्ट पार्टी किस तरह से जाति राजनीति में फंस कर अपने मूल्य उद्देश्य से भटक जाती है।

सोशलिस्ट पार्टी का धीरे–धीरे पतन शुरू हो गया था। रेणु ने दिखाया है कि 'परती–परिकथा' में सोशलिस्ट पार्टी के कार्यकर्त्ताओं में चन्द पैसे को लेकर किस प्रकार लड़ाई होती है। वह देखने ही लायक हैं सोशलिस्ट पार्टी आजादी के थोड़े दिनों बाद किस तरह से बिखरना शुरू हो गयी थीं इसका प्रमुख कारण था कि कार्यकर्त्ताओं में आपसी मतभेद होना। लोग अपनी जेब भरने के चक्कर में पार्टी के मूल्यों को तिलांजलि दे चुके थे। अब पार्टी में कालीचरन जैसे कार्यकर्त्ता नहीं हैं कि वह पार्टी पर बिना आँच आये ही शहीद होने के लिए तैयार है, यहाँ पर पार्टी चाहे रसातल में चली जाये उससे इनको कोई लेना

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 166
2. वही, पृ. 99

देना नहीं है। इनको बस मतलब है आने स्वार्थ के लिए। रेणु ने परती–परिकथा में दिखाया है कि "सोशलिस्ट पार्टी के जयदेवसिंह और रामनिहोरादास का आपसी मतभेद इतना बढ़ गया कि भरी बैठक में ही दोनों के दलवाड़े लड़ पड़े। ... जयदेवसिंह परानपुर पार्टी का इनचार्य है और रामनिहोरादास ऑफिस सेक्रेटरीं जायदेवसिंह से उसकी हमेशा लड़ाई हुई है – बचपन से ही। स्कूल के मास्टर साहब ने नाम था – सुन्द–उपसुन्द ! ... सो जयदेवसिंह को विश्वासी साथियों से पता चला कि रामनिहोरादास के पास पार्टी की पुरानी रसीद बही है जिस पर वह चुपचाप चन्दा वसूलता है, खाता है। बात चुली, जब सिरचन बढ़ई ने आकर जयदेवसिंह के पास फरियाद की – "बावन रुपये का है पलँग, बाबू साहेब। पलँग बनवाकर ले गये रामनिहोराबाबू। एक महीना दौड़ने के बाद दाम के नाम पर एक डिबलूकट रसीद दीहिन हैं। रसीद लेकर हम क्या करें ?"[1] इस प्रकार देखते हैं कि सोशलिस्ट पार्टी का नारा था गरीबों को उनका अधिकार मिलना चाहिए। लेकिन यहाँ तो आफिस सेक्रेटरी ही अपने हित के लिए गरीब का शोषण करते हैं। इतना ही नहीं उनका नैतिक पतन इतना गिर गया है कि वह पार्टी के चन्दे को भी लूटने में पीछे नहीं है।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि सोशलिस्ट पार्टी जो अपने मूल्यों को लेकर आम लोगों के बीच आयी थी उसमें उसको सफलता नहीं मिलती क्योकि इस आन्दोलन में लगभग वही सारी बुराईयाँ आ गयी थीं जो कांग्रेस जैसी पार्टियों के अन्दर थे।

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 356

V. सरकारी योजनाओं का कार्यक्रम और आमजन

आजादी के बाद देश के नवनिर्माण का सपना देखा गया था। उस समय देश का नेतृत्व कांग्रेस के हाथों में आया। उसने देश के विकास में अनेक नई–नई योजनाएँ संचालित करवाई। लेकिन इसमें उसे कितनी सफलता मिली यह देखने की जरूरत हैं। सोशलिस्ट पार्टी भारत की आजादी को झूठी आजादी मान रही थी। ऐसे समय में कांग्रेस के सामने और अधिक चुनौतियाँ मौजूद थीं कि वह अपने योजनाओं का प्रोग्राम किस प्रकार क्रियान्वित करे कि उसका लाभ आम लोगों तक पहुँच सकें रेणु ने भारत में होने वाले नवनिर्माण के बारे में बहुत अच्छी तरह से देखा और परखा था। रेणु ने 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में इन योजनाओं के बारे में बड़े यथार्थ ढंग से लिखा है। किसी भी राष्ट्र का विकास तभी हो सकता है जब उस राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का विकास हो। अगर नागरिक चेतनाशील तथा सजग नहीं होंगे तो उस राष्ट्र का विकास कभी नहीं होगा। भारत के विकास में भी यहाँ के देशवासियों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भारत जब आजाद हुआ था तो इसके पास वैज्ञानिक उपकरण बहुत कम थे जिसके कारण विकास में काफी वक्त लग रहा है। लेकिन इसके साथ–साथ इन बातों का ध्यान रखना चाहिए कि भारत के विकास तथा इसके निर्माण में राजनीतिक दलों की क्या भूमिका रही है ? इन सारे प्रश्नों से टकराये बिना हमें सही बात की जानकारी नहीं मिल पायेगी।

स्वाधीनता आन्दोलन के समय में पं. जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में योजना आयोग बनाया गया था, जिसका उद्देश्य था भारत के सर्वांगीण एवं सन्तुलित विकास के लिए अनेक योजनाओं का निर्माण। भारत को योजनाओं की प्रेरणा सन् 1930–35 ई. में अमेरिकी टेनेसी घाटी परियोजना एवं समाजवादी रूस की पंचवर्षीय विकास येाजनाओं की सफलता से मिली थी। स्वाधीन भारत में भी इस तरह की योजनाओं का क्रियान्वयन की बात की गयी थी। रेणु ने अपने दोनों उपन्यासों में भारत में होनेवाली योजनाओं के निर्माण का यथार्थ चित्रण किया है।

रेणु ने 'मैला आँचल' में जिस सरकारी योजना से पाठक को परिचित कराया वह है 'मलेरिया रिसर्च सेन्टर'। इस योजना का उद्देश्य था गाँव में मलेरिया की रोकथाम एवं उसके खात्मे का उपाय। मलेरिया रोग के बीमारी से गाँव को बचाने के लिए वहाँ डॉ. प्रशान्त आता है। वह पूरी लगन और परिश्रम से कार्य को अनजाम देता है। डॉ. प्रशान्त

मलेरिया के कीटाणुओं को जड़ से खत्म करने की बात सोचता है। लेकिन गाँव में शिक्षा के अभाव में लोगों को सही जानकारी न होने के कारण उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। गाँव के अन्धविश्वासी और भूत–पिचास में विश्वास करने वाले लोग इसे अन्यथा ही लेते हैं। जोतखी जी मलेरिया सेन्टर का सबसे ज्यादा विरोध करते हैं। इतना ही नहीं यादव टोला के लोगों को इस बात की जानकारी न होने से कि यह मलेरिया सेन्टर खुल रहा है कुछ और ही कर डालते हैं। यादव टोला के लोग बालदेव को रस्सी में बाँधकर लाते हैं और मलेरिया सेन्टर के अधिकारियों के बताने के बाद उनको छोड़ते हैं। इन सारे बिन्दुओं पर विचार करने से बात साफ हो जाती है कि सरकार शिक्षा की उचित व्यवस्था न करने के कारण लोगों को तमाम परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है। और दूसरा प्रमुख कारण यह भी है कि सरकारी योजनाओं के बारे में लोगों तक ठीक प्रकार से सूचना के अभाव में भी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

इसीलिए जब डॉ. प्रशान्त मलेरिया उन्मूलन के लिए मेरीगंज में आता है तो उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वह मलेरिया और कालाजार के कीटाणुओं को समाप्त करने के लिए परिश्रम करता है लेकिन उसे महसूस होता है कि "क्या करेगा वह संजीवनी बूटी खोजकर ? उसे नहीं चाहिए संजीवनी भूख और बेबसी से छटपटा कर मरने से अच्छा हे मैलेग्नेण्ट मलेरिया से बेहोश होकर मर जाना। तिल–तिल कर घुल–घुल कर मरने के लिए उन्हें जिलाना बहुत बड़ी क्रूरता होगी।"[1] कहने का मतलब है कि उचित चिकित्सा के अभाव में लोग मर रहे हैं। सरकार इस समस्या की ओर उतना ध्यान नहीं दे रही है जितना देने की जरूरत है।

जोतखी जैसे लोग गाँव में तमाम तरह से अन्धविश्वास फैलाकर लोगों के मन में गलत धारणा पैदा कर रहे हैं। जोतखी का विश्वास है कि "डॉक्टर लोग ही रोग फैलाते हैं सुई भोंककर देह में जहर दे देते हैं, आदमी हमेशा के लिए कमजोर हो जाता है, हैजा के समय कूपों में दवा डाल देते हैं, गाँव का गाँव हैजा से समाप्त हो जाता है। काला बुखार का नाम पहले लोगों ने कभी सुना था ? पूरब मुलुक कामरू कमिच्छा हासाम से काला बुखार वालों का लहू शीशी में बन्द करके यही लोग ले आये थे। ... इसके अलावा बिलैती दवा में गाय का खून मिला रहता है।"[2] जोतखी के इसी प्रचार का परिणाम होता है कि गाँव में

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 181
2. वही, पृ. 15

हैजा फैल जाता है और यदि डॉ. प्रशान्त और कालीचरन जैसे युवक नहीं होते तो पूरे का पूरा गाँव हैजे की गिरफ्त में आ जाता। डॉ. प्रशान्त ग्रामीण लोगों की स्थिति देखकर अनुभव करता है कि "भयातुर इन्सानों को देखा है, बीमार और निराश लोगों की आँखों की भाषा को समझने की चेष्टा की है। उसे मध्यवित्त किसानों की अंदर हवेली और बेजमीन मजदूरों की झोंपड़ियों में जाने का सौभाग्य या दुर्भाग्य प्राप्त हुआ है। रोगियों को देखकर उठते समय, छीके पर टँगी हुई खाली मिट्टी की हांड़ियों से उसका सिर टकराया है। उसने देखा है ... गरीबी, गंदगी और जहालत भरी दुनिया में भी सुन्दरता जन्म लेती है।"[1] वह एक जगह इस पर चिन्तन मनन करता है कि "कफ से जकड़े हुए दोनों फेफड़े ओढ़ने को वस्त्र नहीं, सोने की चटाई नहीं, पुआल भी नहीं भीगी धरती पर लेटा न्युमोनिया का रोगी मरता नहीं है, जी जाता है। ... कैसे ? ... डी.डी.टी. और मसहरी की बात तो बहुत बड़ी हुई, देह में कड़वा तेल लगाना भी स्वर्गीय भोग–विलास में गण्य है।"[2] डॉ. प्रशान्त अन्त में इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि इस रोग के दो कीटाणु हैं – गरीबी और जहालत। इस तरह देखते हैं कि रेणु ने जिन कीटाणुओं की ओर संकेत किया हे सरकार उस ओर ध्यान देकर लोगों की जीवन दशा सुधारने में सहायता करनी चाहिए तभी देश और राष्ट्र का स्वस्थ विकास हो सकता है।

रेणु के मन मे जिस सरकारी योजना का सपना था वह उन्होंने 'मैला आँचल' में कल्पना की थी वह योजना थी कोसी नदी घाटी परियोजना। 'मैला आँचल' का डॉ. प्रशान्त एक पत्र में ममता को लिखता है कि "यहाँ की मिट्टी मे बिखरे, लाखों–लाख इन्सानों की जिन्दगी के सुनहरे सपनो को बटोर कर अधूरे अरमानों को बटोरकर यहाँ के पानी के जीवन–कोष में भर देने की कल्पना मैंने की थी। मैंने कल्पना की थी, हजारों स्वस्थ इन्सान हिमालय की कंदराओं में त्रिवेणी के संगम पर, अरुण तिमुर और सुणकोशी के संगम पर एक विशाल डैम बनाने के लिए पर्वत तोड़ परिश्रम कर रहे हैं। लाखों एकड़ बन्ध्या धरती, कोशी कवलित मरी हुई मिट्टी शस्य श्यामलताओं उठेगी। कफन जैसे सफेद बालू भरे मैदान में धानी रंग की जिंदगी के बेल लग जाएंगे।"[3] रेणु ने इस परियोजना के विशाल फलक पर सामाजिक–आर्थिक विकास का स्वप्न बुना जिसका नाम 'परती–परिकथा' नामक

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 145
2. वही, पृ. 180
3. वही, पृ. 181

उपन्यास रखा। सरकारी योजना का उत्साह देखकर रेणु के रूप पर कुछ लोग आक्षेप लगाते हैं कि उन्होंने सरकारी डाकुमेन्टरी लिखने लगे। शिवप्रसाद सिह लिखते हैं कि "अगर ग्राम जीवन के यथार्थ पक्ष को पकड़ की तुलना पर कसें तो 'परती–परिकथा' लोकगीतों से भरी हुई किसी सरकारी डाकुमेन्टरी सी मालूम होती है जिसमें दरारों भरी धरती एकाएक नहर या श्रमदान के बल पर बने नाले आदि के द्वारा पानी पाकर हरी–भरी हो जाती है और जिसमे एक–एक फुट की बालों वाले ज्वार–बाजरे लहराने लगते हैं। इस दुष्टि से इसे प्रसार गीतों के बल पर प्रसार उपन्यास कहा जा सकता है।"[1] इन बातों पर गौर किया जाए तो स्पष्ट होता है कि शिवप्रसादजी ने इसे प्रसार उपन्यास का खिताब तो दे दिया, लेकिन उन्होंने रेणु की सर्जक की स्वप्नदृष्टि को नजरअंदाज कर दिया जो उन्होंने परती–परिकथा में सृजित किया था। रेणु ने लिखा है कि "यदि हमारे राष्ट्र के लेखक को महान निर्माण कार्यों से प्रेरणा नहीं मिलती तो उसे राजकीय पैमाने पर प्रेरित न किया जाएं रचने दीजिए उन्हें देहवादी रचनाएं। नवनिर्माण की पहली शर्त है – राष्ट्र को नई प्रेरणा प्रदान करना और बावजूद सारी खामियों के दूसरे हमारे देश्या की जनता को प्रेरित करना शुरू किया है। आन्तरिकता शून्य उपदेशों का असर उल्टा होता है। जन जीवन के सुख–दुख से परे रहने वाले साहित्यकार की कटाई हुई रचनाओं का प्रयास जनजीवन पर नहीं पड़ सकता।"[2]

रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि राजनीतिक दल कांग्रेस पार्टी का स्थानीय नेता जनता को इस बात की झूठी अफवाह फैला देता है कि इससे आप लोगों का कोई हित होने वाली नहीं है परती तोड़ी जायेगी और आप लोगों का नुकसान होगा। इस योजना के बारे में सही जानकारी जनता को नहीं देता। जबकि इस योजना के सफल होने के बाद सम्भावना है कि "परानपुर की परती पर इसी साल जूट और धान की खेती ... इसमें जूट, धान, दलहन, तिलहन, मकई, ज्वार आदि की उपज होगी, जबकि दुलारीदाय में सिर्फ जूट और धान की खेती होती थी। ... दुलारीदाय में कुल उपजाऊ जमीन ढाई हजार एकड़ जबकि परती पर सात–आठ हजार एकड़ जमीन अगले वर्षों में तैयार हो जायेगी।"[3] इसी तरह की अनेक सम्भावनाओं की बात है कि इस परियोजना से लोगों को लाभ मिलेगा।

---

1. आधुनिक परिवेश और नवलेखन, शिवप्रसाद सिंह, पृ. 121
2. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 271
3. वही, भाग–2, पृ. 632

लेकिन आमजनता बहुत भोली है, इसका पूरा का पूरा फायदा राजनीतिक लंगीबाज लोग उठाते हैं। रेणु यहाँ सवाल खड़ा करते हैं कि अगर इस योजना की सारी जानकारी जनता तक ठीक तरह से दी गई होती तो इस परियोजना का जनता कभी भी विरोध नहीं करती। रेणु ने अपने लेख के माध्यम से जिस 'सूचना के अधिकार' की बात आज से 50 वर्ष पहले उठाई थी, आज हमारी संसद 2005 में उसे संवैधानिक अधिकार घोषित करती है। इस प्रकार रेणु भविष्य द्रष्टा के रूप में समाज को सही दिशा दिया। रेणु ने 'परती–परिकथा' में लिखा है कि "दोष हमारे विशेषज्ञों का नहीं। हमारी सरकार के कल–पुर्जे ही इसके लिए जिम्मेवार हैं। वरना जैसा कि मैंने बतलाया आप आज तोड़ने फोड़ने के बदले गढ़ने का सपना देखते। ... इतना बड़ा काम हो रहा है किन्तु आप इससे नावाकिफ हैं कि क्या हो रहा है, किसके लिए हो रहा है। मुझे ऐसा भी लगता है कि जानबूझकर ही आपको अन्धकार में रखा जाता है। क्योंकि आपकी दिलचस्पी में उन्हें खतरा है। ... इन कामों से आपका लगाव होते ही नौकरशाहों की मनमानी नहीं चलेगी।"[1] रेणु ने जनता की उदासीनता के कारणों पर भी अपनी दृष्टि डाली है। रेणु लिखते हैं कि "बेचारी जनता का क्या दोष ? ऊपर से थोपे हुए सुख को वह क्या समझे ? ... मन की परती ज्यों की त्यों पड़ी हुई है। वीरान होती जा रही है। लगता है मन को छूने वाला मन्त्र ही हम भूल गए हैं।"[2] रेणु लोगों के मन की परती तोड़ने का काम करते हैं। राजेन्द्र प्रसाद मिश्र ने इसका आशय स्पष्ट करते हुए लिखा है – "बाहर की परती के ही अनुरूप ग्राम जन की भीतरी कड़ी परती है। जब तक ये परतियाँ हैं, अंध परंपराएँ हैं, मूर्खताएँ और गतानुगतिक सड़ांध भरी नीतियाँ हैं गाँव कैसे ऊपर उठेगा, स्वतन्त्रता की आकांक्षाएँ कैसे पूर्ण होंगी ? कैसे कृषि क्रान्ति होगा।"[3] सरकार को शिक्षा तथा चेतना का प्रचार प्रसार करना चाहिए जिससे आम जनता में सरकार की नीतियों के बारे में एक समझ विकसित हो सके।

सरकार की असमान भूमि वितरण से अधिकांश जनता गरीब और भूमिहीन हैं सरकार द्वारा भूमिसुधार आन्दोलन से भी कोई सही हल नहीं निकला। रेणु ने लिखा है "जब परती आबाद हुई और लोग तीन–तीन फसलें लेने लगे तो जाहिर है कि पैदावार ज्यादा होनी चाहिए – लोगों को खुशहाल होना चाहिए। लेकिन नहीं, भूमिहीनों की संख्या बढ़ने

---

1. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 633
2. रेणु रचनावली, भाग–2, पृ. 627
3. आंचलिकता की कला और कथा साहित्य – राजेन्द्रप्रसाद मिश्र, पृ. 38

लगी।"[1] भूमि सुधार पर सरकार को सफलता क्यों नहीं मिली। इस योजना और आमजन के बीच की खाई को स्पष्ट करते हुए सुरेन्द्र चौधरी ने लिखा है कि "पर इस योजना का उपयोग कौन करेगा ? भारतीय अभागा किसान नहीं करेगा। पर नया भूस्वामी ? उसके पास साधन हे वह सपने भी देख सकता है और सपनों का पुल बनाकर उन पर चल भी सकता है। सपना भवेश का हो या जितेन्द्र नाथ का उसका स्वरूप एक ही है। बंजर परती में युगांतकारी परिवर्तन का, यह सपना किसान नहीं देख सकता, भू–स्वामी ही देख सकता है। हाइड्रोइलेक्ट्रिसिटी से चल रही मशीनों, ट्रैक्टरों से जुत रही भूमि का सपना बेचारा और अभागा किसान नहीं देख सकता।"[2] अतः जब तक ठीक से भूमि सुधार की योजना का सरकार द्वारा क्रियान्वयन नहीं होगा तब तक गरीब किसान भूमि का सपना भी नहीं देख सकता है।

रेणु ने सरकारी योजनाओ के प्रति अतिरिक्त उत्साह दिखाया था। उन्हें यह पता न था कि उसमें सरकार की बहुत सारी कमियाँ हैं, जिनके कारण योजनाओं का सही ढंग से क्रियान्वयन नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में रेणु की आशा निराशा में परिणत होती है। एक दो नदी घाटी परियोजना से आम लोगों के मन की परती नहीं तोड़ी जा सकती है। परती को तोड़ने के लिए सरकार को बहुत सारी योजनाओं को सही रूप से क्रियान्वयन करना पड़ेगा। ऐसी योजनाओं में प्रमुख हैं – शिक्षा का प्रसार, भूमि सुधार, समान विकास के उचित अवसर, नवीनता का प्रचार–प्रसार, चिकित्सा व्यवस्था, शुद्ध जल पीने के लिए उपलब्ध करना तथा पर्यावरण को सन्तुलित तथा व्यवस्थित रखना।

अन्त में हम कह सकते हैं कि रेणु के 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' मे राजनीतिक स्वरूप का जो चरित्र उभरकर आया है, उसमें उन्होंने मानववादी दृष्टि पर विशेष जोर दिया है। रेणु जान चुके थे कि जितने भी राजनीतिक दल हैं वे सभी अपनी विचारधारा और सिद्धान्त को त्याग कर स्वार्थ, अवसरवाद, भ्रष्टाचार और जातिवाद एवं क्षेत्रवाद का सहारा लेकर घटिया राजनीति करने में पीछे नहीं हैं। कोई भी ऐसा राजनीतिक दल नहीं है, जो समाज को सही दिशा प्रदान कर सके। रेणु ने इसीलिए एक ऐसे राजनीतिक दल की मांग की है जिसमें सिर्फ मानववादी हित निहित हो उसके अलावा उसमें कुछ ऐसा न

---

1. रेणु रचनावली, भाग–5, पृ. 248
2. फणीश्वरनाथ रेणु, सुरेन्द्र चौधरी, पृ0 90

हो जिससे मानव को खतरा पैदा हो। रेणु ने इस बात को बहुत बारीकी से देखा था कि राजनीतिक दल केवल कहने के लिए रह गये हैं, वास्तव में ये सभी दल पूँजीवादी और साम्राज्यवादी ताकतों के सामने कठपुतली बनकर रह गए हैं। इसलिए एक ऐसी पार्टी हो जिसमें सभी मनुष्य को समान अवसर मिले, रहने के लिए घर मिले, खाने के लिए खाना मिले तथा अपने पूरे अधिकारों का वह प्रयोग कर सके। रेणु ने एक ऐसे दल की तरफ ही संकेत किया है, भले ही उसका गठन अभी भविष्य में हो।

उपसंहार

उपसंहार

रेणु ने 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में राजनीति के बनते बिगड़ते स्वरूप पर प्रकाश डाला है। रेणु ने राजनीतिक दलों की अच्छाई और बुराई को बहुत अच्छी तरह से परखा था। पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर रेणु ने किसी दल के बारे में ऐसी कोई बात नहीं लिखी है जो उसके चरित्र के अनुरूप न रही हो। रेणु हर राजनीतिक दल के बारे में बहुत भली–भाँति परिचित थें रेणु ने बड़ी नजदीक से देखा था कि हर पार्टी में ईमानदार व्यक्ति को किस प्रकार अपमान और लांछन का सामना करना पड़ता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि भ्रष्ट व्यक्ति हर मानक अपने सुख और सुविधा के अनुसार तय करता है, लेकिन ईमानदार व्यक्ति कभी भी मानव के खिलाफ होने वाले बदलाव को बरदाश्त नहीं कर सकता। लेकिन विचारणीय बात यह है कि आज हर राजनीतिक दल की सत्ता भ्रष्ट वर्चस्ववादी लोगों के हाथ में है। इसलिए रेणु जैसे ईमानदार व्यक्ति को पार्टी और राजनीति दोनों से मोहभंग हो जाता है।

अपने व्यक्ति जीवन से लेकर साहित्यिक जीवन तक रेणु ने इस बात को देखा कि हर जगह वर्चस्वशील लोग किस प्रकार अपनी सत्ता जमा रहे हैं। इसके लिए वे तमाम प्रकार के अनर्गल वस्तुओं का सहारा लेकर ईमानदार व्यक्ति का हर जगह अपमान कर रहे हैं। रेणु ने राजनीतिक जीवन में देखा कि किस प्रकार पार्टियाँ झूठे प्रलोभन देकर लोगों को बरगलाने में सफल हो रही हैं। पार्टियाँ अपने मूल्यों से किस प्रकार मुकरती जा रही हैं और अपने स्वार्थ के लिए घटिया कुकर्म करने में भी पीछे नहीं हैं। आज किसी भी राजनीतिक दल में कोई ऐसा ईमानदार व्यक्ति नहीं रहा क्योंकि अब ऐसे लोगों की राजनीति में कोई जरूरत नहीं रह गई है। रेणु केवल अपने समय की ही वस्तु स्थिति पर ही नजर नहीं डालते, बल्कि वे भविष्य की ओर भी संकेत करते हैं आने वाले समय में किस प्रकार से राजनीतिक दलों के अन्दर अनेक प्रकार की बुराईयाँ भर जाएंगी इसका अंदाजा उन्हें पहले ही था। रेणु भविष्यद्रष्टा के रूप में राजनीतिक प्रश्नों से टकराते हैं और जनता के सामने सभी बातों को यथार्थ रूप में रखते हैं।

आजादी के बाद भारत में होने वाले राजनीतिक परिवर्तन को समझने के लिए 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' का महत्वपूर्ण स्थान है। रेणु ने इन दोनों उपन्यासों के माध्यम से यह दिखाया कि किस प्रकार राजनीति भारतीय जीवन को प्रभावित करती है।

आज के समय में राजनीति को वही स्थान प्राप्त हो गया है जो एक समय धर्म का था। धर्म का वर्चस्व होने से सारी बातों का निर्धारण धर्म से होता था, लेकिन जब से राजनीति ने अपना स्थान स्थापित किया तो सारी वस्तुओं के निर्धारण में राजनीति प्रमुख हो गयी है। धर्म और राजनीति में प्रमुख अन्तर यह रहा कि जहाँ धर्म समाज को पुरातनपंथी तथा धार्मिक मान्यताओं से परखता था, वहीं राजनीति ज्ञान–विज्ञान तथा चेतना के माध्यम से वस्तुओं को समझने की कोशिश करती है। रेणु ने अपने उपन्यास 'मैला आँचल' मे दिखाया है कि अन्ध विश्वास और धर्म सरकारी योजनाओं के विकास में किस प्रकार अवरोधक साबित होते हैं। 'परती–परिकथा' में रेणु ने दिखाया है कि किस प्रकार घटिया राजनीति सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में भी अवरोधक होती है। जनता को बहकावे में लाने के लिए सभी राजनीतिक दल और कांग्रेसी नेता लुत्तो तमाम अनर्गल बातों का सहारा लेता है। रेणु ने इन दोनों स्थितियों पर बहुत ही यथार्थपूर्ण दृष्टि से मूल्यांकन किया है।

रेणु ने 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि राजनीति में किस प्रकार 'जातिवाद' का जहर फैल रहा है। जहाँ 'मैला आँचल' में जातिवाद का जहर बड़े नेताओं तक सीमित था वहीं 'परती–परिकथा' में यह स्थानीय नेताओं तक फैल गया है। राजनीतिक दल के लोग जाति के सहारे पर राजनीति करके सत्ता में आने की भरपूर कोशिश करते हैं। इतना ही नहीं निम्न जाति और उच्च जाति में इस बात को लेकर विवाद शुरू हो रहा है कि वास्तव में किसकी संख्या अधिक है। अब तो धीरे–धीरे ऊँची जातियों का वर्चस्व टूट रहा है, वही निम्नजाति के लोग अपने से भी गिरे हुए व्यक्ति को ऊपर उठाने की कोशिश नहीं करते हैं बल्कि उसे और नीचे दबाने की फिराक में रहते हैं।

राजनीति में बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार और हर स्थान पर भ्रष्ट लोगों का वर्चस्व कायम होना अकारण नहीं है। रेणु ने देखा था कि हर दल में भ्रष्ट लोगों का बोलबाला होता जा रहा है। कोई ऐसा एक भी दल नहीं है जिसमें ईमानदार लोगों का स्थान हो। अब तो हर पार्टी में दुलारचन्द कापरा जैसे लोगों का ही वर्चस्व कायम होगा। इतना ही नहीं जब दुलार चन्द कापरा जैसे लोगों का वर्चस्व कायम होगा तो बावनदास जैसे ईमानदार लोगों की हत्या करा दी जायेगी। राजनीति का स्वरूप इतना विकृत होता जा रहा है कि इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। आज ऐसे लोग अपने को बड़े राजनीतिज्ञ कहने की कोशिश कर रहे हैं जिनको 'राजनीति' शब्द की व्याख्या तक नहीं करनी आती। जब ऐसे लोगों के

हाथ में देश और समाज की सत्ता जायेगी तो देश और समाज की क्या स्थिति होगी ? इन सारे पहलुओं से रेणु टकराये हैं।

अवसरवाद का बोलबाला किस प्रकार बढ़ता जा रहा है, इस बात को रेणु ने अपने दोनों उपन्यासों 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में दिखाया है। कल तक जो लोग कांग्रेस को गाली दे रहे थे, आज वही लोग अवसर देखकर कांग्रेस में शामिल हो रहे हैं। कांग्रेस की बात नहीं है बल्कि उस समय के हर राजनीतिक दल की यही स्थिति रही है। कम्युनिस्ट पार्टी के चरित्र पर प्रकाश डालते हुए 'परती–परिकथा' में रेणु ने दिखाया है कि इस दल का स्थानीय सचिव किस प्रकार अवसरवादी राजनीति करता है। इतना ही नहीं 'मैला आँचल' में तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद जैसे लोग अवसर देखकर कांग्रेस में शामिल होकर अपनी जमींन बचा लेते हैं। कहने का मतलब है कि अब लोगों की या पार्टी की विचारधारा का महत्वपूर्ण स्थान नहीं रहा बल्कि व्यक्तिगत हित का महत्व अधिक हो गया है। कांग्रेस पार्टी सत्ता में काबिज होने के बाद 'जमींदारी उन्मूलन' कानून पास करके भूमि सुधार आन्दोलन चलाती है तो उसके ही पार्टी के नेता विश्वनाथ प्रसाद जैसे लोग कानूनी दाँव पेंच से अपनी जमीन बचा लेते हैं। यहाँ लोगों के हित जुड़े हैं इसलिए अवसर पाकर राजनीतिक दलों की शरण ले रहे हैं न कि पार्टी और देश की भलाई के लिए।

राजनीति में धन का महत्व बढ़ता गया है। रेणु ने इस बात को बहुत यथार्थ रूप में देखा कि हर दल में किस प्रकार पूँजीपतियों का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है और कर्मठ तथा ईमानदान व्यक्तियों का कद छोटा होता जा रहा है। रेणु ने इस बात को 'मैला–आँचल' और 'परती–परिकथा' में बड़े बारीक ढंग से समझा था। रेणु इस बात की ओर इशारा करते हैं कि आजादी के बाद राजनीतिक पार्टियों में किस प्रकार पूँजीपतियों का महत्व बढ़ता जा रहा है। विश्वनाथ प्रसाद, चौधरी तथा दुलारचन्द कापरा जैसे लोग पैसे के दम पर कांग्रेस में अपना स्थान बनाते हैं। रेणु ने देखा कि 'परती–परिकथा' तक आते–आते स्थिति काफी बदल चुकी है। राजनीतिक दलों का ग्रामीण जीवन में प्रवेश होने के बाद स्थानीय नेता भी पैसा कमाने की भरपूर कोशिश करते हैं। वे लोग राजनीति के माध्यम से पैसा कमाने की कोशिश करते हैं। इसके लिए पार्टी का चन्दा और अनेक योजनाओं का पैसा खाने की कोशिश शुरू कर देते हैं। रेणु ने 'परती–परिकथा' में दिखाया है कि किस प्रकार सोशलिस्ट पार्टी के स्थानीय सचिव पार्टी का चन्दा खा जाते हैं। इतना ही नहीं सत्ता पार्टी अर्थात् कांग्रेस का स्थानीय नेता लुत्तो भी पार्टी के चन्दे के पैसे का हड़प कर जाता है। अगर इस

प्रकार के लोग किसी भी पार्टी में रहेंगे तो ऐसे लोग क्या देश, समाज और पार्टी की सेवा करेंगे, कभी नहीं। ऐसे सारे सवालों से रेणु जी 'मैला आँचल' और 'परती–परिकथा' में टकराते हैं।

रेणु इस बात का अनुभव कर रहे थे कि हर राजनीतिक दल के अन्दर बड़े नेताओं के सारे अवगुण धीरे–धीरे स्थानीय नेताओं तक पहुँच रहे हैं। रेणु ने 'मैला आँचल' में दिखाया कि लगभग हर राजनीतिक दल के बड़े नेता मंत्री बनकर सत्ता का उपयोग करे तथा व्यक्तिगत सुख सुविधाओं का आनन्द उठाए। लेकिन 'परती–परिकथा' तक आते–आते ये सारे अवगुण कर राजनीतिक दल के स्थानीय कार्यकर्त्ता के अन्दर फैल चुके हैं। इसलिए इनके लिए पार्टी, समाज और देश से कोई मतलब नहीं है, मतलब उनको सीधे अपने हित से रह गया है।

इस प्रकार रेणु देखते हैं कि ये सारे राजनीतिक दल समाज और देश के नेतृत्व करने में सक्षम नहीं हैं। इसलिए हर व्यक्ति को अपने अधिकार के लिए स्वयं लड़ना होगा और एक ऐसे समाज की निर्मिति करनी होगी जिसमें सभी व्यक्ति समान हों, कोई किसी से नीचा–बड़ा नहीं होगा, कोई शासित नहीं कोई शासक नहीं ऐसी जगह सिर्फ मानवीयता का महत्व होगा और किसी वस्तु का नहीं। रेणु एक ऐसे राजनीतिक दल बनाने का सपना समाज के सामने प्रस्तुत किया था। अगर आने वाले समय में इन सारे प्रश्नों पर विचार नहीं किया जाएगा तो सम्पूर्ण मानवीयता का विकास खतरे में पड़ जाएगा। इसका परिणाम बहुत भयंकर होगा। इसलिए ऐसे प्रश्नों से हमें टकराने की जरूरत है जो मानवीयता के खिलाफ हो, जिससे रेणु का सपना साकार होगा।

संदर्भ–ग्रन्थ–सूची

संदर्भ–ग्रन्थ–सूची

आधार–ग्रन्थ

1. 'मैला आँचल' : फणीश्वरनाथ रेणु
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995

2. 'परती परिकथा' : फणीश्वरनाथ रेणु
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995

सहायक रेणु साहित्य

1. रेणु रचनावली, भाग 1 से 5 पाँच तक : सं. भारत यायावर
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995

2. जुलूस : फणीश्वरनाथ रेणु
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998

3. रेणु रचनावली भाग–4 : ऋण जल धन जल (रिपोर्ताज), 1971 ई.
   नेपाली क्रांति कथा (रिपोर्ताज), 1977 ई.

4. मृदगिंए का मर्म : सं. भारत यायावर
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995

5. आत्म–परिचय : फणीश्वरनाथ रेणु
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988

6. अच्छे आदमी : फणीश्वरनाथ रेणु
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1986

7. दीर्घतपा : फणीश्वरनाथ रेणु
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1986

सहायक ग्रन्थ

1. इन्दुमति केलकर : राममनोहर लोहिया
   नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1996.

2. कृष्णलाल शर्मा : भारतीय समाज
   एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली, 1989

3. गोपाल राय : उपन्यासकार रेणु और मैला आँचल
   नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1952.

4. वही, : उपन्यास की पहचान मैला आँचल
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998,

5. डॉ. चन्द्रभानु सोनवणे : कथाकार फणीश्वरनाथ रेणु
   वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988.

6. देवेश ठाकुर : मैला आँचल की रचना प्रक्रिया
   वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1986.

7. नेमिचन्द्र जैन : अधूरे साक्षात्कार
   राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972.

8. नामवर सिंह : कहानी : नयी कहानी
   लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1993

9. पुष्पा जतकर : रचनाकार रेणु
   वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992.

10. पूर्ण देव : रेणु का आंचलिक कथा साहित्य
    आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, 1975

11. डॉ. भीमराव अम्बेडकर : हिन्दू धर्म की रिडल : ब्राह्मणशाही की ऊहापोह
    रिडल्स प्रकाशन, नागपुर, 1988.

12. एम.एन. श्रीनिवास : आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन
    राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1967.

13. डॉ. मैनेजर पाण्डेय : साहित्य का समाजशास्त्र की भूमिका
हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, 1989.

14. मन्मथनाथ गुप्त : कांग्रेस के सो वर्ष
राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, 1990.

15. मधुरेश : सं. मैला आँचल का महत्व
सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, 1999.

16. भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मा.ले.) : बिहार के धधकते खेत–खलिहानों की दास्तान
राजबली पाण्डेय, गोरखपुर, अगस्त, 1986.

17. भारत की कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी लेनिनवादी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा प्रकाशित : कृषि कार्यक्रम
लिबरेशन प्रकाशन
जनवरी–1983.

18. रामविलास शर्मा : भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1982.

19. वही, : मानव सभ्यता का विकास
वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1983.

20. रामशरण शर्मा : शूद्रों का प्राचीन इतिहास
दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इण्डिया लि.
नई दिल्ली 1979.

21. रजनी पाम दत्त : आज का भारत
पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1976.

22. रामदरर्श मिश्र : हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988,

23. विपिन चन्द्रा : आधुनिक भारत
एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली, 1992.

24. विवेकी राय : स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्रामीण जीवन
लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 1974

25. सत्याराय : सं. भारत में राष्ट्रवाद
हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1987.

26. सियाराम तिवारी : रेणु : कृतित्व और कृतियाँ
नवनीता प्रकाशन, पटना, 1983.

27. सुरेन्द्र चौधरी : फणीश्वरनाथ रेणु
साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 1992.

28. डॉ. शिवचन्द प्रसाद : फणीश्वरनाथ रेणु की राजनीतिक चेतना
अनंग प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001.

29. शेफालिका : रेणु का कथा संसार
राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996.

30. डॉ. हरिशंकर दुबे : फणीश्वरनाथ रेणु : व्यक्तित्व एवं कृतित्व
विकास प्रकाशन, कानपुर, 1992.

पत्रिकाएं

1. आलोचना : जनवरी 1955, वर्ष–4, अंक–3
अक्टूबर 1959, वर्ष–5, अंक–4
2. धर्मयुग : 14 जनवरी, 1962
1 मई, 1971.
3. विशाल भारत : अप्रैल 1962, अंक–4
4. रविवार : 28 अगस्त, 1977.
5. नया प्रतीक : मार्च 1978.
6. सारिका रेणु विशेषांक मूल्यांकन (कहानीकार मूल्यांकन विशेषांक) : अप्रैल 1979.
7. आजकल : अक्टूबर 1980.
8. दिनमान (रेणु स्मृति अंक) : अक्टूबर 1982.